हिन्दुस्तानी ज़बान

वर्ष 48 अंक 2 मुंबई अप्रैल-जून 2016 पृष्ठ 80 क़ीमत 20/-

ISSN 0378-3928
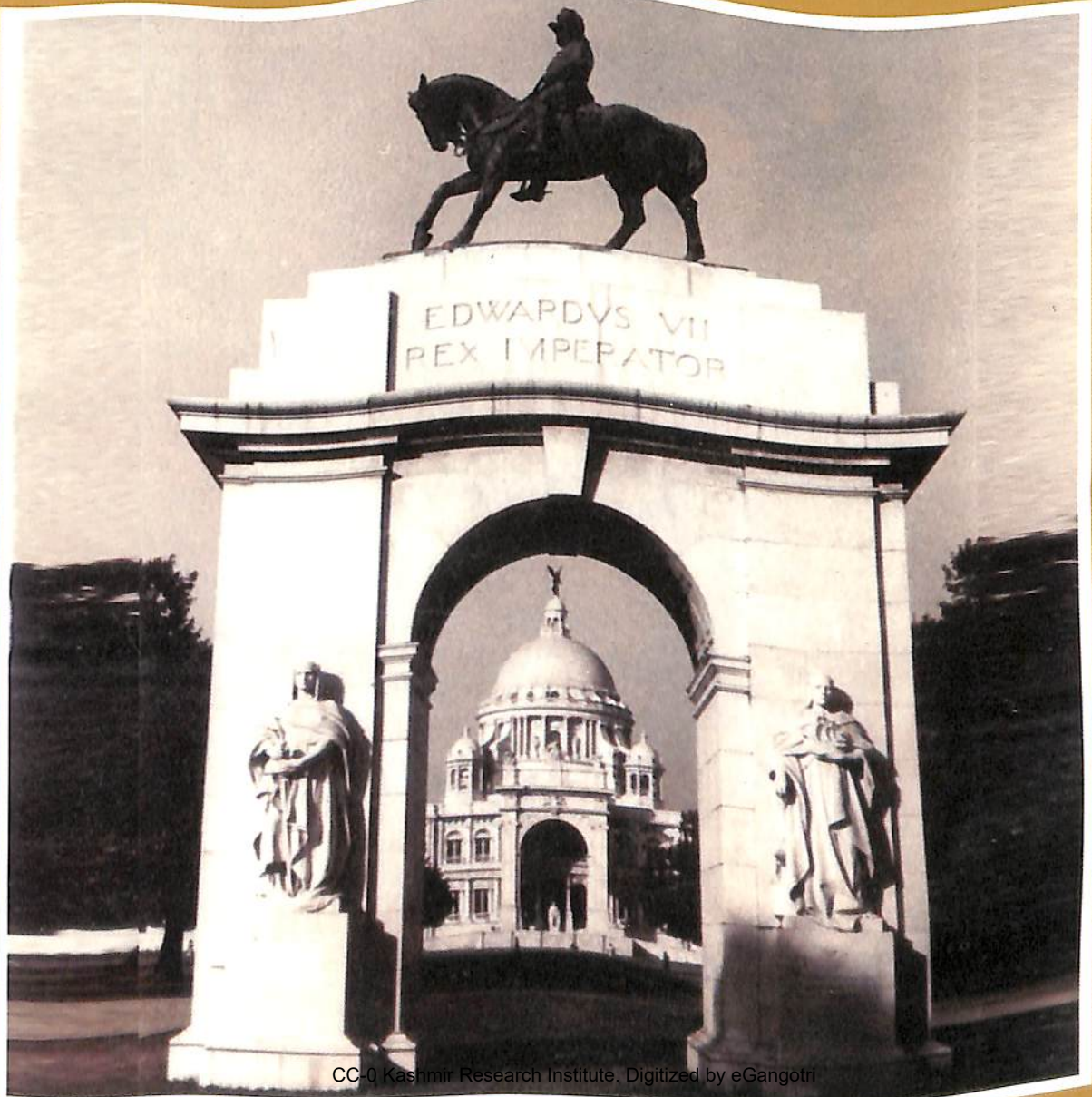
हिन्दी की गूँज हर क्षेत्र में.....

'विश्व हिन्दी दिवस' संगोष्ठी को संबोधित करते हुए सभा के ट्रस्टी व अध्यक्ष सतीश शाह। मंच पर (बाएँ से) संजीव निगम, फ़िरोज़ पैच, डॉ॰ गोपाल कृष्णा और डॉ॰ सुशीला गुप्ता

'विश्व हिन्दी दिवस' समारोह के प्रथम सत्र को संबोधित करते हुए चंद्रपाल सिंह। मंच पर (बाएँ से) संजीव निगम, लक्ष्मण सिंह, विजय सिंह, प्रवीण जैन और संजय वर्मा

हम होंगे कामयाब

अन्तरमहाविद्यालयीन वाक्-स्पर्धा में पुरस्कृत विद्यार्थी और सभा के पदाधिकारी तथा निर्णायकगण

आशुभाषण प्रतियोगिता में पुरस्कृत विद्यार्थी, सभा के पदाधिकारी और साथ में निर्णायकगण

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा पुस्तकालयों के प्रकाश-गृह खोलने का अभिनव प्रयास

'सोनुभाऊ बसवंत महाविद्यालय,शहापुर और हिन्दुस्तानी प्रचार सभा पुस्तकालय' का उद्घाटन

'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा और केरल हिन्दी प्रचार सभा पुस्तकालय' का उद्घाटन

शिक्षा और कला का संगीतमय मिलन

सनद व पुरस्कार वितरण समारोह में 'कव्वाली' प्रस्तुत करके वाह-वाही लूटने वाले कुरेशी नगर मनपा स्कूल, कुर्ला के विद्यार्थी

हम साथ-साथ हैं

'सभा' के पदाधिकारी, विद्यार्थी, शिक्षक व प्रचारक एक मंच पर सनद और पुरस्कार वितरण समारोह के अवसर पर

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

هندستانی پرچار سبها
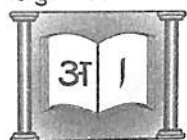
हिन्दुस्तानी ज़बान

(त्रैमासिक पत्रिका)

स्थापना : अक्तूबर 1969

पंजीयन संख्या 18818/1969 के अंतर्गत भारत के समाचारपत्र रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत।

वर्ष 48 | अप्रैल - जून 2016 | अंक : 02

इस अंक में....

संपादक
डॉ॰ सुशीला गुप्ता

उप संपादक
डॉ॰ रीता कुमार

प्रकाशक
फ़िरोज़ पैच
(ट्रस्टी व मानद सचिव)
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

सहयोगी
राकेश कुमार त्रिपाठी, प्रज्ञा गान्ला

छायाचित्र
श्री फ़िरोज़ पैच
विक्टोरिया मेमोरियल कलकत्ता (कोलकाता)
अक्तूबर 1969 में लिया गया चित्र

संपादकीय पता
महात्मा गाँधी मेमोरियल रिसर्च सेण्टर
महात्मा गाँधी मेमोरियल बिल्डिंग
7 नेताजी सुभाष रोड, मुंबई– 400 002

फ़ोन : 22812871
टेलीफ़ैक्स : 22810126

क़ीमत (एक प्रति) : ₹ 20
विदेशों के लिए : ₹ 200

ई-मेल :
hp.sabha@gmail.com
hp.sabha@hotmail.com

वेबसाईट
hindustanipracharsabha.org

प्रकाशक एवं मुद्रक : श्री फ़िरोज़ पैच ने 'हिन्दुस्तानी ज़बान' पत्रिका डॉ॰ सुशीला गुप्ता के संपादन में मौज प्रिंटिंग ब्यूरो, गोरेगाँवकर लेन, खटाववाड़ी, गिरगाँव, मुंबई 400 004 से छपवाकर महात्मा गाँधी मेमोरियल रिसर्च सेण्टर, महात्मा गाँधी मेमोरियल बिल्डिंग, 7 नेताजी सुभाष रोड, मुंबई 400 002 से प्रकाशित किया। **स्वामित्व** : हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, महात्मा गाँधी मेमोरियल बिल्डिंग, 7 नेताजी सुभाष रोड, मुंबई 400 002 केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित।

आलेख

व्यंग्य-लेख

कविता

अनूदित कविता

ग़ज़ल

कहानी

अनूदित कहानी

साक्षात्कार

प्रयास

पुस्तक-समीक्षा

आपकी बात

विद्यार्थियों का पन्ना / 80

संपादकीय

हमारी बात

'रामचरित मानस' में वर्णित एक प्रसंग है - जब भरत को ननिहाल से लौटने पर पता चलता है कि उनकी माता कैकेयी ने राम को चौदह वर्ष का वनवास दिया है, जिसके ग़म में उनके पिता दशरथ ने प्राण त्याग दिये हैं तो अत्यंत क्षोभ, लज्जा और पश्चाताप की आग में जलते हुए वे (परिवार और अयोध्या की प्रजा-समेत) चित्रकूट में भाई राम से मिलने गये। लक्ष्मण को उनके आगमन की सूचना मिली तो उन्हें भरत की नीयत पर शंका हुई, परन्तु राम को अपने अनुज पर अडिग विश्वास था -

''भरतहि होइ न राजमदु बिधि हरि हर पद पाइ।''

मिलन के अवसर पर शिकवे-शिकायत की बातें नहीं होतीं। बस भाई को देखते ही भरत 'भूतल परे लकुट की नाईं।' (लकड़ी की तरह पृथ्वी पर गिरे।) लकड़ी की तरह गिरने की कल्पना करें। वही ऐसा कर सकता है, जो स्वयं को सँभाल न पाये, जो अपनी सुध-बुध भूल जाये और मिलन की उत्कंठा में गिरने पर चोटिल होने की भी परवाह न करे।

यहाँ पर भरत ने भाई से मिलते वक़्त कुछ भी नहीं कहा? क्या सचमुच कुछ नहीं कहा? क्या ऐसा नहीं है कि कुछ न कहते हुए भी उन्होंने बहुत-कुछ कह डाला? बहुत कुछ। और जिनके क़दमों पर भरत गिरे, उन्होंने क्या समझा! उनके मन में भाई के प्रति जो अडिग धारणा थी, उसी की तो पुष्टि हुई। भाई ने भाई को सीने से लगा लिया। दोनों की छाती जुड़ा गयी।

तो क्या वाणी की शक्ति अबोले भी प्रगट की जा सकती है? निश्चित रूप से इसका उत्तर सकारात्मक ही होगा। अबोला रहने का एक सबब यह भी हो सकता है कि 'मुझे क्या!' (कोउ नृप होउ हमहि का हानी।) लेकिन ऐसे लोगों के लिए इतिहास की ओर से प्रश्न उठता है कि क्या वे क्षमा-योग्य हैं? आवश्यकता पड़े तो बोलना ही पड़ता है और बोलना चाहिए।

वाणी हमारी ज़िन्दगी की सबसे बड़ी नियामत है। प्रश्न उठता है कि बोलते समय क्या बोला जाये और कैसे बोला जाये। इसके लिए प्रसंगानुसार ही माप-दण्ड हो सकता है। सदैव वाणी की कटुता काम नहीं आती। सदैव वाणी की मिठास का असर नहीं होगा। बोलते समय 'साम, दाम, दण्ड, भेद' की दरकार होती है।

जयपुर नरेश जयसिंह अपनी नवपरिणीता यौवना पर आसक्त हो राज-काज से विरक्त हो चले थे। रीतिकालीन कवि बिहारी ने उनके पास यह दोहा भेजा -

''नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहिकाल।

अली कली ही सों बँध्यो आगे कौन हवाल।।''

कहते हैं, जयसिंह पर इसका ऐसा असर हुआ कि उनकी जीवन-शैली बदल गयी।

मलिक मुहम्मद जायसी शक्ल-सूरत के अच्छे नहीं थे। सात वर्ष की अवस्था में उन्हें चेचक हो गया था, जिसके कारण उनके बायें कान की श्रवण-शक्ति नष्ट हो गयी थी और बायीं आँख बेकार हो गयी थी। एक बार शेरशाह उन्हें देखकर हँस पड़े। जायसी चुप न रहे। उन्होंने तुरन्त प्रतिक्रिया व्यक्त की, "मोहि का हँसेहि कि कोहरहिं?" (तू मुझ पर हँस रहा है या उस कुम्हार पर अर्थात् उस बनाने वाले पर?) बादशाह को शर्मिन्दा होना पड़ा।

वाणी की शक्ति असीम है। कहते हैं, उसी ज़बान से पान खाया जाता है और उसी ज़बान के कारण जूते खाने पड़ते हैं। अत: केवल बोलने के लिए नहीं बोलना चाहिए। हाँ, आवश्यकता पड़ने पर अवश्य बोलना चाहिए। और बोलते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि बोलें तो आवश्यकतानुसार और प्रसंगानुसार ही बोलें।

कभी-कभी वाणी की कटुता का वह असर नहीं होता, जो उसकी मिठास में होता है। एक बार बस में एक भोली-भाली लड़की सफ़र कर रही थी। उसके साथ सीट पर बैठा युवक लगातार सिगरेट पीकर धुआँ उड़ाये जा रहा था। अन्य यात्रियों ने उसका विरोध किया। कुछेक ने तो गाली तक दे डाली। उस भोली-भाली लड़की ने धीरे से कहा, "इस धुएँ से मुझे तकलीफ़ हो रही है न?" जादू का-सा असर देखने को मिला। उस युवक ने सिगरेट बुझा दी।

हमें अपनी बात को सुनने वाले के दिल तक पहुँचाने का प्रयत्न करना चाहिए। बोलने वाले की भाषा का जादू, कहने का अन्दाज़ तभी सार्थक और अर्थपूर्ण हो सकता है, जब बोलने वाले का व्यक्तित्व और उसकी सच्चाई उसमें झलके। कई बार बहुत लच्छेदार बातों का हमारे ऊपर कोई असर नहीं होता और टूटी-फूटी वाणी का गहरा असर देखा जाता है। इसलिए बोलने वाले की बात का वज़न तभी होगा, जबकि उसका बोलना किसी सरोकार के साथ हो, किसी के भले के लिए हो, नि:स्वार्थ हो और साथ ही निर्भीक हो। ...सुनने वालों पर उसका सीधे असर होना चाहिए।

महात्मा गाँधी ने जमनालाल बजाज से कहा था, "टीम-टाम की यह ज़िन्दगी छोड़ अपने ऊपर केवल 500 रुपये प्रति माह ख़र्च करो।" बजाज ने इस पर अमल किया और उन्होंने अपनी ज़िन्दगी का ढाँचा ही बदल डाला। लंदन में एक समारोह में पेरीन बहन कैप्टन और गोशी बहन कैप्टन (हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की संस्थापकों में गिनी जाने वाली महत्त्वपूर्ण हस्तियाँ) ने महात्मा गाँधी की वेश-भूषा को देख हँसी उड़ायी थी, लेकिन भारत लौटने पर जब वे उनसे मिलीं तो उन्होंने कहा था, "अपनी फ़ैशनपरस्ती छोड़ खादी पहनना शुरु करो।" दोनों बहनों ने न केवल खादी अपनायी, वरन् अपना रहन-सहन तक बदल डाला।

आज ज़रूरत है पारदर्शी और नि:स्वार्थ वाणी के धनी लोगों की। ऐसे लोग हैं हमारे आस-पास ही। हम उन्हें पहचानें और उनकी क़द्र करें। समाज में आन्तरिक स्वच्छता लाने के लिए यह निहायत ज़रूरी है। अच्छी वाणी अगर बचायी जा सकी तो इस धरती की इनसानियत को बचाये रखना आसान होगा।

(सुशीला गुप्ता)

अपूरणीय क्षति

रवीन्द्र कालिया

हिन्दी साहित्य में उपन्यास, कहानी, व्यंग्य और संस्मरण रचना में अप्रतिम छाप छोड़ने वाले रवीन्द्र कालिया का 10 जनवरी 2016 को स्वर्गवास हो गया। भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक-पद को सुशोभित कर चुके श्री रवीन्द्र कालिया का हस्तक्षेप साहित्य की कई विधाओं में रहा। 'नौ साल छोटी पत्नी', 'काला रजिस्टर', 'ज़रा सी रोशनी उमर तक' कहानी-संग्रह, '17 रानाडे रोड', 'और खुदा सही सलामत' जैसे उपन्यासों के साथ 'गालिब छुटी शराब', 'कामरेड मोनालिसा' और 'स्मृतियों में जन्मपत्री' जैसे संस्मरणों की बेमिसाल रचनाएँ हिन्दी साहित्य को उन्होंने प्रदान की। उनका निधन हिन्दी साहित्य की अपूरणीय क्षति है।

निदा फ़ाज़ली

हिन्दी व उर्दू के प्रसिद्ध शायर निदा फ़ाज़ली का देहान्त 8 फ़रवरी 2016 को हो गया। 'धर्मयुग' और 'ब्लिट्ज़' में स्तंभ-लेखन में अपनी अलग पहचान छोड़ने के साथ-साथ निदा फ़ाज़ली ने फ़िल्मों में भी कई लोकप्रिय गीत दिए। उनकी शायरी और उनके फ़िल्मी गीतों दोनों में दार्शनिकता और मानवीय सरोकार की अंतर्वस्तु मिलती है। उनका निधन साहित्य जगत में अपूरणीय क्षति है।

'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' एवं 'हिन्दुस्तानी ज़बान' परिवार की ओर से दिवंगत आत्माओं के प्रति विनम्र श्रद्धांजलि।

सभा की गतिविधियाँ

* दिनांक 15-9-15 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा 'हिन्दी मेला' का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की 'तीसरी' परीक्षा (एस.एस.सी. हिन्दी के समकक्ष) के छात्र/छात्राओं के मार्गदर्शन-हेतु था। अनुभवी शिक्षकों ने छात्र/छात्राओं का मार्गदर्शन किया। आरंभ में श्री अब्बास रिज़्वी द्वारा प्रस्तावना दी गयी। इसके बाद हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के कार्यक्रम संयोजक श्री संजीव निगम ने शिक्षा के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए छात्रों और छात्राओं का मनोबल बढ़ाया। मार्गदर्शन का आरंभ हिन्दी व्याकरण तथा रचना के वक़्तव्य से हुआ। डॉ. सुनीता क्षीरसागर ने उदाहरणों द्वारा बड़ी सुगमता से छात्रों को व्याकरण समझाया। श्रीमती सलीमा बागबान ने कविता के पाठों को सरल करके प्रस्तुत किया। इसके बाद श्रीमती सुचिता पाटिल ने मराठी की पढ़ाई में आने वाली अड़चनों को दूर किया।

हिन्दी-गद्य का मार्गदर्शन श्रीमती रज़िया पटेल ने तथा उर्दू विषय का मार्गदर्शन डॉ. फ़ारुक़ रहमान ने किया।

* दिनांक 18/12/2015 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के सभागार में रॉयल कॉलेज, मीरा रोड के विद्यार्थियों के एक समूह का आगमन कॉलेज की शिक्षिका सुश्री तबस्सुम के नेतृत्व में हुआ। कॉलेज द्वारा प्रकल्प के रूप में विद्यार्थियों को दिए गए कार्य के रूप में विद्यार्थियों ने 'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' द्वारा लाइब्रेरी में किए जा रहे कार्य का विधिवत आकलन किया व सभा में हो रहे कार्यक्रम के बारे में विधिवत जानकारी प्राप्त की। 'सभा' के ट्रस्टी व मानद सचिव श्री फ़िरोज़ पैच, विशेष कार्य अधिकारी डॉ० सुशीला गुप्ता व अन्य अधिकारियों ने विद्यार्थियों से मुलाक़ात की। अपने वक़्तव्य में श्री फ़िरोज़ पैच ने विद्यार्थियों को प्रबंधन, शासन व नेतृत्व के अलग-अलग तरह के गुणों के बारे में बताया। उन्होंने कहा– ''प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में इन सभी चीज़ों का उतना ही महत्त्व है, जितना उसके दैनिक जीवन के कार्यकलापों का।'' डॉ० सुशीला गुप्ता ने विद्यार्थियों में नवसंचेतना भर उन्हें लगातार बिना किसी रुकावट के विषयवस्तु को जानने, समझने और जब तक विजय न मिल जाए, सतत प्रयास में लगे रहने की प्रेरणा दी। विद्यार्थियों द्वारा पूछे गये प्रश्नों का श्री पैच ने बड़े ही रोचक ढंग से उत्तर देते हुए उनका मनोबल बढ़ाया। कार्यक्रम में संजय मांजरेकर, रमेश राजहंस व प्रज्ञा गान्ला भी उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन श्री राकेश कुमार त्रिपाठी ने किया व आभार कॉलेज की छात्रा अज़रा चौधरी ने दिया।

* दिनांक 19 दिसम्बर, 2015 हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा आयोजित 'काव्य गोष्ठी' में हिन्दी तथा उर्दू भाषाओं की 7 बोलियों की कविताएँ सुनना वहाँ उपस्थित श्रोताओं के लिए एक नया अनुभव रहा। संजीव निगम द्वारा परिकल्पित व संयोजित इस गोष्ठी में अवधी, ब्रज, भोजपुरी, हिन्दी, उत्तराखण्डी, भोजपुरी उर्दू, मुम्बईया उर्दू तथा मैथिली के कवियों-शायरों ने अपनी-अपनी रचनाओं का पाठ किया। पंडित किरण मिश्र, हलचल आज़मी, डॉ० शऊर आज़मी, डॉ० राजेश्वर उनियाल, क्षिप्रा वर्मा, रासबिहारी पाण्डेय तथा नवीन चंद्र चतुर्वेदी ने अपनी कविताएँ सुनायीं।

* दिनांक 10 जनवरी 2016 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने विश्व हिन्दी दिवस के अवसर पर एक ऐसी अनूठी गोष्ठी का आयोजन किया, जिसमें कारोबारी तथा पेशेवर क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग के सम्बन्ध में उन्हीं विषयों के विशेषज्ञों ने विचार-विमर्श किया। इस संगोष्ठी के स्वरूप को ध्यान में रखते हुए इसके उद्घाटन के लिए केंद्रीय मत्स्यिकी शिक्षा संस्थान के कुलपति डॉ० गोपाल कृष्णा को आमंत्रित किया गया था। अपने उद्घाटन भाषण में डॉ० गोपाल कृष्णा ने इस बात पर बल देते हुए कहा कि अगर ''हिन्दी को उसका उचित स्थान दिलाना है तो हिन्दी के अध्यापन के स्तर को ऊँचा करना होगा तथा उच्च शिक्षा के माध्यम से हिन्दी को लाना होगा।'' संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए

'सभा' के अध्यक्ष सतीश शाह ने उल्लेख किया कि "गाँधीजी ने 1917 में ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद दे दिया था।" अपने स्वागत भाषण में 'सभा' के ट्रस्टी व मानद सचिव फ़िरोज़ पैच ने इस प्रकार की संगोष्ठी के आयोजन को एक बड़ा क़दम बताया। संगोष्ठी के परिकल्पक और संयोजनकर्ता संजीव निगम ने कहा कि "इस संगोष्ठी के आयोजन का उद्देश्य है कामकाजी क्षेत्रों में हिन्दी की स्थिति पर विचार करना।"

संगोष्ठी के प्रथम सत्र में 'कारोबारी क्षेत्र में हिन्दी' के विषय में सुप्रसिद्ध व्यवसायी रानी पोद्दार ने कामकाज की भाषा से कामकाज की संस्कृति के गहरे जुड़ाव को रेखांकित किया। सेन्ट्रल बैंक के उप महाप्रबंधक डॉ० विचित्र नारायण पाठक तथा बैंक ऑफ़ बड़ौदा के सहायक महाप्रबंधक डॉ० जवाहर कर्णावट ने बैंकों तथा वित्तीय क्षेत्र में हिन्दी के इस्तेमाल पर प्रकाश डाला। रेलवे के ऋषिकुमार मिश्र ने हिन्दी के प्रसार में रेलवे की भूमिका का उल्लेख किया। इस स्तर में तीन अन्य प्रमुख व्यवसायियों टी० मनवानी आनंद, डॉ० वी० के० भल्ला तथा अरविन्द शर्मा राही ने भी अपने विचार व्यक्त किए। सत्र का संचालन डॉ० सुशीला गुप्ता ने किया। डॉ० रीता कुमार ने धन्यवाद-ज्ञापन किया।

दूसरा सत्र 'पेशेवर सेवाओं में हिन्दी का प्रयोग' निजी क्षेत्र से सम्बंधित था। इसमें कंपनी सचिव तथा हिन्दी सेवी प्रवीण जैन ने हिन्दी की माँग पैदा करने का अनुरोध किया। उनका कहना था कि 'अगर माँग होगी तो आपूर्ति अपने आप होगी।' वकील विजय सिंह ने कहा– "न्याय-प्रक्रिया में हमारी भाषाओं का प्रयोग न होने से लोगों को निर्णय मिल रहा है, न्याय नहीं।" 'संदेश' समाचार पत्र के मार्केटिंग विशेषज्ञ संजय वर्मा तथा आर०के० स्वामी विज्ञापन कंपनी के लक्ष्मण सिंह ने अपने-अपने क्षेत्रों में हिन्दी पर अपने विचार व्यक्त किये। इस सत्र में जनसम्पर्क विशेषज्ञ डॉ० वरुण सुथरा, चार्टर्ड लेखाकार गोपीकृष्ण बुबना तथा मीडिया कंपनी के चंद्रपाल सिंह ने भी अपनी बातें रखीं। इस सत्र का संचालन मार्केटिंग एवं जनसम्पर्क विशेषज्ञ संजीव निगम ने किया तथा सभा के कार्यक्रम समन्वयक राकेश कुमार त्रिपाठी ने धन्यवाद-ज्ञापन किया।

* दिनांक 21/01/2016 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा सभागृह में अन्तरमहाविद्यालयीन आशुभाषण प्रतियोगिता आयोजित की गयी, जिसमें 'सभा' द्वारा विभिन्न महाविद्यालयों में तथा सभा-कार्यालय में आयोजित की जा रही 'सरल हिन्दी कक्षा' के विद्यार्थियों ने बड़ी संख्या में सोत्साह भाग लिया, इनमें 'महाराष्ट्र हिन्दी प्रचार सभा', औरंगाबाद और 'केन्द्रीय विद्यापीठ', गुजरात के विद्यार्थी भी सम्मिलित हुए। इस प्रतियोगिता में निर्णायक के रूप में डॉ० मंजुला देसाई, श्री नरेश कुमार और कलीमउल्लाह ख़ान आमंत्रित थे।

इस अवसर पर विशेष कार्याधिकारी डॉ० सुशीला गुप्ता ने कहा कि 'सभा' द्वारा प्रतिवर्ष किए जा रहे इस कार्यक्रम में, इस बार छात्रों का बड़ी संख्या में शामिल होना 'सभा' के हिन्दुस्तानी प्रचार-प्रसार के प्रयत्नों की सार्थकता और लोकप्रियता को दर्शाता है। डॉ० मंजुला देसाई, श्री नरेशकुमार, श्री करीमउल्लाह ख़ान ने निर्णायक की भूमिका निभायी। 'सभा' द्वारा अंसारी हुस्नआरा, शेख आफ़रीन बानो, मयूरी प्रकाश, शुभायन भट्टाचार्य और ऋषभ तिवारी को क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कारों के अलावा प्रोत्साहन के दो पुरस्कार भी प्रदान किए गए। इस कार्यक्रम में डॉ० पिल्लई ग्लोबल एकेडेमी' बोरीवली की 'सरल हिन्दी कक्षा' के सभी विद्यार्थी उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन डॉ० रीताकुमार तथा आभार-प्रदर्शन श्री राकेश त्रिपाठी ने किया।

* दिनांक 06/02/2016 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की ओर से (मानव-संसाधन-विकास-मंत्रालय, भारत-सरकार के सहयोग से) निबंध-प्रतियोगिता व वाक-स्पर्धा आयोजित की गयी, जिसमें मुंबई व भिवंडी के छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। निर्णायक थे - श्री अब्बास मुजतहिद, श्री नरेश शर्मा तथा श्रीमती विद्या गायकवाड़। वाक-स्पर्धा के निर्णायक थे, डॉ० राजम नटराजन,

डॉ.सत्यवती चौबे तथा श्रीमती शमीम मुख़्तार। कार्यक्रम की अध्यक्षता 'सभा' के ट्रस्टी तथा मानद सचिव श्री फ़िरोज़ पैच ने की। उन्होंने व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने के लिए कुछ उपयोगी सूत्र बताये, जिसका सभी ने स्वागत किया। विशेष कार्य अध्यक्ष डॉ. सुशीला गुप्ता ने वाणी की क्षमता के महत्त्व को उजागर करते हुए छात्रों का हौसला बढ़ाया। इससे पूर्व परीक्षा-अधीक्षक सुश्री रतन आहूजा ने प्रस्तावना प्रस्तुत करते हुए उपस्थित जनों तथा छात्रों का स्वागत किया।

निबंध-प्रतियोगिता में पहला पुरस्कार अन्सारी बुशरा मु.हाशिम को, दूसरा पुरस्कार शेख़ सनअत मु.सादिक़ को, तीसरा पुरस्कार अंसारी नाज़िमा जमालुद्दीन को तथा सांत्वना पुरस्कार अफ़ीफ़ा फ़िरोज़ को दिया गया। वाक्-स्पर्धा में प्रथम पुरस्कार के भागी इक़रार इमतियाज़ अहमद, दूसरे पुरस्कार की शेख़ नसीमा अली असग़र, तीसरा पुरस्कार समरीन शफ़ीक़ अहमद तथा सांत्वना पुरस्कार ख़ान नूर अफ़शाँ इफ़्तेख़ार को दिया गया। श्री अली अब्बास रिज़्वी ने कविता के रूप में धन्यवाद ज्ञापित किया। कार्यक्रम का सफल संचालन अन्सारी मु.रईस ने किया।

* दिनांक 10 फ़रवरी 2016 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा 'नेतृत्व-क्षमता को विकसित कैसे करें?' विषय पर अन्तरमहाविद्यालयीन वाक्स्पर्धा का आयोजन किया गया। प्रतिभागियों ने अपने जोशीले और अर्थपूर्ण वक़्तव्यों से कार्यक्रम को सफल बनाया। श्री फ़िरोज़ पैच ने कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए कहा कि "नेतृत्व के लिए टीम-भावना होना बहुत ज़रूरी है। इसके साथ ही भावी योजना का स्पष्ट होना भी सफलता के लिए अनिवार्य है।" डॉ० सुशीला गुप्ता ने प्रतिभागी विद्यार्थियों के उत्साह की प्रशंसा करते हुए कहा कि *'दिल की आवाज़ सुनेंगे तो सफलतापूर्वक नेतृत्व कर सकेंगे।'* श्री द्विजेंद्र तिवारी, वागीश सारस्वत और सुश्री नेहा शरद ने सभी प्रतिभागियों की प्रशंसा की। वाक्स्पर्धा में अलीना भोजानी, शुभम डुंबरे, संकल्प अकिल्ला और सैय्यद ख़लील अहमद को क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय और प्रोत्साहन पुरस्कार से पुरस्कृत भी किया गया। प्रज्ञा गान्ला ने आभार व्यक्त किया। सभा की ओर से संजीव निगम, राकेश त्रिपाठी, रतन आहूजा, ताहिरा तथा अन्य सहकर्मियों का योगदान रहा। कार्यक्रम का संचालन शोध अधिकारी डॉ० रीता कुमार ने किया।

* दिनांक 12 फ़रवरी 2016 को अवितोको थियेटर समूह द्वारा नाटक 'आओ तनिक प्यार करें' का मंचन किया गया। इस नाटक को राज्य-स्तर पर सर्वोत्कृष्ट नाटक का पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। नाटक एक दम्पत्ति के रोज़मर्रा के जीवन के उतार-चढ़ाव पर आधारित है। नाटक की कथावस्तु और प्रस्तुतीकरण दोनों बहुत शानदार थे। मुख्य भूमिका में सुश्री विभारानी और श्री राजेन्द्र जोशी का अभिनय सराहनीय रहा।

* दिनांक 20 फ़रवरी 2016 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा साहित्य का पठन-पाठन विषय पर एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी में डॉ० सादिका नवाब 'सहर', डॉ० अनिल प्रभा कुमार, डॉ० सत्यदेव त्रिपाठी, सुश्री सुधा अरोड़ा, डॉ० दामोदर खड़से, श्री राहुल देव, डॉ० वी०एन० शर्मा, श्री कुंदन व्यास, प्रो० कुमुद शर्मा, डॉ० सुरेश ऋतुपर्ण और डॉ० ऋता शुक्ल जैसे प्रतिष्ठित पत्रकारों एवं साहित्यकारों ने अपने प्रपत्र पढ़े। 'सभा' के ट्रस्टी व मानद सचिव श्री फ़िरोज़ पैच ने स्वागत भाषण में विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास में शिक्षक की भूमिका और इंटरनेट से मिलने वाले ज्ञान की उपयोगिता पर प्रकाश डाला। 'सभा' के ट्रस्टी व अध्यक्ष श्री सतीश शाह ने अपने अध्यक्षीय भाषण में पठन-पाठन के क्षेत्र में विद्यार्थियों और अध्यापकों की लगन और मेहनत में आज दिख रही कमी पर चिंता व्यक्त की। 'सभा' की विशेष कार्य अधिकारी डॉ० सुशीला गुप्ता ने प्रस्तावना में साहित्य के पठन-पाठन के लिए विद्यार्थी और अध्यापक की अहम् भूमिका पर प्रकाश डाला। अध्यक्ष श्री सतीश शाह ने 'सभा' द्वारा प्रकाशित तथा संजीव निगम द्वारा अनूदित शरलॉक होम्स के हिन्दी अनुवाद 'नाचती हुई

आकृतियों का रहस्य' पुस्तक का लोकार्पण भी किया। प्रथम सत्र में डॉ० दामोदर खड़से ने जीवन के बदलते आदर्शों पर प्रकाश डालते हुए आम आदमी और साहित्य के बीच दूरी लाने वाली परिस्थितियों पर प्रकाश डाला। डॉ० सादिका नवाब 'सहर' ने पठन-पाठन से विद्यार्थियों को जोड़ने के लिए शिक्षक द्वारा मनोविज्ञान का सहारा लेकर बढ़ने की आवश्यकता पर बल दिया। डॉ० अनिल प्रभा कुमार ने शिक्षक में उत्साह, जुनून और निष्ठा तथा विद्यार्थियों में सीखने की ललक का होना आवश्यक बताया, जो एक नई ऊर्जा पैदा करेगी। डॉ० सत्यदेव त्रिपाठी ने बताया कि साहित्य में युग, समय, परंपरा तथा नयेपन को अपनाने की इच्छा की ताकत ही साहित्य में पठन-पाठन को बढ़ायेगी। सुश्री सुधा अरोड़ा ने कहा कि जिसके भीतर संवेदना है, वही साहित्य को जीवित रख पायेगा। प्रथम सत्र के अध्यक्षीय भाषण में श्री राहुल देव ने कहा कि "समाज का साहित्य से क्या रिश्ता है, जब तक हम यह नहीं जानेंगे, तब तक पठन-पाठन पर गंभीरता से सोच नहीं सकते। साहित्य हमें संवाद, भाषा और संवेदना के नये आयाम देता है।" द्वितीय सत्र में, जिसका संचालन डॉ० रीता कुमार ने किया, श्री कुंदन व्यास ने वर्तमान साहित्य पर मीडिया के बढ़ते वर्चस्व और उसके परिणामों पर प्रकाश डाला। डॉ० वी०एन० शर्मा ने कहा कि जिस पाठ्यक्रम से प्रतिभा का विकास हो और जो विचारों के आदान-प्रदान को बढ़ावा दे, वही साहित्य में पठन-पाठन को आगे बढ़ा सकता है। प्रो० कुमुद शर्मा ने साहित्य के चार आवश्यक घटकों– लेखक, पाठक, प्रकाशन और पाठ पर विस्तार से चर्चा करते हुए कहा कि 'कलाकार संस्कृति का शिल्पी होता है।' डॉ० सुरेश ऋतुपर्ण ने साहित्य में पठन-पाठन की प्रक्रिया में अवरोध पैदा करने वाली परिस्थितियों पर प्रकाश डालते हुए नयी पीढ़ी में साहित्य के संस्कार देने के दायित्व पर प्रकाश डाला। डॉ० ऋता शुक्ल ने अपने अध्यक्षीय भाषण में साहित्यकार को अपने परिवेश और वातावरण से एकाकार होकर अभिव्यक्ति देने का संदेश दिया। 'सभा' की ओर से रतन आहूजा, रईस अंसारी और प्रभा दाभोलकर आदि का योगदान रहा। डॉ० सतीश पाण्डेय, डॉ० श्यामसुंदर पाण्डेय, श्री वाघेला और श्री रमेश यादव ने भी अपने-अपने विचार प्रकट किए। एस०एन०डी०टी० महाविद्यालय, मुंबई और बिड़ला कॉलेज, कल्याण के विद्यार्थियों ने भी कार्यक्रम का लाभ उठाया। तीनों सत्रों में आभार-प्रदर्शन क्रमशः राकेश कुमार त्रिपाठी, संजीव निगम और प्रज्ञा गान्ला ने किया।

* दिनांक 5-3-16 को सोनुभाऊ बसवंत कला व वाणिज्य महाविद्यालय, शहापुर एवं हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, मुंबई द्वारा आयोजित 'सोनुभाऊ बसवंत महाविद्यालय एवं हिन्दुस्तानी प्रचार सभा पुस्तकालय' का उद्घाटन सम्पन्न हुआ। इस पुस्तकालय योजना का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को पठन-पाठन हेतु प्रेरित करना है। हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने ग्रंथालय को पुस्तकें प्रदान की हैं; जिसका लाभ अधिक-से-अधिक विद्यार्थी उठा सकेंगे। इस अवसर पर हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के ट्रस्टी व मानव सचिव फ़िरोज़ पैच प्रमुख अतिथि के रूप में उपस्थित थे। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता ज्ञानवर्धिनी संस्था की कार्यकारी समिति के अध्यक्ष महेन्द्रभाई वासा ने की। इस अवसर पर कार्यकारी समिति के उपाध्यक्ष विलासजी क्षीरसागर, विश्वस्त समिति के सचिव बालकृष्ण पाटील, कार्यकारी समिति के सचिव दिलीप भोपतराव, विश्वस्त समिति के सहसचिव राजन्दे भोपतराव, कार्यकारी समिति के सदस्य पांडुरंग विशे, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की प्रबन्ध समिति के सदस्य प्रमोद देशपांडे, 'सभा' की विशेष कार्य अधिकारी डॉ० सुशीला गुप्ता, शोध अधिकारी डॉ० रीता कुमार, पुस्तकालयाध्यक्ष रोहिणी जाधव, सैय्यद अब्बास एवं रईस अन्सारी, महाविद्यालय के पुस्तकालयाध्यक्ष शहाजी वाघमोडे, महाविद्यालय के सभी प्राध्यापक एवं शिक्षकेतर कर्मचारी भी उपस्थित थे। कार्यक्रम का आरम्भ सरस्वती-पूजन से हुआ। इस अवसर पर पौर्णिमा चौरे ने सरस्वती-वंदना प्रस्तुत

की। हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की विशेष कार्य अधिकारी डॉ० सुशीला गुप्ता ने अपने प्रस्ताविकी में भाषा के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए भाषा के माध्यम से किसी के मन तक पहुँचने की महत्त्वपूर्ण बात कही। इसके उपरांत सभी अतिथियों के करकमलों द्वारा पुस्तकालय-फलक का अनावरण किया गया।

कार्यकारी समिति के सचिव दिलीप भोपतराव ने हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के कार्य की सराहना करते हुए पुस्तकालय के लिए दी गयी सहायता के लिए सभा के प्रति आभार प्रकट किया। हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की प्रबंध समिति के सदस्य प्रमोद देशपांडे ने भारतीय भाषाओं के परस्पर सम्बन्धों पर प्रकाश डाला। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के ट्रस्टी व मानद सचिव फ़िरोज़ पैच ने पुस्तकालय की उपयोगिता पर बल दिया और बिना पुस्तकों के अध्ययन के विद्यार्थी-जीवन को आधा-अधूरा बताया। कार्यक्रम का संचालन संतोष गायकवाड़ ने किया तथा अंत में डॉ० अनिल सिंह ने आभार प्रकट किया।

* दिनांक 17-3-16 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने अपने सभागृह में 'प्रचारक-शिविर' का आयोजन किया। उद्‌घाटन-सत्र में हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की प्रबंध समिति के सदस्य श्री प्रमोद देशपांडे ने सभी प्रचारकों का स्वागत करते हुए कहा कि हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों को मूर्त रूप देने का काम आप प्रचारक लोग ही करते हैं। विशेष कार्याधिकारी डॉ. सुशीला गुप्ता ने भी प्रचारकों का मनोबल बढ़ाया। इससे पहले परीक्षा अधीक्षक सुश्री रतन आहूजा ने कार्यक्रम की प्रस्तावना प्रस्तुत की तथा सभी प्रचारकों का स्वागत किया।

पहला सत्र आमंत्रित विद्वानों की चर्चा से आरंभ हुआ, जिन्होंने 'सभा' द्वारा दिये गये विषयों पर चर्चा की। डॉ. राजम नटराजन ने 'अनुवाद आदान-प्रदान का एक महत्त्वपूर्ण विषय' पर अपने विचार रखे। दूसरे विद्वान श्री सैयद सरफ़राज़ अहमद रिज़्वी ने अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी के पठन-पाठन में आने वाली समस्याओं पर प्रकाश डाला तथा उनके उपायों पर विस्तृत चर्चा की। ताहिरा शेख़ ने धन्यवाद दिया। कार्यक्रम का संचालन रईस अंसारी ने किया। शिविर के दूसरे सत्र में प्रचारकों ने अपने-अपने विचार रखे। अपनी-अपनी समस्याओं की चर्चा की तथा 'सभा' की ओर से इनके उत्तर दिये गये।

अन्त में रईस अंसारी ने सभी लोगों का आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम का कुशल संचालन भी रईस अंसारी ने किया।

* दिनांक 19-3-16 को पुणे में आयोजित महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा के अमृत महोत्सव समारोह में हिन्दुस्तानी प्रचार सभा को हिन्दी प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में की गयी महती सेवाओं के लिए प्रतीक-चिह्न द्वारा सम्मानित किया गया। सभा की ओर से यह सम्मान डॉ० सुशीला गुप्ता ने ग्रहण किया।

* दिनांक 22-3-16 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने अहिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी तथा हिन्दुस्तानी को बढ़ावा देने के उद्‌देश्य से तिरुअनन्तपुरम में 'केरल हिन्दी प्रचार सभा' के साथ मिलकर एक ग्रंथालय की शुरुआत की। वहाँ के हिन्दी तथा मलयालम विद्वानों तथा छात्रों की उपस्थिति में हिन्दुस्तानी प्रचार सभा का प्रतिनिधित्व संजीव निगम ने किया। इस अवसर पर 'केरल हिन्दी प्रचार सभा' के अध्यक्ष पी० राजेन्द्रन, सचिव प्रो० एन० माधवन कुट्टी नायर तथा प्राचार्य डॉ० पी०जे० शिवाकुमार, कोषाध्यक्ष आर० जोसफ़ आदि गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। संजीव निगम ने अपने वक्तव्य में इस अवसर को दो विशिष्ट संस्थाओं के दीर्घकालीन संबंधों का आरंभ बताया तथा यह विश्वास दिलाया कि आगे भी कई

गतिविधियाँ मिलकर आयोजित की जाती रहेंगी। प्रो० माधवन कुट्टी नायर ने इस ग्रंथालय के लिए सहयोग देने के लिए हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के न्यासियों तथा प्रबन्ध समिति के प्रति आभार व्यक्त किया।

* दिनांक 29-3-16 को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने अपने वार्षिक 'सनद व पुरस्कार वितरण समारोह' का शानदार आयोजन किया, जिसमें मुंबई के परीक्षा-केन्द्रों के अलावा पुणे तथा भिवंडी के केन्द्रों से छात्रों के अभिभावकों तथा शिक्षकों ने भी भाग लिया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की प्रबंध-समिति के सदस्य श्री प्रमोद देशपांडे ने की। मुख्य अतिथि के रूप में 'सभा' के कार्यक्रमों के इंचार्ज संजीव निगम जी आमंत्रित थे। इस समारोह में अंजुमन ख़ैरूल इस्लाम गर्ल्स हाई स्कूल, घाटकोपर की मुख्याध्यापिका श्रीमती नुज़हत हकीम भी उपस्थित थीं।

कार्यक्रम का आरम्भ परीक्षा-विभाग की अधीक्षक सुश्री रतन आहूजा की प्रस्तावना से हुआ। श्री प्रमोद देशपांडे ने अपने अध्यक्षीय भाषण में समय की महत्ता बताते हुए हिन्दी कविता की कुछ पंक्तियाँ पढ़ीं तथा कार्यक्रम समय से आरंभ होने पर प्रसन्नता जतायी। कुरैश नगर मनपा शाला, कुर्ला की छात्रा नसीमा तथा उसकी सखियों द्वारा प्रस्तुत क़व्वाली की तारीफ़ की। डॉ. सुशीला गुप्ता ने भी परीक्षा का महत्त्व बताते हुए छात्र-छात्राओं का मनोबल बढ़ाया। सांस्कृतिक कार्यक्रम के बाद फ़रवरी 2015 तथा सितम्बर 2015 की परीक्षाओं में 'पेरीनबेन यादगार इनाम', 'मोरारजी देसाई यादगार इनाम' तथा 'मोईनुद्दीन हारिस यादगार इनाम' छात्रों को दिये गये। अन्त में सैयद अली अब्बास ने कविता के रूप में धन्यवाद ज्ञापित किया। अंसारी रईस ने संचालन का कार्यभार सँभाला।

* दिनांक 2-4-16 को सरल हिन्दी कक्षा के प्रथम और द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों तथा विदेशी विद्यार्थियों के लिए सभागृह में दीक्षांत समारोह आयोजित किया गया। इस कार्यक्रम की प्रस्तावना में डॉ० सुशीला गुप्ता ने सभा द्वारा संचालित इन कक्षाओं के उद्देश्य व उपयोगिता पर प्रकाश डाला। मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित ट्रस्टी एवं मानद सचिव श्री फ़िरोज़ पैच और सभा की प्रबंध समिति के सदस्य श्री प्रमोद देशपांडे ने भी विद्यार्थी जीवन में अनुशासन के महत्त्व तथा हिन्दुस्तानी के प्रचार-प्रसार के लिए सभा द्वारा किए जा रहे प्रयासों पर प्रकाश डाला। परीक्षा में उत्तीर्ण सभी विद्यार्थियों को प्रमाण-पत्र तथा प्रथम एवं द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को प्रतीक-चिह्न प्रदान किये गये। कार्यक्रम का संचालन डॉ० रीता कुमार ने किया। सभा की ओर से प्रभा दाभोलकर, प्रज्ञा गान्ला, ताहिरा तथा रईस अंसारी ने उल्लेखनीय योगदान दिया।

भूल सुधार : क्षमस्व

गतांक की विषय-सूची में भूलवश 'समान्तर' कविता को पृष्ठ क्रमांक 42 के स्थान पर 43 पर दिखाया गया है। इसके कारण आगे के पृष्ठों के क्रमांक में भी त्रुटि आ गयी है। पुस्तक समीक्षा में समीक्षक श्री अरुण होता के जीवनवृत्त के स्थान पर डॉ. रमेश मिलन का जीवनवृत्त प्रकाशित हो गया है। श्री अरुण होता का जीवनवृत्त पाठकों की जानकारी के लिए यहाँ दिया जाता है –

पिछले 25 वर्षों से अध्यापनरत। अब तक लगभग 12 पुस्तकें प्रकाशित। ओड़िया से हिन्दी तथा हिन्दी से ओड़िया में कई अनूदित पुस्तकें प्रकाशित। अखिल भारतीय आचार्य रामचंद्र शुक्ल आलोचना पुरस्कार (2010) से सम्मानित। सम्प्रति पश्चिम बंगाल राज्य विश्वविद्यालय कोलकाता में हिन्दी प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष।

गाँधी-विचार

गाँधी-विचार में शिक्षा और शान्ति

डॉ० रवीन्द्र कुमार

''शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक और व्यक्ति के शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा का सर्वोत्तम-बहुमुखी विकास करना है; केवल साक्षरता ही शिक्षा का अन्त अथवा प्रारम्भ नहीं है।'' - महात्मा गाँधी

सुप्रसिद्ध भारतीय शिक्षाशास्त्री, समाज-वैज्ञानिक और रचनात्मक लेखक डॉ० रवींद्र कुमार मेरठ विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति हैं। भारतीय उपमहाद्वीप के महान व्यक्तित्वों, विशेषकर गौतम बुद्ध और महात्मा गाँधीजी पर अनेक प्रसिद्ध ग्रंथों के रचनाकार होने के साथ ही डॉ० कुमार विश्व के सभी महाद्वीपों के देशों में चार सौ से अधिक व्याख्यान दे चुके हैं। वर्तमान में ग्लोबल पीस अंतरराष्ट्रीय पत्रिका के प्रधान संपादक भी हैं। अनेक राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय पुरस्कारों से अलंकृत डॉ० रवींद्र कुमार पद्मश्री से भी सम्मानित हैं।

निस्सन्देह शिक्षा मनुष्य के चहुँमुखी विकास का साधन है। दूसरे शब्दों में मानव-विकास का मार्ग शिक्षा की गलियों से होकर गुज़रता है। यही नहीं, शिक्षा ही व्यक्ति के जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करने का आधार है। शिक्षा ही है, जो व्यक्ति के लिए अन्ततः शान्ति को सुनिश्चित कर सकती है।

कहना न होगा, मानव-जीवन में शिक्षा के महत्त्व को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। विश्वभर के महान विद्वानों और विचारकों के सन्देशों और धर्मग्रन्थों के सारांश से मानव-जीवन में शिक्षा के महत्त्व को भली-भाँति और स्पष्टतः समझा जा सकता है। शिक्षा और शान्ति के मध्य में सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए दार्शनिकों, विद्वानों और महान धर्मगुरुओं ने शिक्षा को ही शान्ति-प्राप्ति का साधन और आधार घोषित किया है। प्रत्येक क्षेत्र में शिक्षा के महत्त्व का ज्ञान कराते हुए उन्होंने इसके माध्यम से विद्यमान परिस्थितियों में जीवन को सम्पन्न करने तथा शान्तिमय बनाने पर बल दिया है। शिक्षा के अभाव में उत्पन्न स्थिति, विशेषकर संघर्ष, विवाद और अशान्ति की वास्तविकता उन्होंने लोगों के समक्ष रखी है। इस सम्बन्ध में वैदिक हिन्दू दर्शन के एक प्राचीन ग्रन्थ के निम्नलिखित श्लोक को यहाँ प्रस्तुत करना अति प्रासंगिक है :

माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठितः,

न शोभते सभा मध्ये हंस मध्ये वाको यथा।

श्लोक का अर्थ स्पष्ट है; हम सभी जानते हैं। अर्थात् ''वे माता-पिता, जो अपने बालक को शिक्षित नहीं करते, बालक के सबसे बड़े शत्रु हैं। अशिक्षित (व्यक्ति) किसी सभा के मध्य उसी प्रकार शोभायमान नहीं होता, जैसे हंसों के मध्य कोई बगुला।''

शिक्षा की मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उपयोगिता, प्रासंगिकता और महत्ता अपरिहार्य है; प्रत्येक क्षेत्र में भी प्रत्येक स्तर पर अपरिहार्य है। मानव-जीवन के सर्वाधिक सुन्दर और मूल्यवान आभूषण के रूप में यह विकसित होती है।

शिक्षा की महत्ता और प्रासंगिकता को जानने के बाद,

शिक्षा के शान्ति-निर्माणार्थ योगदान के सम्बन्ध में और चर्चा करने से पहले अब कदाचित हमारे लिए आवश्यक होगा कि हम शिक्षा एवं शान्ति के शब्दार्थों और उद्देश्यों को भी स्पष्टत: जान लें। ऐसा करना इसलिए विशेष रूप से आवश्यक है, कि हमें अपने विषय को, जिसके साथ गाँधीजी का दृष्टिकोण जुड़ा है, आगे बढ़ाते हुए एक सटीक तथा सकारात्मक परिणाम पर भी पहुँचना है।

शिक्षा : शिक्षा का अंग्रेज़ी शब्द 'ऐज्युकेशन', लैटिन के 'एजुकेअर' से निकला है, जो पुन: एजुसर से सम्बन्धित है; यह आविर्भाव होना अथवा/और अभिव्यक्ति को प्रकट करता है। शब्द की यह संक्षिप्त व्याख्या मनुष्य की आन्तरिक क्षमता प्रकट करती है; मनुष्य को विभिन्न स्तरों पर निरन्तर निर्देशित करती है। मानवीय मस्तिष्क, चरित्र और ज्ञान के साथ ही मूल्यों को, जो शिक्षा को आधार और क्षेत्र प्रदान करते हैं, निरन्तरता प्रदान करती है।

यदि भारतीय दृष्टिकोण को केन्द्र में रखकर हम शिक्षा की व्याख्या-विश्लेषण करें, तो यह छ: वेदांगों में से एक वेदांग है। इसकी परिधि में समझ की स्पष्टता और सुव्यवस्थित पद्धति आदि सहित वे समस्त उपाय-व्यवस्थाएँ आती हैं, जो व्यक्ति के चहुँमुखी विकास के लिए आवश्यक हैं। इस प्रकार शिक्षा-प्रक्रिया स्पष्टत: और पूर्णत: निरन्तरता को समर्पित है; यह उन्नति-विकास के लिए है; ज्ञान और कर्म के बल पर विद्यमान परिस्थितियों में मनुष्य को सम्पन्नता के मार्ग पर अग्रसर करने का साधन है।

शान्ति : प्रसिद्ध अंग्रेज़ी शब्द पीस की जड़ें 'पैक्स'(वल्गेट), ग्रीक शब्द 'आयरेने' और हिब्रू शब्द 'शलोम' में ढूँढ़ी-खोजी जा सकती हैं। दिन-प्रतिदिन की मानव गतिविधियों में व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर सौहार्द-सहयोग और विवाद व संघर्ष-मुक्त स्थिति की चाह इन शब्दों के मूल में रहने वाली भावना है। सामान्यत: सामाजिक-आर्थिक क्षेत्रों में संघर्ष, विवाद और तनाव से मुक्त वातावरण को शान्ति की स्थिति स्वीकार किया जाता है। अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर इसे लड़ाई या युद्ध से, जो दो देशों अथवा दो से अधिक राष्ट्रों के मध्य हो सकता है, मुक्त स्थिति के रूप में देखा जाता है। भारतीय सन्दर्भ या परिप्रेक्ष्य भी इस सन्दर्भ में लगभग समान ही है। संस्कृत भाषा से उपजे प्रसिद्ध शब्द 'विश्राम', 'निवृत्ति', 'निस्तब्ध' और 'आनन्द' शान्ति की अवस्था को प्रकट करने के लिए प्रयुक्त होते हैं, जो पाश्चात्य जगत के उन शब्दों के जिनकी 'पीस' शब्द के सम्बन्ध में चर्चा हमने की है, न्यूनाधिक समानार्थी ही हैं।

लेकिन, पाश्चात्य और भारतीय परिप्रेक्ष्य में, इस सम्बन्ध में समानता होने के बावजूद हम मात्र सामान्य पक्ष पर ही निर्भर नहीं रह सकते। हमें सामान्य से विशेष पक्ष पर भी आना ही होगा।

शान्ति, वास्तव में कोई ठहरावमयी स्थिति नहीं है। सम्पूर्ण मानव दर्शन, विशेषकर भारतीय दर्शन की समस्त शाखाएँ स्वयं इस सत्य की साक्षी देती हैं। शान्ति को यथास्थिति स्वीकार न करने का सभी मानव का आह्वान करती हैं। विपरीत इसके, शान्ति भय और तनावमुक्त वातावरण में मानव को उन्नति-मार्ग पर आगे बढ़ने का आह्वान करती है। शान्ति-अवस्था में स्वस्थ सहअस्तित्व हेतु वृहद् जनकल्याण के लिए प्रयास किए जाते हैं। इसीलिए शान्ति-अवस्था सक्रियता को समर्पित है। यह मनुष्यों को उत्साह से भरपूर कर उन्हें आगे बढ़ने को प्रेरित करती है।

शिक्षा और शान्ति : स्पष्टत: शिक्षा मनुष्य के सर्वांगीण विकास का आधार व साधन है; यह जीवन को सार्थक बनाने की प्रक्रिया है। उद्देश्य-प्राप्ति हेतु अपरिहार्य और आवश्यक शर्तों, निस्सन्देह सकारात्मक और कल्याणकारी शर्तों को इस प्रक्रिया में सम्मिलित हुआ मानना चाहिए। उसी प्रकार विवाद,

संघर्ष और युद्ध से मुक्त स्थिति, अर्थात शान्ति-अवस्था भी गतिशीलता को समर्पित है; यह आगे बढ़ने के लिए मानव का आह्वान करती है। नित-नए लाभ इस अवस्था में अपेक्षित हैं। यह भय और संशय के बिना विकास का मार्ग है। इसीलिए निस्सन्देह यह कह सकते हैं कि शिक्षा और शान्ति एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। ये एक-दूसरे के पूरक हैं। दोनों प्रत्येक व्यक्ति के कल्याण और विकास के लिए योगदानकर्ता हैं।

महात्मा गाँधी का दृष्टिकोण : महात्मा गाँधी के अनुसार, शिक्षा जीवन के अन्त तक जारी रहने वाला अभ्यास है। उन्होंने इसे साधना माना है। जीवन को सफल-सार्थक बनाने का यही एकमात्र श्रेष्ठ साधन है। साथ ही "मानव-शरीर, बुद्धि और चरित्र को साधन के रूप में इस प्रकार परिवर्तित करने में शिक्षा ही सहायक हो सकती है, जिससे वह वास्तव में कुशल बन सके और आनन्द प्राप्त कर सके।"

जीवन को सफल-सार्थक बनाने का यही एकमात्र श्रेष्ठ साधन है। साथ ही, "मानव-शरीर, बुद्धि और चरित्र को साधन के रूप में इस प्रकार परिवर्तित करने में शिक्षा ही सहायक हो सकती है, जिससे वह वास्तव में कुशल बन सके और आनन्द प्राप्त कर सके।"

स्पष्ट है, गाँधीजी के सपनों और व्याख्या की शिक्षा वह माध्यम है, जो व्यक्ति को जन्म से मृत्यु तक निर्देशित करे; जो लक्ष्य-प्राप्ति में सहायक हो। लक्ष्य वैदिक-हिन्दू दर्शन सहित कई दूसरे दर्शनों के लिए भले ही मुक्ति, मोक्ष या निर्वाण ही क्यों न हो! हम जानते हैं, ये अवस्थाएँ शान्ति का उच्चतम स्तर स्वीकारी जाती हैं। यही नहीं, महात्मा गाँधी के सपनों व व्याख्या की शिक्षा में विशिष्टता है, जिसे किशोरलाल मशरूवाला के निम्नलिखित वक़्तव्य से और अच्छी प्रकार से समझा जा सकता है:–

"यह प्रारम्भ से अन्त कर मनुष्य के चहुँमुखी विकास के लिए कार्य करती है। इसका लक्ष्य-उद्देश्य व्यक्ति के जीवन को अर्थपूर्ण व मूल्यवान बनाना भी है; केवल आजीविका प्राप्ति का साधन ही शिक्षा नहीं है।"

शिक्षा के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी ने समय-समय पर कई लेख लिखे। अनेक अवसरों पर छात्रों और अध्यापकों को सम्बोधित करने के साथ ही उन्होंने शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य और मानव-जीवन में इसकी महत्ता के सम्बन्ध में कई वक़्तव्य भी जारी किए। उन सभी लेखों, वक़्तव्यों एवं सम्बोधनों से जो उनका दृष्टिकोण शिक्षा के सम्बन्ध में हमारे समक्ष प्रकट होता है, उसे हम निम्नलिखित तीन निष्कर्ष रूपी बिन्दुओं द्वारा प्रस्तुत कर सकते हैं:

1. शिक्षा का सर्वप्रमुख उद्देश्य मनुष्य को आत्मनिर्भर बनाना है।

2. शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को कार्यकुशल एवं सफल बनाना है; तथा

3. शिक्षा का उद्देश्य विद्यमान परिस्थितियों में, समय-स्थान की माँग के अनुरूप मनुष्य को निर्देशित कर विकास-मार्ग पर आगे बढ़ाना है, ताकि अपनी कायिक और मानसिक उन्नति को सुनिश्चित करते हुए वह अपना जीवन सार्थक कर सके। इसी के साथ वह समाज, राष्ट्र और सम्पूर्ण विश्व के कल्याणार्थ भी कार्य कर सके।

इन उक्त तीन बिन्दुओं-निष्कर्षों का विश्लेषण करते हुए निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि शिक्षा-सम्बन्धी महात्मा गाँधी का दृष्टिकोण, विषय पर उपलब्ध दृष्टिकोणों में एक अति उत्कृष्ट दृष्टिकोण है। यह दृष्टिकोण मानवीय आत्मनिर्भरता, कार्यकुशलता और सार्थकता की कामना करता है। इस रूप में मनुष्य को उद्देश्य-प्राप्ति अथवा लक्ष्य तक जाने को पुकारता है। उसके लिए द्वार खुले रखता है। यहीं नहीं, शिक्षा-सम्बन्धी गाँधीवादी दृष्टिकोण शान्ति-स्थापना की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है, स्थानीय या राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं, अपितु वैश्विक स्तर पर भी।

आलेख

देवनागरी एवं डोगरी

यशपाल निर्मल

डोगरी जम्मू-कश्मीर राज्य के जम्मू प्रांत की प्रमुख भाषा है। जम्मू प्रांत की मुख्य भाषा डोगरी होने के कारण ही इस प्रांत को डुग्गर-प्रदेश की संज्ञा दी गयी है। डुग्गर-प्रदेश की डोगरी भाषा उतनी ही पुरानी है; जितनी अन्य आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ। डॉ॰ अम्बाप्रसाद सुमन के मतानुसार- ''जिस दिन आदमी ने अपनी व्यक्त वाणी को सुरक्षित रखकर एवं दोनों आँखों के लिए देखने योग्य बना कर आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित किया होगा, उसी दिन लिपि का जन्म हुआ होगा।'' प्रसिद्ध लिपि शास्त्री गुणाकर मूळे के अनुसार– ''लगभग छह हज़ार वर्ष पूर्व ताम्र युग की शुरुआत हुई। नगरों की स्थापना होने लगी। राजाओं का केंद्रीय शासन शुरू हुआ। संचित संपत्ति का हिसाब रखने के लिए और राजाओं के आदेश आदि जारी करने हेतु लिपि की आवश्यकता पड़ी। इसलिए ताम्र युग में प्रथम बार बहुत-सी लिपियों ने जन्म लिया।''

डॉ. लक्ष्मी विलास डबरवाल पार्थसारथी नारद स्मृति का हवाला देते हुए लिखते हैं– ''इस विराट संसार के लौकिक कल्याण हेतु ही ब्रह्मा ने लिपि बनाई।'' किंतु सिंधु घाटी से प्राप्त लेखों आदि से स्पष्ट हो जाता है कि लिपि का आविष्कार वैदिक युग से बहुत पहले हो चुका था। मोहनजोदाड़ो एवं हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त मोहरों पर जो लिपि अंकित है, उसे लिपि विशेषज्ञों ने पाँच हज़ार वर्ष पुराना बताया है। प्रो. देवेन्द्र शर्मा के अनुसार– ''इंसान की बुद्धि के सबसे महत्त्वपूर्ण दो कार्य हैं– पहला भारती ब्राह्मी लिपि और दूसरा वर्तमान शैली के अंकों की कल्पना''। प्रो. देवेन्द्र शर्मा लिपि के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं– ''लिपि

प्रकाशन : डोगरी टाईम्स, दैनिक कश्मीर टाईम्स, शीराजा डोगरी आदि में कविताओं, कहानियों और लेखों का प्रकाशन। डोगरी में कविता संकलन, पंजाबी और मैथिली से अनुवाद। पुरस्कार : साहित्य अकादमी पुरस्कार 2014 से तथा अन्य कई संस्थाओं से सम्मानित।

ने भाषा को देश एवं काल के बंधनों से मुक्त कर दिया है और क्षण टिकाऊ से चिर टिकाऊ में बदल दिया है।''

डोगरी भाषा को लिखने के लिए डोगरी की अपनी लिपि भी है, जिसे 'डोगरी अक्षर' के नाम से जाना जाता है। डोगरी की विद्वान प्रो. चम्पा शर्मा के मतानुसार– ''यहाँ की भाषा को द्विगर्त भाषा एवं लिपि को द्विगर्त लिपि नाम दिया गया है। इस लिपि का प्रयोग भी उतना ही होता रहा, जितना प्रदेशानुसार अन्य लिपियों का।'' प्रो. चम्पा शर्मा के अनुसार– ''भारत की प्राचीन लिपि ब्राह्मी में से डोगरी लिपि का विकास हुआ है। महाराजा रणवीर सिंह ने इसको सुधारकर मानक एवं संपूर्ण बनाया। आज भी इस लिपि में कई आलेख उपलब्ध हैं। इस लिपि में सबसे पुराना आलेख विक्रमी संवत 1583 अर्थात सन 1526 ई. का एक छोटा-सा शिलालेख है, जो तहसील बसोहली के एक नगर महानपुर में निर्मित जगदम्बा के मंदिर में लगा हुआ है। सन 1947 ई. में स्वतंत्रता के बाद सन 1948 ई. में जम्मू-कश्मीर राज्य का गठन हुआ। डॉ॰ बालकृष्ण शास्त्री के अनुसार– ''सन 1953 ई. में एक समिति का गठन किया गया,

जिसने यह निर्णय लिया था कि डोगरी भाषा के लिए फ़ारसी के मुक़ाबले देवनागरी अधिक वैज्ञानिक है एवं इस लिपि में डोगरी को अच्छी तरह लिखा जा सकता है।'' राज्य को चलाने के लिए और नयी रणनीति तैयार करने के लिए अन्य समस्याओं की तरह डोगरी के लिए कौन-सी लिपि का प्रयोग किया जाए? भी एक समस्या थी, जिसके समाधान के लिए जम्मू-कश्मीर सरकार ने एक 12 सदस्यों की समिति बनाई। इस कमेटी के अध्यक्ष तत्कालीन वित्त मंत्री श्री गिरधारी लाल डोगरा थे। श्री पन्नालाल इसके सचिव थे, प्रो॰ रामनाथ शास्त्री इसके संयुक्त सचिव एवं सर्वश्री धर्मचंद प्रशांत, मोती लाल बैगड़ा, रामप्यारा सराफ, सरदार कुलबीर सिंह, ब्रिगेडियर खुदाबक्श, सरदार अकरम खान, चूनी लाल कोतवाल, डॉ॰ सिद्धेश्वर वर्मा और कृष्ण देव सेठी इस समिति के सदस्य थे। इस समिति ने फ़ैसला किया कि डोगरी के लिए देवनागरी एवं फ़ारसी लिपि को अपना लिया जाए। डोगरी के बोध विकास को देखते हुए विद्वानों ने देवनागरी को अपना लिया और कुछ विद्वान फ़ारसी लिपि में भी लिखते रहे। देवनागरी लिपि डोगरी व हिन्दी के अलावा भारत की बहुत-सी अन्य भाषाओं के लिए भी प्रयोग होती है। यह लिपि सिर्फ़ भारतीय आर्य परिवार की भाषाओं के लिए ही नहीं, बल्कि अन्य परिवारों की भाषाओं के लिए भी प्रयुक्त होती है जैसे बोडो के लिए, जो ऐस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवार की भाषा है। इसके अलावा मराठी, नेपाली, कोंकणी, गुजराती, राजस्थानी आदि भाषाओं के लिए भी प्रयोग होती है।

देवनागरी को कुछ विद्वान अक्षरमूलक एवं रोमन को वर्णमूलक मानते हैं और अक्षरमूलक लिपि को अधिक ऊँचा दर्जा देते हैं। वर्तमान देवनागरी विकास के हिसाब से अंतिम उपलब्धि है। इतिहास के मुताबिक देवनागरी का विकास भारत की प्राचीन लिपि ब्राह्मी से हुआ माना जाता है। इस ब्राह्मी लिपि से भारत की लगभग सभी लिपियाँ विकसित हुई हैं। अगर हम एक हज़ार वर्ष पीछे देखें, तो देवनागरी के वर्णों में काफ़ी परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। भाषावैज्ञानिकों के अनुसार देवनागरी के वर्णों का प्रबन्ध संसार की कई लिपियों से अच्छा है, जिसके परिणामस्वरूप ही भारत की कई भाषाएँ इसका प्रयोग करती हैं। फिर भी मौजूदा ज़रूरतों को ध्यान में रखते हुए विद्वानों ने इस लिपि में भी कई कमियाँ महसूस कीं और समय-समय पर सुधार भी किये। भारत सरकार ने 10, 11 एवं 12 अगस्त 1961 को दिल्ली में तीन दिवसीय सम्मेलन किया था। सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया कि सभी भाषाओं के लिए एक ही लिपि हो, जिसके लिए देवनागरी को सबसे श्रेष्ठ एवं वैज्ञानिक लिपि माना गया। उस समय असमिया, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल, बांग्ला, पंजाबी, मलयालम, मराठी, संस्कृत एवं हिन्दी भाषाओं को देवनागरी में लिखने हेतु भाषा की ध्वनियों के अनुसार कुछ नये चिह्न भी बनाए गये और सन 1966 में 'परिवर्धित देवानागरी' नाम से केंद्रीय हिंदी निदेशालय एवं शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से एक पुस्तक भी प्रकाशित की गयी। उसके बाद देवनागरी का जो रूप सामने आया, उसको ''परिवर्धित देवनागरी'' कहा जाता है। यह रूप भारत की सभी भाषाओं के लिए एक सामान्य राष्ट्रलिपि है।

किसी भी लिपि में पाए जाने वाले वर्णों, उपवर्णों आदि के व्यवस्थित क्रम को उस लिपि की वर्णमाला कहा जाता है। डोगरी लेखन के लिए देवनागरी लिपि ही प्रयुक्त हो रही है। ज़्यादातर चिह्न हिन्दी की तरह प्रयोग हो रहे हैं। वे चिह्न जो हिंदी से भिन्न हैं, उनका व्यौरा इस प्रकार है-

1. स्वर- आऽ, ईऽ, ऊऽ, एऽ, ऐऽ, ओऽ, ऑऽ, एवं ऋ।

2. व्यंजन- घ, ङ, झ, ञ, ध, ढ, ढ़, भ, य, व, ष, ह, क्ष, त्र, एवं ज्ञ।

3. चिह्न –

1. (आऽ)- यह प्लुत, मध्य, अर्द्धगोल या चौड़ा एवं मध्य स्वर है। इसकी मात्रा 'ऽ' है, जो व्यंजनों के साथ

प्रयुक्त होती है। इसका प्रयोग शब्द की अंतिम स्थिति में ही होता है। जैसे- बधाऽ, सनाऽ, चनाऽ आदि।

2. (ईऽ)- यह प्लुत, अगला, चौड़ा, ऊँचा स्वर है। इसकी मात्रा 'ीऽ' है,, जो व्यंजनों के साथ प्रयुक्त होती है। डोगरी में इसका प्रयोग अंतिम स्थिति में होता है। जैसे- धीऽ, नींऽ, बीऽ आदि।

3. (एऽ)- यह प्लुत, अगला, चौड़ा, मध्य स्वर है। इसकी मात्रा 'ेऽ' है, जो व्यंजनों के साथ प्रयुक्त होती है। डोगरी में इसका प्रयोग अंतिम स्थिति में ही होता है। जैसे - रपेऽ, देऽ आदि।

4. (ऐऽ)- यह प्लुत, अगला, चौड़ा, निचला-मध्य स्वर है। इसकी मात्रा 'ैऽ' है, जो व्यंजनों के साथ प्रयुक्त होती है। डोगरी में इसका प्रयोग अंतिम स्थिति में ही होता है। जैसे- बघैऽ, लैऽ आदि।

5. (ऊऽ)- यह प्लुत, पिछला, गोल, एवं ऊँचा स्वर है। इसकी मात्रा 'ूऽ' है, जो व्यंजनों के साथ प्रयुक्त होती है। डोगरी में इसका प्रयोग अंतिम स्थिति में ही होता है। जैसे कूंऽ, रुंऽ आदि।

6. (ओऽ)- यह प्लुत, पिछला, गोल, एवं मध्य स्वर है। इसकी मात्रा 'ोऽ' है, जो व्यंजनों के साथ प्रयुक्त होती है। डोगरी में इसका प्रयोग अंतिम स्थिति में ही होता है। जैसे - भोऽ, घ्यो, प्योऽ, लोऽ आदि।

7. (ऑ)- यह प्लुत पिछला, गोल, एवं ऊँचा स्वर है। इसकी मात्रा 'ॉ' है, जो व्यंजनों के साथ प्रयुक्त होती है। इसके बगैर भी डोगरी लेखन में कोई अर्थ परिवर्तन या मुश्किल नहीं आती। जैसे - डॉक्टर, डाक्टर, डाट, डॉट आदि।

8.(ऋ)- यह ध्वनि अक्षरिक होने के कारण इसे स्वरों की कोटि में रखा हुआ है। इसकी मात्रा है, जो व्यंजन के नीचे लगती है। इसका प्रयोग आमतौर पर तत्सम शब्दों के लिए ही होता है। डोगरी में इसके स्थान पर 'रि' का प्रयोग होता है। जैसे - रिखी, रितु, रिणु आदि।

2. व्यंजन प्रयोग-

1.(ङ)- यह कण्ठिय, नासिक्य, अल्पप्राण और सघोष ध्वनि है। स्वर रहित होने पर इसके नीचे हलंत (ङ्) का प्रयोग होता है। डोगरी भाषा में इसका प्रयोग शुरू, मध्य एवं अंतिम तीनों स्थितियों में होता है। जैसे- ङारा (अंगारा), संङार (गेहूं आदि की बाली), जङ (टांग) आदि।

2. (ञ)- यह तालवी, नासिक्य, अल्पप्राण और सघोष ध्वनि है। स्वर रहित होने पर इसके पीछे हलंत (ञ) का प्रयोग होता है। डोगरी भाषा में इसका प्रयोग शुरू, मध्य एवं अंतिम तीनों स्थितियों में होता है। जैसे- ञ्याणा(बच्चा), संञाली (शाम का नाश्ता), संञ (शाम) आदि।

3.(य)- यह तालवी, अर्द्ध-व्यंजन, अल्पप्राण एवं सघोष ध्वनि है। स्वर रहित होने पर यह 'ट' की तरह प्रयोग होता है। डोगरी भाषा में इसका प्रयोग शुरू, मध्य एवं अंतिम तीनों स्थितियों में होता है। जैसे- यज्ञ, ञ्याणा, क्यास, लैय आदि।

4. (व)- यह दंत-होठी, अर्द्ध-व्यंजन, अल्पप्राण एवं सघोष ध्वनि है। स्वर रहित होने पर यह 'ठ' की तरह प्रयोग होता है। डोगरी भाषा में इसका प्रयोग बहुत कम होता है। फिर भी यह शब्दों की शुरू, मध्य एवं अंतिम तीनों स्थितियों में प्रयोग होता है।

5. (ष)- डोगरी भाषा में यह ध्वनि सिर्फ़ तत्सम शब्दों में ही प्रयोग होती है। यह मूर्धन्य, संघर्षीय अल्पप्राण, एवं अघोष ध्वनि है। स्वर रहित होने पर यह 'ष' की तरह प्रयोग होती है। डोगरी भाषा में इस ध्वनि का प्रयोग शब्द के मध्य स्थिति में ही होता है।

6.(ह)- इस वर्ण का प्रयोग डोगरी भाषा में दो प्रकार से होता है। 1. स्वरयंत्रमुखी, संघर्षीय, महाप्राण एवं सघोष ध्वनि के रूप में। यह प्रयोग कुछ गिने-चुने शब्दों जैसे- हा, ही, हे, हियां, पैहा, कैहा, आदि में होता है।

2. डोगरी भाषा में 'ह' का ज़्यादातर प्रयोग सुर के लिए

ही होता है। जब इसका प्रयोग स्वर सहित होता है, तो इसका उच्चारण स्वर की तरह एवं निम्नारोही सुर के तौर पर होता है। जैसे हार, होना, हाल, हत्थ आदि। परंतु जब इसका प्रयोग स्वर-रहित होता है, तो इसके नीचे हलंत लगाया जाता है। यह स्वर की तरह उच्चावरोही सुर की तरह प्रयोग होता है। जैसे-बाह्र्, काह्र्, जाह्र् आदि।

7. (ढ़)- यह सुरात्मक मूर्धन्य, उत्क्षिप्त, अल्पप्राण एवं सघोष ध्वनि है। इस व्यंजन ध्वनि या वर्ण का प्रयोग मध्य एवं अंतिम स्थिति में होता है। जैसे- चढ़ना, पढ़ आदि।

8. (घ)- डोगरी भाषा में यह सुरात्मक एवं बहुध्वनि वर्ण है, जो भिन्न-भिन्न स्थितियों एवं स्वर-संयोग के कारण अलग-अलग ढंग से उच्चरित होता है। देवनागरी लिपि में यह क वर्ग का चौथा वर्ण है। शब्द की शुरुआती स्थिति में आने पर इसका उच्चारण हमेशा अपने वर्ग की पहली ध्वनि /क्/ निम्नारोही सुर में होता है। जैसे- घर, घाट, घराट आदि। मध्य एवं अंतिम स्थिति में इसका उच्चारण अपने वर्ग के तीसरे वर्ण/ग्/ उच्चावरोही सुर में होता है। जैसे -घघरा, खंघ आदि।

9. (झ)- डोगरी भाषा में सुरात्मक एवं बहुध्वनि वर्ण है, जो भिन्न-भिन्न स्थितियों एवं स्वर संयोग के कारण अलग-अलग ढंग से उच्चारित होता है। देवनागरी लिपि में यह च वर्ग का चौथा वर्ण है। शब्द की शुरुआती स्थिति में आने पर इसका उच्चारण सदा अपने वर्ग की पहली ध्वनि/च्/ निम्नारोही सुर में होता है। जैसे- झारी, झंडा, झुंड आदि। मध्य एवं अंतिम स्थिति में इसका उच्चारण अपने वर्ग के तीसरे वर्ग/ज्/ उच्चावरोही सुर में होता है। जैसे-मझाटला, सांझ आदि।

10. (ढ)- डोगरी भाषा में यह सुरात्मक एवं बहुध्वनि वर्ण है, जो भिन्न-भिन्न स्थितियों एवं स्वर संयोग के कारण अलग-अलग ढंग से उच्चारित होता है। देवनागरी लिपि में यह ट वर्ग का चौथा वर्ण है। शब्द की शुरुआती स्थिति में आने पर इसका उच्चारण सदा अपने वर्ग की पहली ध्वनि/ट्/ निम्नारोही सुर में होता है। जैसे- ढक्कन, ढोल, ढाबा आदि। मध्य एवं अंतिम स्थिति में इसका उच्चारण अपने वर्ग के तीसरे वर्ण/ड्/ उच्चावरोही सुर में होता है। जैसे- कड्ढना, बड्ढ आदि।

11. (ध)- डोगरी भाषा में यह सुरात्मक एवं बहुध्वनि वर्ण है, जो भिन्न-भिन्न स्थितियों एवं स्वर संयोग के कारण अलग-अलग ढंग से उच्चारित होता है। देवनागरी लिपि में यह त वर्ग का चौथा वर्ण है। शब्द की शुरुआती स्थिति में आने पर इसका उच्चारण सदा अपने वर्ग की पहली ध्वनि/त्/ निम्नारोही सुर में होता है। जैसे धन, धंदा, धाम आदि। मध्य एवं अंतिम स्थिति में इसका उच्चारण अपने वर्ग के तीसरे वर्ण/द्/ उच्चावरोही सुर में होता है। जैसे- धांधली, बंध आदि।

12. (भ)- डोगरी भाषा में यह सुरात्मक एवं बहुध्वनि वर्ण है जो भिन्न-भिन्न स्थितियों एवं स्वर संयोग के कारण अलग-अलग ढंग से उच्चारित होता है। देवनागरी लिपि में यह प वर्ग का चौथा वर्ण है। शब्द की शुरुआती स्थिति में आने पर इसका उच्चारण सदा अपने वर्ग की पहली ध्वनि/प्/ निम्नारोही सुर में होता है। जैसे भत्त, भांडा, भ्रा आदि। मध्य एवं अंतिम स्थिति में इसका उच्चारण अपने वर्ग के तीसरे वर्ण/ब्/ उच्चावरोही सुर में होता है। जैसे सांभना, रंभ आदि।

13. (ज्ञ)- देवनागरी का यह संयुक्त व्यंजन ज् + ञ् + अ के मेल से बना हुआ है। डोगरी में यह ग् + य् + अ के संयोजन के लिए प्रयुक्त होता है। डोगरी में यह ग्य एवं ज्ञ दोनों रूपों में प्रयोग होता है। जैसे- ज्ञान ग्यान, आज्ञा आग्या आदि।

14. (त्र)- यह संयुक्त त् + र् + अ् का संयुक्त रूप है। डोगरी में इसका प्रयोग बहुत अधिक होता है। जैसे- त्राबंडी, त्रेल, त्रेह्, त्रामा, त्रक्कड़ी आदि।

15. (क्ष)- देवनागरी का यह संयुक्त व्यंजन क् + ष्+ अ + अ के मेल से बना हुआ है। इसका प्रयोग सिर्फ़

कुछ तत्सम शब्दों के लिए होता है। डोगरी में इसका प्रयोग क् + श् + अ के लिए होता है।

इसके स्थान पर 'ख' या 'क्ख' का प्रयोग भी होता है। जैसे - रक्षा = रक्खेआ, भिक्षा = भिक्खेआ आदि।

16. (श्र)- देवनागरी का यह संयुक्त व्यंजन डोगरी में भी श् + र् + अ के मेल से बना हुआ है। इसका प्रयोग सिर्फ़ तत्सम शब्दों के लिए होता है- जैसे - श्री, श्रीमान, श्रीमती।

3. चिह्न- डोगरी भाषा में स्वर व्यंजनों के अलावा कुछ चिह्न भी प्रयुक्त होते हैं, जिनका प्रयोग निम्नलिखित परिवेश में होता है:–

1. (')- यह अंग्रेज़ी का एपास्ट्राफी कॉमा है। डोगरी भाषा में इसका प्रयोग निम्नारोही सुर को दर्शाने के लिए शिरोरेखा के बीच वर्णों के मध्य होता है। जैसे कु 'न, ब' रा आदि।

अंत में यह कहना ग़लत न होगा कि देवनागरी एक श्रेष्ठ लिपि है, जिसका प्रयोग भारत की बहुत सी भाषाएँ कर रहीं हैं। यहाँ पर सिर्फ़ उन वर्णों की चर्चा की गयी है, जो डोगरी में हिंदी की तरह उच्चारित नहीं होते। देवनागरी पूरी तरह वैज्ञानिक लिपि है। डोगरी भाषा के लिए यह उपयुक्त लिपि है। इसे अपना कर डोगरी भाषा के विकास को एक नयी गति मिली है। इसका प्रचार एवं प्रसार क्षेत्रीय सीमाओं को तोड़कर देश के अन्य क्षेत्रों तक भी पहुँचा है।

सम्पर्क - चमन निवास, गढ़ी-विशना
पत्रालय- ज्यौड़िया, तहसील- अखनूर
जम्मू- 181202 (जम्मू-कश्मीर)

पत्रिका संबंधी विवरण

पत्रिका का नाम	: हिन्दुस्तानी ज़बान
प्रकाशन की अवधि	: त्रैमासिक
प्रकाशन की भाषा	: हिन्दी
प्रकाशक व मुद्रक का नाम	: श्री फ़िरोज़ पैच
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: ट्रस्टी व मानद सचिव, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा महात्मा गाँधी मेमोरियल बिल्डिंग, 7 नेताजी सुभाष मार्ग, मुंबई -400002
संपादक का नाम	: डॉ॰ सुशीला गुप्ता
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: विशेष कार्य अधिकारी, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा महात्मा गाँधी मेमोरियल बिल्डिंग, 7 नेताजी सुभाष मार्ग, मुंबई -400002
मुद्रण का स्थान	: मौज प्रकाशन गृह, गोरेगाँवकर लेन, खटाववाड़ी, गिरगाँव, मुंबई -400004
स्वामित्व	: हिन्दुस्तानी प्रचार सभा महात्मा गाँधी मेमोरियल बिल्डिंग, 7, नेताजी सुभाष मार्ग, मुंबई -400002

मैं फ़िरोज़ पैच घोषणा करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी अधिक-से-अधिक जानकारी और विश्वास के अनुसार सही है।

हस्ताक्षर
फ़िरोज़ पैच
ट्रस्टी व मानद सचिव, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

आलेख

हिन्दी के प्रथम आचार्य : पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी

राजेन्द्र वर्मा

कथा-सम्राट प्रेमचन्द की बहुचर्चित कहानी 'पंच परमेश्वर' से भला कौन परिचित नहीं! यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि इस कहानी का शीर्षक हिन्दी साहित्य के निर्माताओं के प्रमुख गद्यकार तथा 'सरस्वती' के यशस्वी संपादक पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी (09.05.1864 - 21.12.1938) ने सुझाया था और उसे 'सरस्वती' में प्रकाशित भी किया था। 'सरस्वती' के माध्यम से प्रेमचन्द, प्रसाद, निराला, मैथिलीशरण गुप्त जैसे अनेक रचनाकारों की कालजयी रचनाओं को हिन्दी पाठकों तक सबसे पहले पहुँचाने का महत्त्वपूर्ण कार्य उन्होंने ही किया है।

हिन्दी साहित्य में द्विवेदी जी का उल्लेख प्राय: सरस्वती के सम्पादक अथवा एक निबन्धकार के रूप में ही होता है, जबकि उन्होंने कविताएँ, जीवनियाँ, आलोचना, ऐतिहासिक और पुरातात्विक साहित्य का भी विपुल सृजन किया है। 'सरस्वती' में उन्होंने सुष्ठु सम्पादन के साथ-साथ विविध विषयों पर स्तम्भ-लेखन भी किया है। हिन्दी के अतिरिक्त वे संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, बांग्ला, गुजराती भाषाओं के ज्ञाता थे। इन भाषाओं की अनेक कृतियों का उन्होंने अनुवाद किया। गंगा लहरी, रघुवंश, भामिनी विलास, कुमार सम्भव, मेघदूत, वेणी संहार आदि उनकी संस्कृत से अनूदित रचनाएँ हैं। उनकी हिन्दी महाभारत बांग्ला से अनूदित है। हिन्दी-आलोचना के क्षेत्र में भी उन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। नैषध चरित-चर्चा, कालिदास की निरंकुशता, हिन्दी रीडर की आलोचना आदि उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, भूगोल, धर्म, विज्ञान और टक्नालाजी जैसे विषयों का सतत अध्ययन कर उन्होंने इन विषयों पर साधिकार लेखनी चलायी और शताधिक लेखकों को इस दिशा में लिखने हेतु प्रेरित किया और उनके लेखों को 'सरस्वती' में प्रकाशित कर पाठकों तक पहुँचाया। यह अनुपमेय है।

प्रकाशन : गीत, ग़ज़ल, दोहा, हाइकु, लघुकथा, व्यंग्य व निबंध विधाओं में सोलह पुस्तकें प्रकाशित। पुरस्कार : उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान तथा अन्य अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित और पुरस्कृत।

तत्कालीन उदीयमान हिन्दी सेवियों को व्यापक फलक प्रदान करने वाली 'सरस्वती' के सम्पादन से द्विवेदीजी वर्ष 1903 से 1920 तक लगभग सत्रह वर्षों तक सम्बद्ध रहे। अपने सम्पादकत्व में उन्होंने हिन्दी भाषा को जो संस्कार दिये, उससे ही वह आज अपनी सक्षमता, सामर्थ्य एवं ऊर्जस्विता के साथ विकासशील है। इस प्रक्रिया में उन्होंने उस समय के कवियों और लेखकों को भाषा के साथ-साथ विषय-चुनाव में मार्गदर्शन भी किया।

उन्होंने सिद्धान्तों से कभी समझौता नहीं किया, फलत: तत्कालीन हिन्दी साहित्य के दिग्गजों का विरोध भी उन्हें झेलना पड़ा। पर वे हार मानने वाले जीव न थे। दिन-रात एक कर उन्होंने नये रचनाकारों का एक दल बनाया, जो उनके संकेत मात्र पर हिन्दी की प्रसिद्धि के लिए कुछ भी करने को तैयार रहता था। द्विवेदीजी ने इस दल के सदस्यों से विविधवर्णी रचनाएँ लिखवायीं

और उन्हें सरस्वती में छापा। इनमें से कुछ प्रमुख नाम हैं– अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, कामता प्रसाद गुरु, बनारसीदास चतुर्वेदी आदि। जयशंकर प्रसाद, महादेवी, सुमित्रानन्दन पन्त, हरिवंशराय बच्चन, सुभद्राकुमारी चौहान आदि की रचनाएँ 'सरस्वती' में प्रकाशित हो गौरवान्वित हुईं।

द्विवेदीजी सम्पादन-विषयक अपने सिद्धान्तों के पक्के थे। सम्पादकत्व के अपने प्रारम्भिक काल ही में उन्होंने विषय-चुनाव से लेकर भाषा की सम्प्रेषणीयता तक के मामले में सजगता से काम लेना प्रारम्भ कर दिया। प्रत्येक वाक्य के एक-एक शब्द पर ध्यान देने लगे– वह चाहे काव्य की पंक्ति हो, या गद्य की। वे व्याकरणसम्मत हिन्दी के समर्थक थे। श्रीधर पाठक को लिखे उनके एक पत्र के अंश यहाँ उद्धृत हैं जो उनके व्याकरण सम्बन्धी विचारों को स्पष्ट करते हैं–

"बोलने में व्याकरण के नियमों का यदि अनुसरण न किया जाए तो विशेष आक्षेप की बात नहीं। पर लिखने में ऐसा होना अच्छा नहीं। संस्कृत क्यों अब तक निर्दोष बनी है? उसकी रचना व्याकरण के अनुसार होती है, इसलिए। पालि और प्राकृत भाषाएँ क्यों लोप हो गयीं? उनका व्याकरण निर्दोष नहीं।"

द्विवेदीजी उत्कृष्ठ भावोंवाली चिन्तनप्रधान काव्य-रचना को ही प्रकाशन-योग्य समझते थे। रचना प्रकाशन-योग्य न होने पर वे लेखक या कवि को उद्‌बोधक पत्र सहित रचना लौटाते थे अथवा उसमें परिश्रमपूर्वक संशोधन कर उसे प्रकाशित करते थे। कभी-कभी वे रचनाकारों को फटकार भी देते थे। मैथिलीशरण गुप्त जी ने 'सरस्वती' में प्रकाशनार्थ एक कविता भेजी। उसके बारे में उन्होंने पत्र में लिखा–

"हम लोग सिद्ध कवि नहीं। बहुत परिश्रम और विचारपूर्वक लिखने से हमारे पद्य पढ़ने योग्य बन पाते हैं। आप दो बातों में एक भी नहीं करना चाहते। कुछ भी लिखकर उसे छपा लेना ही आपका उद्‌देश्य जान पड़ता है। आपने 'क्रोधाष्टक' थोड़े ही समय में लिखा होगा, परन्तु उसे ठीक करने में हमें चार घंटे लगे।"

संपादन के मामले में वे किसी की न सुनते थे और न ही उन्हें कोई अपनी धौंस में ले सकता था। अपनी कड़ी सम्पादकीय दृष्टि के कारण उन्होंने निराला की जूही की कली को 'सरस्वती' में छापने से इनकार कर दिया था। हालाँकि बाद में वह छपी। द्विवेदीजी के इस रूप को लेकर तत्कालीन प्रतिष्ठित साहित्यकारों में क्षुब्धता आ गयी और उन्होंने 'सरस्वती' को अपनी रचनाएँ भेजनी बंद कर दीं। डॉ॰ श्यामसुन्दर दास अब तक 'सरस्वती' के सम्पादक थे। सम्भवत: वे द्विवेदीजी की भाँति सख़्त न थे। लेकिन उन्होंने हार न मानी और इसे एक चुनौती के रूप में स्वीकार कर उसका रास्ता निकाला। वर्ष 1903 से 1905 के मध्य 'सरस्वती' के 36 अंक छपे, जिनमें 74 लेख प्रकाशित हुए। आश्चर्य की बात है कि इन 74 लेखों में से 55 लेख स्वयं द्विवेदीजी के थे।

"बोलने में व्याकरण के नियमों का यदि अनुसरण न किया जाए तो विशेष आक्षेप की बात नहीं। पर लिखने में ऐसा होना अच्छा नहीं। संस्कृत क्यों अब तक निर्दोष बनी है? उसकी रचना व्याकरण के अनुसार होती है, इसलिए। पालि और प्राकृत भाषाएँ क्यों लोप हो गयीं? उनका व्याकरण निर्दोष नहीं।"

'सरस्वती' के सम्पादक के रूप में उनका चयन कैसे हुआ, इसका बड़ा दिलचस्प किस्सा है– आपने चिन्तामणि घोष जी का नाम सुना ही होगा। वे सरस्वती के प्रकाशक थे। सरकारी स्कूलों के लिए चिन्तामणि जी ने एक पुस्तक प्रस्तुत की, जो सरकार द्वारा स्कूलों के लिए स्वीकृत भी हो गयी। इसमें अनेक अशुद्धियाँ थीं। द्विवेदीजी को यह स्कूली पुस्तक कहीं से मिल गयी। बड़ी निडरता से उन्होंने इसकी आलोचना की और उसे शिक्षा-विभाग में भेज दिया। उसकी एक प्रति चिन्तामणि घोष को भेजी। आलोचना को भेजने के बाद

द्विवेदीजी को चिन्ता हुई कि सरकार और चिन्तामणिजी, दोनों ही व्यर्थ नाराज़ होंगे, लेकिन होनी कुछ और थी। द्विवेदीजी की असाधारण निडरता और आलोचना का सम्मान करते हुए पारखी चिन्तामणिजी ने द्विवेदीजी को 'सरस्वती' के सम्पादन का न्योता दिया। ...द्विवेदीजी उस समय रेलवे की नौकरी छोड़ चुके थे। हिन्दी के सेवक को हिन्दी-सेवा का अनुपम अवसर मिल रहा था। वह उसे कैसे जाने देता? उन्होंने सम्पादक बनना स्वीकार कर लिया।

द्विवेदीजी के निबन्धों से तो हम सभी परिचित हैं, पर उन्होंने काव्य-सृजन भी किया है– यह हममें से शायद कुछ ही जानते होंगे। उनकी दृष्टि में काव्य क्या है? उनकी निम्नलिखित पंक्तियाँ देखने से ज्ञात होता है कि उन्होंने काव्य को अत्यन्त गहाराई से जाँचा-परखा और जाना है, तभी उसे परिभाषित किया है–

सुरम्यता ही कमनीय क्रान्ति है,
अमूल्य आत्मा रस है मनोहरे।
शरीर तेरा शब्द मात्र है,
नितान्त निष्कर्ष यही, यही यही।

संस्कृत काव्य का गहन अध्ययन कर उन्होंने उसकी कई कृतियों का हिन्दी में पद्यानुवाद प्रस्तुत किया। बाद में हिन्दी में मौलिक सृजन भी किया। उनकी संस्कृत की कृतियों के पद्यानुवाद है– 1. कवि पुष्पदन्त कृत श्रीमहिम्नस्तोत्र 2. जयदेव की गीतगोविन्द 3. भर्तृहरि की वैराग्यशतक 4. उन्हीं की शृंगारशतक 5. कालिदास की ऋतुसंहार 6. उन्हीं की कुमारसंभव तथा 7. सुप्रसिद्ध कवि रत्नाकर की गंगा-लहरी।

'गीत गोविन्द' का संक्षिप्त भावानुवाद 'विहार वाटिका' नाम से किया गया है। यह ब्रजभाषा और परम्परागत छन्दों में है। एक छन्द देखिए–

कीजिए सनाथ नाथ नायिका अनाथ जानि।
अंजु मंजु कंज गंज मैं न दीन हीन मानि।।
हौं कहौ करौ कहा अहै महा मलीन मन्द।
सुन्दरी उठाय जाय देहि तोष नंदन नन्द।।

ऋतु तरंगिनी कालिदास के ऋतुसंहार के भावों का काव्यानुवाद है। इसमें खड़ी बोली में संस्कृत के वसन्ततिलका, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा आदि छन्दों का मनोहारी प्रयोग है। इन्द्रवज्रा का एक छन्द द्रष्टव्य है-

सुकुसुम द्रुम जाला कुन्दमाला विशाला।
पिक मधुप रसाला माहिनी मूर्तिबाला।।
ऋतुपति सहकारी और जेते बिहारी।
रसिकन मनिहारी हू जियो सौख्यकारी।।

गंगालहरी के मनोहारी छन्दों में से एक का उद्धरण यहाँ अप्रासंगिक न होगा–

आभूषित तनु विनाशक श्रेष्ठ गंगा।
शीघ्र कृतामित मनुष्य क्लेष गंगा।।
सौन्दर्यमान अति तुंग चलत तरंगी।
मो अंग सो करहि पावन मातु गंगा।।

जहाँ तक उनकी मौलिक काव्य-कृतियों का प्रश्न है, निम्नलिखित छः कृतियाँ प्रकाश में आती हैं - 1. देवी स्तुति शतक 2. नागरी 3. काव्य-मंजूषा 4. कविता-कलाप 5. सुमन तथा 6. द्विवेदी काव्य-माला।

देवी स्तुति शतक में जैसा नाम से स्पष्ट है, देवी चण्डी की स्तुति की गयी है। संस्कृत के स्तोत्रम् से प्रेरित होकर कवि ने वसन्ततिलका छन्द में सौ सुन्दर पद रचे हैं।

नागरी में उनकी मात्र चार कविताएँ संगृहीत हैं– नागरी! तेरी यह दशा!!, प्रार्थना, नागरी का विनयपत्र और कृतज्ञता प्रकाश।

काव्य-मंजूषा दो खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड में कवि की 1857 से लेकर 1902 तक की सभी काव्य-रचनाएँ दी गयी हैं। द्वितीय खण्ड में 1903 के बाद की 33 कविताएँ संगृहीत हैं।

कविता कलाप में वे कविताएँ संकलित हैं, जो सरस्वती में प्रकाशित चित्रों पर आधारित हैं। इसमें द्विवेदीजी की केवल सात कविताएँ हैं। इस संकलन के अन्य कवि हैं– राय देवीप्रसाद 'पूर्ण', नाथूराम शर्मा 'शंकर', कामताप्रसाद 'गुरु' और मैथिलीशरण गुप्त।

अत: इस कृति को सम्पादित कृति कहना अधिक उपयुक्त होगा।

सुमन ऐसा काव्य-संग्रह है, जिसमें पूर्व प्रकाशित कविताओं को स्थान दिया गया है। यद्यपि कुछेक में अपेक्षित संशोधन किया गया है। एक प्रकार से यह काव्य-मंजूषा का ही संशोधित रूप है।

द्विवेदी काव्य-माला में कवि की समस्त काव्य-रचनाओं को स्थान दिया गया है, जिसका प्रकाशन कवि की स्मृति में किया गया है। इस काव्य-ग्रंथ में से कुछ रचनाएँ प्रस्तुत हैं, जो कवि के सामयिक विषय-चुनाव और उसकी चुटीली भाषा-शैली का प्रतिनिधित्व करती हैं-

साहित्य-जगत में तिकड़मबाजों की कमी कभी नहीं रही। द्विवदी के समय भी वे सक्रिय थे और आज भी हैं। ग्रन्थकार लक्षण नामक उनकी व्यंग्यप्रधान कविता जैसे अभी-अभी लिखी गयी हो–

"शब्द-शास्त्र है किसका नाम?
इस झगड़े से जिन्हें न काम;

नहीं विराम चिह्न तक रखना जिन लोगों को आता है,

इधर-उधर से जोड़-बटोर,
लिखते हैं जो तोड़-मरोड़

इस प्रदेश में वे ही पूरे ग्रन्थकार कहलाते हैं।"

सच्चा कवि उन्नत समाजोन्मुख होता है। द्विवेदी जी ने जहाँ 'सरस्वती' का सम्पादन करते हुए तत्कालीन कविता को भक्ति और शृंगार रसों से अलग हटाकर सामयिक विषयों से अनुप्राणित किया था, वहीं वे स्वयं ऐसी रचनाएँ किया करते थे। 'स्वदेशी वस्त्र का स्वीकार' उनकी ऐसी ही कविता थी। प्रस्तुत हैं उसमें से चार पंक्तियाँ–

महा अन्याय हा! हा! हो रहा है।
कहें क्या, कुछ नहीं जाता कहा है!
मरें, असगर, बिसेसर और काली,
भरें घर ग्राण्ट, ग्राहम और राली।

सरस्वती के एक अंक में उन्होंने अपनी 'विधि-विडम्बना' कविता प्रकाशित की थी, जो उस समय बहुत कड़ी आलोचना का शिकार हुई। लेकिन द्विवेदीजी ने सत्य के आगे किसी को महत्त्व नहीं दिया और न किसी की परवाह की। अपने प्रगतिशील विचारों के कारण उन्होंने ब्रह्मा द्वारा रचित सृष्टि के दोषों का उल्लेख कर नयी चेतना का प्रसार किया। कुछ पंक्तियों का आस्वादन कीजिए–

दुराचारियों को तू प्राय: धर्माचार्य बनाता है;
कुत्सित-कर्म्म-कुशल कुटिलों में अक्षरज्ञ उपजाता है।
मूर्ख धनी, विद्वज्जन निर्धन, उल्टा सभी प्रकार!
तेरी चतुराई को ब्रह्मा! बार-बार धिक्कार!!
शुद्धाशुद्ध शब्द तक का है जिनको नहीं विचार,
लिखवाता है उनके कर से नये-नये अख़बार।

उनकी 'बलीवर्द' कविता के उल्लेख के बिना यह लेख अधूरा ही रहेगा, क्योंकि यह कविता बैल पर आधारित है। बैल चौपाया होता है, लेकिन उनकी कविता में वह दोपाया भी है। आल्हा शैली में निबद्ध यह व्यंग्य-रचना चाह कर भी भुलायी नहीं जा सकती। आपको ज्ञात ही है, पहले चरण में सोलह तथा दूसरे चरण में पन्द्रह मात्राएँ धारण करने वाला यह छन्द हिन्दी जगत में चित्रण की सजीवता के लिए सुविख्यात है–

धनी पुरुष गद्दी के ऊपर, धोती भर कटि से लिपटाय;
तुन्दिल तनु पर हाथ फेरता, रहता है घमण्ड में आय।
वृषभराज! तुम भी निज थल पर झूल पीठ से लटकाय;
पूँछ फिराते हो शरीर पर बैठे ही बैठे सुख पाय।

व्यक्तिगत जीवन में भी द्विवेदीजी वैज्ञानिक विचारों के रहे। किशोरावस्था में जब वे दौलतपुर गाँव के पास जहाँ उनका जन्म हुआ था, कहीं जा रहे थे कि तभी अछूत कहे जाने वाले एक आदमी के पैर में साँप ने काट लिया। उन्होंने झट अपना जनेउ उतारकर उसके पैर को कसकर बाँध दिया, ताकि विष न फैलने पाये। प्रथम उपचार और आवश्यक औषधि मिलने से पीड़ित बच गया, अन्यथा वह काल का ग्रास बन जाता। यह बात जब उनके घरवालों को पता चली तो उन्होंने द्विवेदीजी को खूब डाँटा और जनेऊ के अपवित्र हो जाने

शेष पृष्ठ 27 पर...

आलेख

प्रकृति का एक अनमोल रत्न है 'मेघालय'

डॉ० अकेलाभाई

डॉ० अकेलाभाई ने हिंदी के लेखन एवं प्रकाशन तथा नागरी लिपि के प्रचार-प्रसार के लिए पूर्वोत्तर हिंदी अकादमी की स्थापना की। अनेक रचनाएँ प्रख्यात पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। पूर्वोत्तर हिंदी अकादमी के सचिव (मानद) के रूप में राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक हिंदी-सम्मेलनों के सफल आयोजक। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा मौलिक लेखन के लिए भारतेन्दु हरिश्चंद्र पुरस्कार प्राप्ति के साथ-साथ 30 से अधिक प्रतिष्ठित सम्मान एवं पुरस्कारों से सम्मानित।

मेघालय पूर्वोत्तर भारत का एक छोटा-सा राज्य है। इनका गठन भारतीय संघ के इक्कीसवें राज्य के रूप में 21 जनवरी 1972 को असम से संयुक्त खासी, जयन्तिया तथा गारो हिल्स को मिलाकर स्वर्गीय कैप्टन विलियमसन ए० संगमा के नेतृत्व में किया गया। उस समय मेघालय में पाँच ज़िले थे, जबकि आज कुल सात ज़िले हैं, क्रमश: जयन्तिया हिल्स, ईस्ट खासी हिल्स, वेस्ट खासी हिल्स, ईस्ट गारो हिल्स, वेस्ट गारो हिल्स, साउथ गारो हिल्स और रिभोई। 1981 की जनगणना के अनुसार इस राज्य की कुल जनसंख्या 13,35,819 थी तथा 1991 की जनगणना के मुताबिक़ इसकी जनसंख्या 17,74,778 बताई गई है और 2001 की जनगणना के अनुसार मेघालय की जनसंख्या 23,06,069 है। अब 2011 की जनगणना के अनुसार मेघालय राज्य की जनसंख्या 29,64,007 पहुँच गई है। यह राज्य विश्व में सर्वाधिक वर्षा के लिए प्रसिद्ध है। अपने इस प्राकृतिक गुण के कारण ही इसे मेघालय नाम मिला। इस राज्य में मुख्य रूप से तीन जनजातियाँ निवास करती हैं– खासी, गारो और जयन्तिया। यहाँ की राजभाषा अंग्रेज़ी है तथा मातृभाषा हर जनजाति के लिए अलग-अलग है।

भाषा के आधार पर मेघालय को असम से अलग किया गया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद पूरा पूर्वांचल एक ही राज्य था, जिसकी राजधानी शिलांग थी। पूर्वोत्तर में भाषाओं की विभिन्नता के कारण छोटे-छोटे राज्य बनते गए और भारत का यह पूर्वोत्तर क्षेत्र क्रमश: असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिज़ोरम, त्रिपुरा और नगालैंड प्रांतों में विभक्त होकर 'सेवन सिस्टर्स' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। मेघालय में अधिक वर्षा होने के कारण ही राज्य का नाम मेघालय पड़ा। शरद ऋतु का आनंद यहाँ साल-भर लिया जा सकता है। यहाँ का तापमान गर्मियों में अधिकतम 23 डि०से० रहता है, जबकि सर्दी के मौसम में यहाँ का न्यूनतम तापमान 3 डि०से० हो जाता है।

मेघालय की राजधानी शिलांग: शिलांग भारत का एक प्रमुख दर्शनीय स्थल है। समुद्र तल से 1496 मीटर अर्थात् 5 हज़ार फुट की ऊँचाई पर बसा यह शहर पूर्वोत्तर भारत का 'स्कॉटलैण्ड' कहलाता है। पर्यटन की दृष्टि से इस शहर का अपना एक अलग महत्त्व है। घने देवदार के वृक्षों की छाया में बसा यह शहर पर्यटकों को आनंद और मनोरंजन देता है। यहाँ की पहाड़ियाँ, झरने, सरोवर और इनके साथ ही यहाँ

की संस्कृति, सभ्यता व परंपरा भारत की विभिन्नता में एकता का परिचय देती है। इसकी ख़ूबसूरती से प्रभावित होकर पूर्व के ब्रिटिश शासकों ने इसे 'मिनी लंदन' की उपाधि दी है।

यह शहर सैकड़ों वर्ष पूर्व एक पहाड़ी स्थान था। सन् 1864 में इसे शहर का दर्जा मिला। इसके बाद 1874 में इसे असम की राजधानी बनाया गया। मेघालय को स्वतंत्र राज्य का दर्जा मिलने के बाद 21 जनवरी, 1972 को इसे मेघालय की राजधानी बना दिया गया।

दर्शनीय स्थल:

वार्ड्स लेक- शिलांग में पुलिस बाज़ार के निकट एक कृत्रिम सरोवर है। इसे मनोरंजन के लिए देखा जा सकता है। इस सरोवर में नौकायन की सुविधा भी है, जिसका शुल्क लिया जाता है। प्रवेश का समय सबेरे 10 बजे से शाम 5 बजे तक है। मंगलवार को अवकाश रहता है।

लेडी हैदरी पार्क- सिविल अस्पताल के पास लेडी हैदरी पार्क है। इसमें देखने के लिए पशु-पक्षियों के अतिरिक्त बच्चों के खेलने के लिए साधन भी हैं। प्रवेश समय सवेरे 10 बजे से शाम 6बजे तक का है। प्रवेश-शुल्क लगता है। सोमवार को अवकाश रहता है।

शिलांग पीक- शिलांग पीक 10 किलोमिटर की दूरी पर इस शहर का सबसे ऊँचा स्थान है, जिसे शिलांग पीक कहा जाता है। इसकी ऊँचाई समुद्र तल से 1960 मीटर है। इस स्थान पर आप बस या टैक्सी से जा सकते हैं। इसकी चोटी से सारे शहर का दृश्य बड़ा मनोरम लगता है।

जल प्रपात- शिलांग तथा इसके आसपास कई जल प्रपात हैं, जिन्हें देखकर पर्यटक मोहित हुए बिना नहीं रह पाते। विडेन, विशॉप, एलिफेंट, स्वीट, सेवेन सिस्टर्स, कालिकाई, स्प्रैड इगल आदि प्रपात देखने योग्य हैं।

जैविक उद्यान- वार्ड्स लेक के समीप एक जैविक उद्यान है। विभिन्न तरह के पेड़-पौधे वनस्पति शास्त्र के छात्र-छात्राओं के लिए ज्ञानवर्द्धक हैं।

राज्य संग्रहालय- मेघालय सचिवालय के समीप पुलिस बाज़ार से एक किलोमीटर की दूरी पर राज्य संग्रहालय है। इसमें राज्य की विभिन्न जनजातियों की परंपराओं को देख सकते हैं।

ज़िला पुस्तकालय: इसी परिसर में ज़िला पुस्तकालय, सेमिनार हॉल और प्रेक्षागृह हैं। परिसर के अंदर ही इंदिरा गाँधी और सोसो थाम की प्रतिमाएँ स्थापित की गई हैं। स्वतंत्रता-सेनानी उतिरोत सिंह का स्मारक भी इसी परिसर में बनाया गया है।

शिलांग गोल्फ कोर्स- शिलांग के पोलो बाज़ार के निकट भारत का मशहूर गोल्फ कोर्स है।

मोसिनराम- शिलांग से 55 किलोमीटर की दूरी पर एक ऐतिहासिक गुफा है, जिसके बाहर पत्थर का प्राकृतिक शिवलिंग है, जो लगभग 6 फुट लंबा और 3 फुट मोटा है। इस शिवलिंग के ऊपर हमेशा पानी गिरता रहता है। गरमियों में भी यह झरना सूखता नहीं है। इन गुफाओं को देखने से ऐसा लगता है कि यहाँ पहले लोग रहते थे।

चेरापूंजी- शिलांग से 56 किलोमिटर की दूरी पर वर्षा के लिए मशहूर स्थान चेरापूंजी है। यह स्थान समुद्रतल से 1300 मीटर की ऊँचाई पर है। इस स्थान पर गुफाएँ और झरने देखने योग्य हैं।

उमियम लेक- गुवाहाटी-शिलांग मार्ग पर स्थित उमियम लेक शिलांग से 19 किलोमीटर की दूरी पर है। यहाँ नौकायन की सुविधा है। वनभोज के लिए यह स्थान अत्यंत रमणीय है।

कैसे और कब आयें- शिलांग अक्टूबर से मई महीने के बीच आप कभी भी आ सकते हैं। यह समय भ्रमण के लिए सुविधाजनक होगा। आप जब भी आएँ, साथ

में गरम कपड़े अवश्य लाएँ। होटलों में रहने की सुविधा के साथ-साथ ओढ़ने-बिछाने की भी सुविधा मिलेगी। असम की राजधानी गुवाहाटी आप सड़क, रेल या हवाई मार्ग से आ सकते हैं। गुवाहाटी से शिलांग की दूरी लगभग 100 किलोमिटर है, जिसे आप बस, टाटा सुमो या टैक्सी से तय कर सकते हैं

मेघालय की जनजातियाँ: मेघालय में प्रमुख रूप से तीन जनजातियाँ निवास करती हैं, जो यहाँ की मूल निवासी मानी जाती हैं - क्रमशः खासी, जयन्तिया और गारो। इनके अतिरिक्त अन्य जनजातियाँ जैसे मिजो, लुसाई, नगा, कुकी आदि भी इस राज्य में नौकरी या व्यवसाय के लिए निवास करती हैं। यह राज्य एक जनजातीय बहुल राज्य है। अन्य जातियों में बंगाली, नेपाली, पंजाबी, भूटानी, बौद्ध, जैन, मारवाड़ी, बिहारी, मुसलमान आदि भी हैं। इन जनजातियों के नाम के आधार पर मेघालय की पहाड़ियों का नामकरण हुआ है। ये जनजातियाँ मंगोलियन वंश से संबंधित हैं। ऐसा विश्वास है कि खासी जनजातियों की उत्पत्ति दक्षिण एशिया, जयन्तिया मंगोलियन वंश से तथा गारो जनजातियों की उत्पत्ति तिब्बती वंश से हुई है।

वेशभूषा- खासी, गारो और जयन्तिया समुदाय के पुरुष घुटनों तक धोती, कुर्ता और कोट(बिना बाँह वाला) पहनते हैं। महिलाएँ 'जैनसेम' पहनती हैं, जो दो हिस्सों का कपड़ा होता है जो कंधे से पैर तक ढकने का काम करता है। इन पारंपरिक पोशाकों के अलावा आजकल लड़के-लड़कियाँ जींस के पैंट और जैकेट पहनने लगे हैं। मिडी और स्कार्ट-ब्लाउज का प्रचलन भी ख़ूब बढ़ा है। यहाँ की जनजातियाँ पान और कच्ची सुपारी, जिसे यहाँ पर 'क्वाय' कहा जाता है ज़्यादा पसंद करती हैं।

कृषि- मेघालय में धान की खेती ख़ूब होती है। इसके अलावा आलू, अनन्नास, केले, संतरे आदि भी भरपूर मात्रा में उपजाए जाते हैं, लेकिन इनका मूल्य देश के भागों की तुलना में बहुत अधिक है।

प्रिय खेल: इस राज्य का पारंपरिक खेल 'तीर' है, जो आज हज़ारों लोगों की रोज़ी रोटी का साधन बना हुआ है और सरकारी आय का उत्तम स्रोत भी। वैसे इस राज्य के लोग फुटबॉल को भी पसंद करते हैं। यहाँ की ऐसी मान्यता है कि खासी महिला के, जिसका जन्म इसी धरती पर सबसे पहले हुआ था, दो पुत्र थे। खासी महिला ने अपने दोनों पुत्रों को तीर चलाना सिखाया था।

धर्म: मेघालय की अधिकांश जनजातियाँ ईसाई धर्म को मानती हैं। हर रविवार को नियमित रूप से गिरिजाघर जाती हैं। किंतु कुछ परिवार ऐसे भी हैं, जो गैर-ईसाई हैं और उन्हें 'सेंग खासी' कहा जाता है। मेघालय की राजभाषा अंग्रेज़ी है। जबकि यहाँ की जनजातियाँ अपनी-अपनी भाषाओं और बोलियों में बोलती हैं। व्यवसायिक केंद्रों पर हिंदी का प्रयोग होता है। जबकि शिक्षित वर्ग अंग्रेज़ी का प्रयोग करता है।

उत्सव: मेघालय में नववर्ष का उत्सव धूमधाम से मनाकर नए वर्ष का स्वागत किया जाता है। यहाँ की जनजातियों के लिए नववर्ष विशेष महत्त्व रखता है। लोग विभिन्न समूहों में 'वन-भोज' का आयोजन करते हैं।

मेघालय दिवस: यहाँ हर वर्ष 21 जनवरी के दिन मेघालय दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस अवसर पर राज्य के विभिन्न भागों में सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। हर वर्ष मेघालय वासियों को तीन पुरस्कार (सम्मान) प्रदान किए जाते हैं। ये तीनों सम्मान क्रमशः सामाजिक कार्य, कला एवं साहित्यिक कार्य तथा खेल-कूद में विशेष योगदान के लिए प्रदान किए जाते हैं। शिलांग में खासी संप्रदाय के लोग 'शद सुक मिनसिएम' अप्रैल माह में मनाते हैं। यह उत्सव भाईचारा, शांति और प्रेम का द्योतक है।

नंक्रेम नृत्य- खासी संप्रदाय के लोग मेघालय के 'स्मीत' नामक स्थान पर प्रत्येक वर्ष नवंबर माह में 'नंक्रेम नृत्य' आयोजन करते हैं। खासी जनजातियों

का महत्त्वपूर्ण और प्रमुख उत्सव है 'नंक्रेम नृत्य'। यह उत्सव पाँच दिनों तक हर्ष व उल्लास के साथ मनाया जाता है। यह स्थान शिलांग से 15 किलोमीटर की दूरी पर है।

बेडिंगख्लाम- जयन्तिया संप्रदाय का प्रमुख उत्सव 'बेडिंगख्लाम' है, जो जुलाई महीने में हर वर्ष बड़े ही धूमधाम से जोवाई में मनाया जाता है। यह उत्सव बुरी आत्माओं को दूर भगाने के लिए मनाया जाता है।

वान्गला- गारो जनजातियों का प्रमुख उत्सव 'वानाला' है। 'वान्गला नृत्य' हर वर्ष नवंबर महीने में मनाया जाता है। यह उत्सव एक सप्ताह तक चलता है।

प्रकृति का अनमोल रत्न मेघालय पूर्वोत्तर भारत का सबसे मनोरम प्रदेश है। इस राज्य की राजधानी शिलांग को अंग्रेज़ शासकों ने 'मिनी लंदन', 'स्काटलैण्ड', 'पूर्व का स्विट्ज़रलैण्ड' आदि नामों से विभूषित किया है। वास्तव में यह सैलानियो को अत्यंत आकर्षित करता है, क्योंकि इस प्रदेश में अनेक जलप्रपात, उद्यान, संग्रहालय, पहाड़, गुफाएँ आदि हैं, जिसे देख कर कोई भी सैलानी प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता। ईसाइयों के कई गिरिजाघर हैं, जो अत्यंत सुंदर वास्तु-कला का परिचय देते हैं। इसी तरह अन्य धार्मिक स्थलों की नक़्क़ाशी भी देखने लायक है। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि मेघालय राज्य प्रकृति का एक अनमोल रत्न है।

संपर्क : सचिव, पूर्वोत्तर हिंदी अकादमी
रिन्जा, शिलांग -793006 (मेघालय)

पृष्ठ 23 का शेषांश...

के कारण उसे तुरन्त बदलने के लिए कहा। इस पर द्विवेदीजी ने कहा–"जनेऊ तो किसी के प्राण बचाकर पवित्र हो गया है। मैं तो इसे कदापि नहीं बदलूँगा।"

उनके जीवन की एक और उल्लेखनीय घटना उन्हें लाखों-करोड़ों लोगों से पृथक बनाती है। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' का रट्टा लगाने वाले हमारे बीच अनेक विद्वान मिल जायेंगे, लेकिन नारी को उसका वास्तविक स्थान दिलाने वाला कोई विरला ही मिलेगा। द्विवदेजी की दृष्टि में उनकी पत्नी का तप, त्याग, सेवा और पतिपरायणता किसी देवी जैसा था। वे स्वयं उनसे अत्यधिक प्रेम करते थे। उनके निधन के बाद उनकी प्रतिमा को अपने पूर्वजों के मन्दिर में लक्ष्मी और सरस्वती की मूर्तियों के मध्य में स्थापित कर दिया। इससे ख़ूब हो-हल्ला मचा। द्विवेदीजी की भर्त्सना हुई, लेकिन उन्होंने किसी की कोई परवाह न की। यह 'स्मृति-मन्दिर' आज भी उनके पैतृक गाँव में दर्शनीय है। द्विवेदीजी का व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों ही विलक्षण हैं। उनके सतत स्वाध्याय, वैविध्यपूर्ण लेखन, दीर्घकालीन संपादन तथा हिन्दी वांग्मय को समृद्ध करने के उनके उद्यम को दृष्टिगत करते हुए उनकी 'सरस्वती' सेवावधि को सम्मानपूर्ण विधि से 'द्विवेदी युग' से अभिहित किया गया, जो इस विभूति की सर्वसम्मति प्रणति का प्रमाण है। इस महान व्यक्तित्व का सार्वजनिक अभिनन्दन मई 1933 में उनके जन्मदिवस पर उनकी कर्मभूमि इलाहाबाद में त्रिदिवसीय 'द्विवेदी मेला' आयोजित कर किया गया, जिसमें हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने भी उन्हें अपनी सर्वोच्च मानद उपाधि, साहित्य वाचस्पति प्रदान कर अपना गौरव बढ़ाया। तत्पश्चात् नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने भी इस युग-प्रवर्तक मनीषी का बृहद स्तर पर अभिन्दन कर हिन्दी के प्रथम आचार्य की उपाधि से अलंकृत किया। इस ऐतिहासिक उपाधि के साथ 'सभा' ने उन्हें अभूतपूर्व अभिनन्दन ग्रन्थ भी भेंट किया। हिन्दी साहित्य ऐसे साहित्य-मनीषी का सदैव ऋणी रहेगा।

संपर्क : 3/29, विकास नगर
लखनऊ - 226022

व्यंग्य-लेख

जीवेत् शरदः शतम्

सीताराम गुप्ता

प्रकाशित कृतियाँ : मेटामॉर्फ़ोसिस (कविता संग्रह)। मन की शक्ति द्वारा उपचार- विषयक पुस्तक 'मन द्वारा उपचार'। नवभारत टाइम्स में 'द सीकिंग ट्री', आनंद योग, कल्पवृक्ष, के अंतर्गत निरंतर स्तम्भ-लेखन। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में साहित्य तथा भाषा विषयक लेख नियमित रूप से प्रकाशित।

मेरे एक मित्र हैं रामास्वामी, जो अपनी युवावस्था से ही अत्यंत आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी रहे। अपने व्यक्तित्व को आकर्षक बनाए रखने के लिए उन्होंने हमेशा अपने स्वास्थ्य का भी पूरा ध्यान रखा। स्वास्थ्य को अच्छा बनाए रखने के लिए कोई कसर उन्होंने नहीं रख छोड़ी। लगता था, उन्हें इस बात का भी डर था कि शादी के बाद उनके आकर्षक व्यक्तित्व और स्वास्थ्य में कुछ कमी आ जाएगी या कम-से-कम उनकी स्वतंत्रता और स्वच्छंदता में अवश्य बाधा उत्पन्न होगी, इसलिए शादी के विचार को लगातार टालते रहे और इसी टालमटोल और उधेड़बुन में एक दिन नौकरी से रिटायर हो गए।

रामास्वामी नौकरी से ज़रूर रिटायर हो गए, पर युवावस्था वाली उनकी ठसक नहीं गई। अपने आप को किसी भी तरह चालीस-पैंतालीस से ज़्यादा का मानने को तैयार नहीं थे। हालाँकि साठ साल के नहीं लगते थे, पर चालीस-पैंतालीस के भी बिल्कुल नहीं लगते थे। जब भी कोई उनसे पूछता कि आप अभी से रिटायर कैसे हो गए? अभी तो बहुत कम उम्र लगती है आपकी या पूछता कि क्या वी०आर०एस० ले ली है तो उन्हें बेहद प्रसन्नता होती। उनकी छाती गर्व से फूल जाती और कमर तनकर एकदम सीधी हो जाती। कुछ लोग उनका मन रखने के लिए उनका उत्साह बढ़ाने के लिए भी उनसे इस प्रकार की बातें करते थे। लेकिन ऐसी बातों से उन्हें वाक़ई खुशी मिलती थी और ऐसी बातें करने वालों को वे अपना मित्र बनाकर ही छोड़ते थे। मित्रों का वे बड़ा ख़याल भी रखते थे। ख़ूब दावतें और उपहार देते थे। कुछ लोग इसलिए भी उनसे मित्रता की इच्छा रखते थे और उनकी ख़ूब प्रशंसा करते थे। इस प्रकार रामास्वामी के मित्रों की संख्या बहुत अधिक थी, जिनमें से मैं भी एक था। 'था' नहीं 'हूँ' कहना अधिक उचित होगा, क्योंकि आज भी रामास्वामी से मेरी जो घनिष्ठता है, उतनी अन्य कम ही मित्रों से है।

रिटायरमेंट के चार-पाँच साल बाद की बात है। एक दिन रामास्वामी का फ़ोन आया और उन्होंने मुझसे कहा, ''पुरुषोत्तम लाल, आज शाम को एक सेमिनार में चलना है।'' मैं बाहर जाने के मूड में नहीं था। लेकिन रामास्वामी के यह कहने पर कि सेमिनार के बाद डिनर इकट्ठे ही करेंगे, मैंने साथ चलने के लिए हाँ कर दी, क्योंकि रामास्वामी हमेशा अच्छे होटल में ही खाना खिलाते हैं। हम दोनों सेमिनार में पहुँचे। ''अपने व्यक्तित्व को कैसे आकर्षक बनाएँ?'' इस विषय पर एक परिचयात्मक सेमिनार था। मुख्य सेमिनार एक सप्ताह का था, जो बाद में होना था। एक कमसिन तथा अत्यंत सुंदर महिला आगंतुकों को संबोधित कर रही थी। उसका व्यक्तित्व भी कम आकर्षक नहीं था और सभी लोग अत्यंत उत्साहित होकर उसकी बातों को

सुन रहे थे। बातें समझ में आ रही थीं या नहीं पता नहीं, लेकिन लोगों के चेहरों से पता चल रहा था कि उन्हें उसकी बातों में रस ज़रूर आ रहा था। ऐसे में रामास्वामी का अतिरिक्त उत्साहित हो जाना भी अस्वाभाविक नहीं था।

रामास्वामी को यही लग रहा था कि सारी चर्चा के केंद्र मे वे ही हैं और सारी वार्ता उनके आकर्षक व्यक्तित्व के विषय में ही हो रही है। उनकी आकर्षक व्यक्तित्व और अच्छे स्वास्थ्य वाली ठसक उभरने लगी। उनके चेहरे पर एक चमक आ गई। रामास्वामी चुस्ती से सीधे खड़े हो गए और अत्यंत आत्मविश्वास और शालीनता के साथ सेमिनार को संबोधित करने वाली महिला से पूछा, "मैडम, आपके हिसाब से मेरी उम्र कितनी होगी?", "आप इस उम्र में काफ़ी चुस्त-दुरुस्त लगते हैं," महिला ने उत्तर दिया।

रामास्वामी ने कुछ ज़ोर देकर फिर पूछा, "नहीं मैडम, ऐसे नहीं, सही उम्र का अंदाज़ा लगाकर बताइए।" महिला बेचारी काफ़ी झेंप सी गई। उसने सकुचाते हुए बस इतना ही कहा, "आप सत्तर से ज़्यादा के नहीं लगते।"

अब झेंपने की बारी रामास्वामी की थी। उनकी ठसक मिट्टी में मिल गई लगती थी। उस रात उन्होंने मुझे डिनर तो कराया, लेकिन टैक्सी-स्टैंड के पास सड़क के किनारे बने एक ढाबे में, जहाँ पर टैक्सी-स्टैंड की टैक्सियों के ड्राइवर खाना खाते थे।

उस रात की घटना के बाद लगता था, रामास्वामी काफ़ी आहत हुए थे। उन्हें अपने बारे में जो खुशफहमी थी, वह एक गुमान साबित हो गई थी। उनकी उम्र के बारे में कभी किसी ने ऐसी कठोर बात नहीं कही थी। एक युवा स्त्री के मुँह से तो वे कभी ऐसी बात सुनने की आशा नहीं करते थे। उन्हें लगा कि वे सचमुच युवा नहीं रहे। यह बात ठीक भी थी, लेकिन पैंसठ साल की उम्र में कोई सत्तर साल का कह दे तो वे कैसे स्वीकार करें? रामास्वामी को लगा कि उनका आकर्षण कम होता जा रहा है, लेकिन वे हार मानने वालों में नहीं थे। लगता था, उन्होंने इस निर्मम प्रहार को एक चुनौती के रूप में लिया था। वे उपरोक्त सेमिनार करना तो चाहते थे, पर उस स्त्री से सामना करने का साहस नहीं जुटा पा रहे थे, इसलिए चाहते हुए भी उस सेमिनार में नहीं गए। लेकिन इस घटना के बाद रामास्वामी अपने आकर्षक व्यक्तित्व तथा स्वास्थ्य के प्रति और अधिक सचेत हो गए थे।

रामास्वामी की सौ वर्ष तक जीने तथा पूर्ण रूप से स्वस्थ तथा आकर्षक बने रहने की उत्कट इच्छा ने एक बार फिर ज़ोर मारा। जो नुस्ख़े उन्होंने आज तक नहीं आज़माए थे, उन सभी नुस्ख़ों को आजमाने का फ़ैसला किया। नई-नई जानकारियाँ जुटाने में लग गए। सुबह जल्दी उठकर घूमने जाते। दौड़ लगाते। योगाभ्यास भी फिर से चालू कर दिया। दीर्घायु अथवा शतायु होने के लिए जो भी साहित्य मिलता, उसको पढ़ते तथा उस पर अमल करते। कुछ ही दिनों में किताबों और पत्र-पत्रिकाओं का ढेर लग गया। रामास्वामी के चेहरे पर भी आत्मविश्वास की अधिकता फिर से झलकने लगी।

एक दिन रामास्वामी ने मुझे अपने घर बुलाया और कहा, "पुरुषोत्तम, मैं तुमसे एक गंभीर विषय में सलाह लेना चाहता हूँ।" फिर उन्होंने मेरे सामने एक मैगज़ीन खोलकर रख दी। उस मैगज़ीन में एक लेख छपा था; जिसका शीर्षक था "दीर्घायु और उत्तम स्वास्थ्य के लिए ज़रूरी है शादी।" फिर रामास्वामी ने प्रश्नसूचक दृष्टि से मेरी ओर देखा। मैं ऊपर से तो गहन चिंतन की मुद्रा बनाए बैठा था, लेकिन मन में आ रहा था कि कह दूँ, "अभी आप की उम्र ही क्या है? अभी तो आप अस्सी बरस के भी नहीं हुए हैं। ऐसी क्या जल्दी है शादी करने की? वैसे आपकी मर्ज़ी!" मेरे अंदर मसख़रापन बढ़ता जा रहा था, लेकिन रामास्वामी की संजीदगी बढ़ती जा रही थी, क्योंकि बहरहाल उन्होंने सौ बरस तक जीने का फ़ैसला कर लिया था और वह भी उत्तम स्वास्थ्य के साथ।

संपर्क : ए०डी० -106 सी, पीतमपुरा
दिल्ली- 110034

कविता

कुछ छंद

बालकवि वैरागी

कई कविता-संग्रहों, कहानी-संग्रहों और उपन्यासकारों के रचनाकार। संसदीय राजभाषा समिति के पूर्व सदस्य, लोकसभा एवं राज्यसभा के पूर्व सांसद, विविध संस्थाओं द्वारा सम्मानित बालकवि बैरागी आज भी साहित्य-सृजन में सक्रिय हैं। उनकी रचनाओं पर विभिन्न विश्वविद्यालयों में पीएच०डी० हो चुकी है। कुछ रचनाएँ पाठ्यक्रम में भी पढ़ायी जा रही हैं।

मैं जला ऐसा जला, बस जलजला ही आ गया
इक लपट भर में ही, मैं पूरी अमावस खा गया
धर्म था मेरा निबाहा, यह धर्म का आदेश था
एक तीली के सहारे शुभ कर्म का आवेश था
भूलकर भी कभी मेरी कृपा मत मानिये
आत्माहुति ही सत्य है इस सत्य को पहचानिये।

X X X X X

यूँ अभी मत मानिये दीपावली कुछ दूर है
यह सोच ही संघर्ष की गति पर छिपा नासूर है
ज़िन्दगी में सामना जब भी अंधेरे से हो कहीं
बस समझ लो दीप का त्यौहार है आज ही और यहीं
इक दिया संघर्ष का फौरन जला दो शान से
पीढ़ियों को धन्य कर दो ज्योति के अवदान से।

X X X X X

रोशनी ख़ुद चाहती है आपके कुछ काम आये
आपके संघर्ष में उसका कहीं कुछ नाम आये
आप अपना सिर पकड़कर हारकर मत बैठिये
अपने मनोबल की गहन गहराइयों में पैठिये
उस अतल से एक ही हुँकार ऊपर आएगी
गीत अपनी जीत के बस रोशनी ही गाएगी।
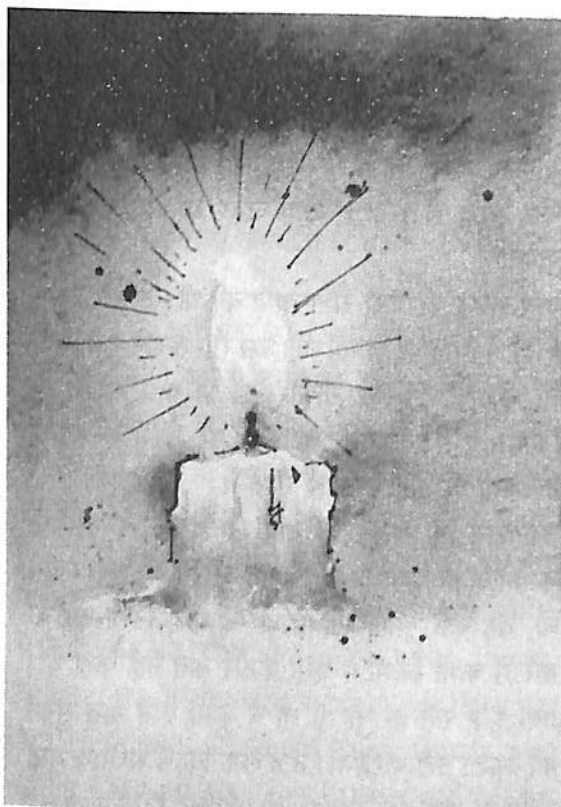
संपर्क : कवि नगर, पोस्ट : मनासा
जिला - नीमच, मध्यप्रदेश
पिन - 458 110

कविता

चलो..... चल दें बीहड़ में

श्याम सखा ''श्याम''

पूर्व निदेशक, हरियाणा साहित्य अकादमी व पूर्व सम्पादक 'हरिगंधा'। अब तक 4 भाषाओं में 4 उपन्यास, 4 कहानी संग्रह, 6 कविता संग्रह आदि 25 पुस्तकें प्रकाशित। हरियाणा साहित्य अकादमी के लोक साहित्य व लोक कला के सर्वोच्च पुरस्कार से सम्मानित।

चलो
इन जानी पहचानी
पगडंडियों को
छोड़ कर
बीहड़ में चलें,
और वहाँ पहुँच कर,
पीठ से पीठ
मिलाकर खड़े हो जाएँ
और सफ़र
शुरू करें
अलग-अलग
एक दूसरे से विपरीत दिशा में
और भूल जाएँ कि धरती
गेंद की तरह गोल है,
चलते रहें तब तक
जब तक पाँव थक कर
गति को नकार न दें,
चलते रहें तब तक
जब तक सूरज की पीठ न आ जाए,
तब तक
जब तक
अन्धेरा, बूढ़े बरगद की
कोंपलों पर
शिशु से कोमल
पाँव रखता,
शाखाओं पर भागता,
तने से उतरकर
धरती पर बिखर न जाए,
चलते रहें
तब तक
जब तक
बारहसिंगों की आँखें
चमकने न लगें चारों ओर
और फिर
एक स्तब्धता
छा जाए
मौत सी।
चमकती आँखें दौड़ने लगें
तितर-बितर,
फिर एक
दहाड़ यमराज सी दहाड़,
जम जाए
रात की छाती पर।
मैं टटोलता सा
आगे बढ़ूँ
और छू लूँ तुम्हारी
गठियाई
उँगलियों को
चलो जानी पहचानी
पगडंडियों को छोड़ कर
चल दें
बीहड़ में!!

संपर्क : 703 जीएचएस 88
सेक्टर : 20, पंचकुला 134113

कविता

डाल बदलिए

अश्विनी कुमार पाण्डेय

ग़ज़ल संग्रह – अहसास के साये तले (1993), दोहा संग्रह– खूँटी लटकी धूप (2001), हिन्दी साहित्य अकादमी, गुजरात द्वारा पुरस्कृत; गीत-ग़ज़ल संग्रह– शाख-शाख मधुमास (2013); अनेक काव्य संकलनों तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित; आकाशवाणी, दूरदर्शन तथा कवि सम्मेलनों में काव्य-पाठ।

पहले अपनी चाल बदलिए
फिर दुनिया का हाल बदलिए।

ओढ़े घूम रहे हैं कब से
भेड़ोंवाली खाल बदलिए।

मोल लगाएगा चौराहा
पहले नकली माल बदलिए।

छौंक लगाने से क्या होगा
घुन खाई हर दाल बदलिए।

जिस पर बैठें उसे न काटें
कटनेवाली डाल बदलिए।

जीवन में ख़ुशियाँ ही ख़ुशियाँ
जीवन का सुरताल बदलिए।
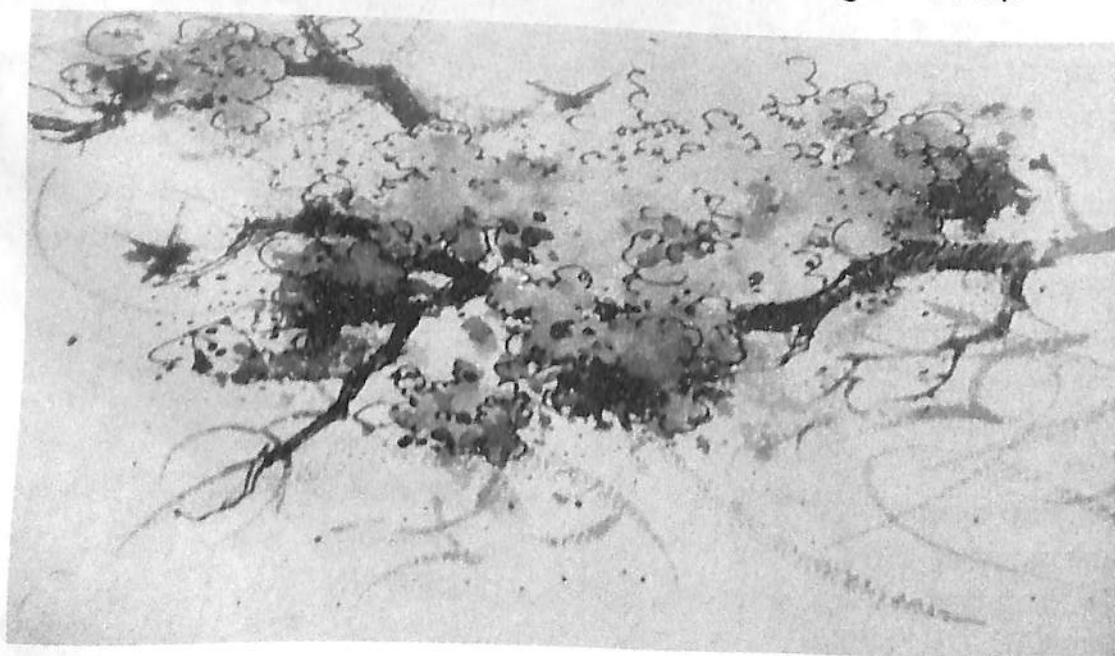
संपर्क : 34/67 जी.एच.बी., लक्ष्मीनगर,
चाँदखेड़ा, अहमदाबाद - 382424

कविता

शपथ ले लो - शपथ दे दो

प्रमोद देसी

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की प्रबन्ध समिति के सदस्य। व्यवसाय से एक बैंकर और कम्प्यूटर विशेषज्ञ। मूलतः संगीतकार और गीत-लेखक हैं। सिने-संगीत और शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में उनकी अलग पहचान है। वर्ष 2008 में उनके कुछ गीतों का एक अलबम भी प्रकाशित हुआ है, जिसे बहुत सराहा गया।

शपथ ले लो, शपथ दे दो – शपथ ले लो शपथ दे दो
शपथ ले लो, शपथ दे दो – शपथ ले लो शपथ दे दो

हम नयी सदी में भरत भूमि का नव निर्माण करायेंगे
नव निर्माण करायेंगे
विज्ञान-ज्ञान के भूषण भारत माँ को अर्पण कर देंगे
भारत माँ को अर्पण कर देंगे
शपथ ले लो, शपथ दे दो - शपथ ले लो, शपथ दे दो

हम देश-प्रेम और बंधु भाव को मन में सदा बसायेंगे
मन में सदा बसायेंगे
हम प्रगति पथ पर अपने देश को आगे ही बढ़ायेंगे
आगे ही बढ़ायेंगे
शपथ ले लो, शपथ दे दो – शपथ ले लो, शपथ दे दो

पंजाब, सिंध, गुजरात, मराठा, द्राविड़, उत्कल, बंगा,
द्राविड़, उत्कल, बंगा
व्यास, नर्मदा, सिन्धु, गोदा, यमुना, पावन गंगा,
यमुना, पावन गंगा
सह्य, हिमाचल, मलय, अरवली, विन्ध्य सुशोभित अंगा,
विन्ध्य सुशोभित अंगा
पूरब, पश्चिम, दक्षिण सागर उच्छल उदधि तरंगा
उच्छल उदधि तरंगा
भारत भू के वरद रूप जन जीवन कृतार्थ कर लेंगे

शपथ ले लो, शपथ दे दो – शपथ ले लो, शपथ दे दो

उद्योग, कृषि और राजनीति में परिवर्तन हम लायेंगे
परिवर्तन हम लायेंगे
रणनीति और शस्त्र-सिद्धता अति विकराल करायेंगे
अति विकराल करायेंगे
संस्कृति रक्षण, सहिष्णु-वर्तन, राष्ट्रधर्म अपनायेंगे
राष्ट्रधर्म अपनायेंगे
विश्वबंधुता और प्रेम का ....
विश्वबंधुता और प्रेम का जग को सबक सिखायेंगे
जग को सबक सिखायेंगे
शपथ ले लो, शपथ दे दो – शपथ ले लो, शपथ दे दो
शपथ ले लो कि अब हम... सा रा रा रा रा रा रा रा रा रा...
ग़रीबी को हटायेंगे – सुख समृद्धि लायेंगे,
भ्रष्टाचार को रोकेंगे, – सदाचार अपनायेंगे
निरक्षरता मिटायेंगे – विज्ञान प्रबोधन कर देंगे
उग्र प्रवृत्ति छोड़ेंगे – मिलकर देश को जोड़ेंगे
मिलकर देश को जोड़ेंगे – मिलकर देश को जोड़ेंगे
शपथ ले लो, शपथ दे दो – शपथ ले लो, शपथ दे दो

हम नयी सदी में भरत भूमि का नव निर्माण करायेंगे
नव निर्माण करायेंगे
नव निर्माण करायेंगे
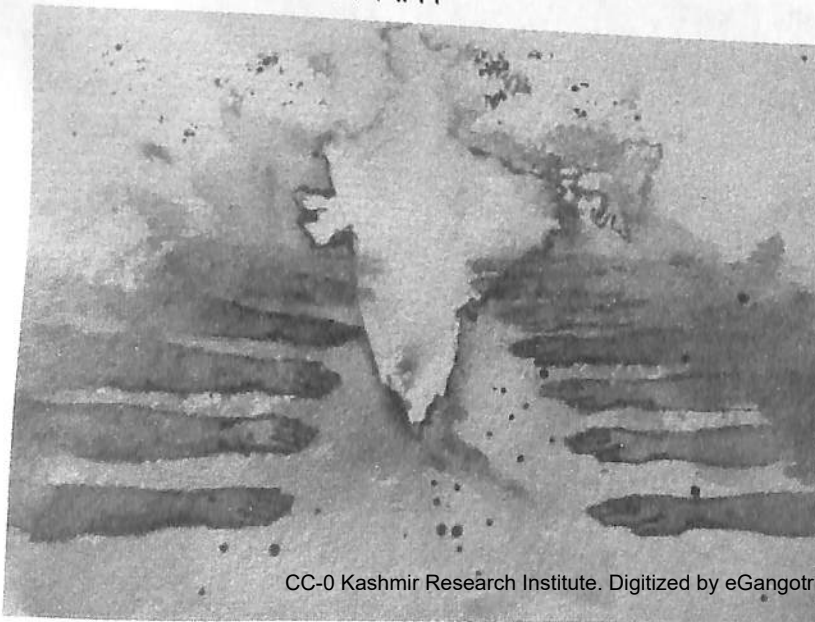
संपर्क :7 श्री राम अपार्टमेंट
168 बी, वैद्य वाडा
ठाकुरद्वार रोड
मुम्बई- 400 002

अनूदित कविता

बहार हूँ मैं

मूल : पद्मा सचदेव

(अनुवाद : कृष्ण शर्मा)

प्रकाशित कृतियाँ : डोगरी भाषा में पाँच लघु कथा-संग्रह प्रकाशित। निर्मल वर्मा की कहानियों का डोगरी अनुवाद। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आलेख प्रकाशित। दूरदर्शन द्वारा डोगरी कहानियों पर आधारित टेलीफ़िल्म का निर्माण। **पुरस्कार/सम्मान :** साहित्य अकादमी पुरस्कार; जम्मू और कश्मीर राज्य सांस्कृतिक पुरस्कार तथा बाल साहित्य पुरस्कार से सम्मानित। **संप्रति :** जम्मू और कश्मीर राज्य सहकारी संघ में प्रबंधक के रूप में कार्यरत।

बहार हूँ मैं
भाग्यदेवी के हाथों
शृंगारी कोई नार हूँ मैं!

वृक्ष के पत्तों में अचरूँ तो
अजब हैं रंग मेरे–
गहरा हरा, नीम योगिया
और तोता परी-सा रंग,
पहली बार मुट्ठी खोलते
शिशु की हथेली जैसा रंग
गोकुल के कान्हा संग
राधा का-सा रंग–
लाल सुर्ख़ हो जाऊँ तो
चिनार हूँ मैं
बहार हूँ मैं!

चरागाह में कोमल हरी दूब-सी
डरी-सहमी रहती हूँ मैं
मखमली घास पर बैठे लोग
रौंदते हैं पैरों तले मुझे
उसी दूब द्वारा
करते हैं मेरी पूजा भी
फिर भी, पैरों तले लाचार हूँ मैं
बहार हूँ मैं!

पहाड़ों-पठारों-पगडंडियों पर
सोई रहती हूँ मैं
झड़े, मुरझाए पीले पत्तों की
ढेरियाँ मेरे काम की नहीं
भूले-भटके राही के लिए
रोशनी का मीनार हूँ मैं
बहार हूँ मैं!

दूध-से सफ़ेद फूल खिले तो
आया फागुन भी
खेलने होली
कर गया सुहागिन मुझे
बिखेर कर लाल रोली
किसी ख़ुशहाल घर का–
खुला हुआ द्वार हूँ मैं
बहार हूँ मैं!

बरसे ख़ूब बादल और
धो गये फूलों को, मैले पत्तों को,
दे गये आर्द्रता
प्यासी धरती को
सज गयी बर्फ़ की पौध
ऊँचे पहाड़ों पर–
ऐसे में, अनछुई-कमसिन किसी
चोटी का आधार हूँ मैं
बहार हूँ मैं!

बहार हूँ सुगन्ध भरी,
ताज़ी कलियों के मध्य
मालिन भी है खड़ी
टोकरी में भरती
बहारों के सितारे
किसी मुरझाई कली के
मन का सितार हूँ मैं
बहार हूँ मैं!

पीकर फूलों की सुगन्ध
हुआ बावरा कोई मूढ़ रांझा
कैसे कहीं पर देखो
मन के विचारों का
हुआ योग साझा
डाकिये द्वारा पहुँचाई–
किसी के आगमन का तार हूँ मैं,
बहार हूँ मैं!

संपर्क : 152/119 पक्की ढक्की
जम्मू (जे॰ एण्ड के॰) 800001

ग़ज़ल

ग़ज़ल

डॉ० लतीफ़ अकबराबादी

प्रकाशित कृतियाँ : अरमानों का जनाज़ा (उपन्यास)। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में गीत, ग़ज़ल, कविता, कहानियों एवं लघु कथाओं का प्रकाशन। अनवारे लतीफ़ और असरारे लतीफ़ नामक दो पत्रिकाओं का प्रकाशन। **पुरस्कार/सम्मान** : साहित्यालंकार; साहित्य-सुमन और साहित्य सुघट जैसी उपाधियों से सम्मानित। **संप्रति** : हिंदी और उर्दू भाषाओं की विविध विधाओं में निष्ठापूर्वक लेखन।
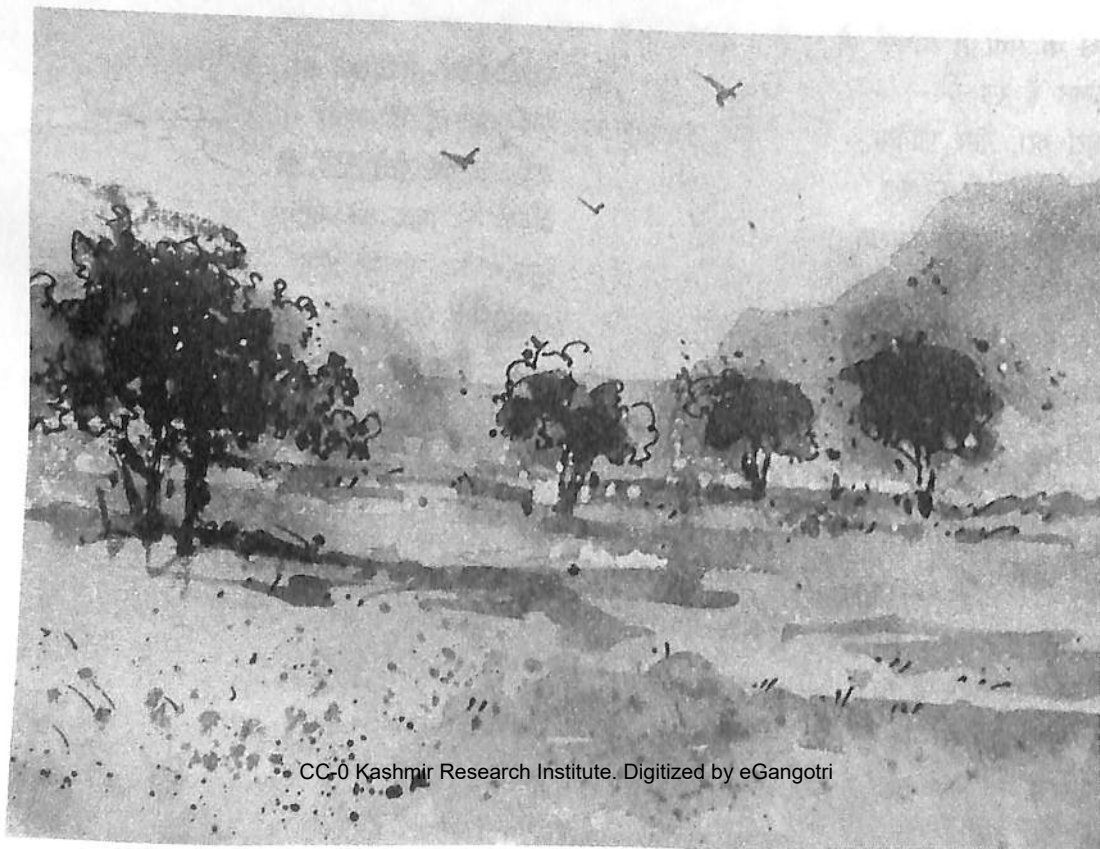
जिसने इक पेड़ लगाया न उगाया होगा
ज़ीस्त में कैसे मयस्सर उसे साया होगा?

क्यों न हर बात तेरी झूठ समझ ली जाती
तूने हर वाक़ेआ सच्चा ही सुनाया होगा।

दिलकशी थी ही कहां गुंचओ गुल में पहले
सहने गुल्शन में संवर कर के वो आया होगा।

दिख रहे होंगे यक़ीनन उसे सदहा क़ातिल
आईनाख़ाने में जब आज वो आया होगा।

मरते दम तक भी मुझे याद जो आता ही रहा
यक बयक उसने मुझे कैसे भुलाया होगा।

क़द्र मां-बाप की कर लो कि इन्हीं ने तुमको
ख़ार बन बन के गुलो गुंचा बनाया होगा।

आज फिर आपकी महफ़िल में मेरा क़ल्बे हज़ीं
इक नए ज़ख़्म की हसरत लिए आया होगा।

उनकी सुलझी हुई ज़ुल्फ़ों में उलझकर ए दिल
हस्बे-साबिक़ तू बलाएं नई लाया होगा।

वह नहीं था तो मेरे साथ थीं यादें उसकी
मुझको तन्हा तो कभी तुमने न पाया होगा।

करके ईजाद नई तर्ज़े जफ़ा, तर्ज़े सितम
आज जामे में वह फूले न समाया होगा।

अब तड़प करके सदा मुझको वो देता है लतीफ़
अब ख़्याल उसको वफ़ा का मेरी आया होगा।

संपर्क : 49 वामकुंज, जे.के. तिराहा
अग्रवाल ट्रांसपोर्ट के पीछे, पो. निम्बाहेड़ा
जिला : चितौडगढ़, राजस्थान - 312601

कहानी

पोस्टर युद्ध

राजेश जैन

प्रकाशन : उपन्यास : गीली धूप, सूरज में खरोंच, टॉवर ऑन द टेरेस, कथा संग्रह : झूठे आकाश, एक हाँफ़ती हुई शाम, काला तोता। कविता संग्रह : रोशनी के खेतों में, शब्द शिला आदि के साथ कई नाटक, व्यंग्य संग्रह, बाल साहित्य का प्रकाशन। पुरस्कार : हिन्दी साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश साहित्य अकादमी, ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार तथा अन्य कई संस्थाओं से सम्मानित।

जैविक जिस सोसाइटी में रहता था, उसमें कई बहुमंज़िली ब्लाक थे। जैविक अपने ब्लाक की सबसे ऊपरवाली तीसरी मंज़िल पर रहता था, ग्राउंड फ़्लोर पर ठाकुर और सिंगल का परिवार था। उन दोनों के दरवाज़े जिस पैसेज में खुलते थे, वहीं से ऊपरवालों को आना-जाना पड़ता था, क्योंकि वही उनके लिए एकमात्र रास्ता था। इधर ऊपर रहनेवाले काफ़ी परेशानी महसूस कर रहे थे, क्योंकि पैसेज में जहाँ सिंगल ने अपना रोज़ का कूड़ा डालने के लिए 'डस्ट बिन' स्थायी तौर पर रख दिया था, वहीं ठाकुर परिवार ने ब्लाक के बिजली बोर्ड के सामने पैसेज में अपना स्कूटर पार्क करना शुरू कर दिया था। इस कारण लोगों को आने-जाने और बच्चों को अपनी सायकिलें निकालने में कठिनाई होती थी।

और तो और ठाकुर परिवार ने एक आवारा कुत्ते के गले में पट्टा डालकर, उसे गोद ले लिया था, जो पैसेज में ही पड़ा रहता था। उसका खाना और पानी भी वहीं प्लास्टिक के कटोरों में रखा रहता था।

सफ़ाई जमादार कूड़ा उठाने और झाडू लगाने दोपहर में आता था, जबकि सिंगल परिवारवाले दिन-भर अपनी सुविधा से जब-तब डस्ट बिन में कूड़ा डालते रहते थे। फलस्वरूप पैसेज में हमेशा कूड़ा-करकट बिखरा रहता था। सार्वजनिक जगह को ज़्यादा-से-ज़्यादा अपने मतलब के लिए हड़पकर इस्तेमाल करने की ग़रज़ से, घर का कबाड़ भी पैसेज में रख देने की, जैसे उन दोनों परिवारों में होड़-सी चलती थी। यूँ भी स्कूटर की वजह से जमादार अच्छी तरह झाडू नहीं लगा पाता था। फलस्वरूप पैसेज में हमेशा, कचड़ा बिखरा रहता था।

रही-सही कमी ठाकुर का दत्तक कुत्ता पूरी कर देता था। जब भी डस्ट बिन में कूड़ा डाला जाता था, वह उसमें अपना मुँह घुसाकर खाना ढूँढ़ता और कूड़ा बिखरा देता या अकसर पैसेज में ही धरना दिए बैठा रहता। ऐसे में दूसरों का वहाँ से गुज़रना मुश्किल हो जाता। लगता, पैसेज से नहीं, किसी कचराघर से गुज़र रहे हों। कभी-कभार बदबू और मक्खियाँ अलग पनपती रहती थीं।

प्रबंधक समिति द्वारा सोसायटी में जगह-जगह लगाये गए 'स्वच्छ भारत के पोस्टर मुँह लटकाए टँगे थे, क्योंकि स्वच्छता कहीं नज़र नहीं आ रही थी। ठाकुर और सिंगल परिवार ने जैसे अनजाने ठान लिया था कि अपनी सुविधानुसार कूड़ा फेंकना उनका मौलिक अधिकार है। दूसरों का क्या है! पैसेज तो उनके ही

दरवाज़े के सामने है, इसलिए वे जैसा चाहें रखें। ऊपरवालों को वहाँ से निकलने देते हैं– यही क्या कम एहसान है! जैसे ग्राउंड फ्लोर पर रहने के कारण, वे ज़मीं के ज़मींदार हों और ऊपर के फ्लैट- उनके सर्वेंट क्वार्टर।

जैविक ने अपने पापा से चर्चा की और उन्होंने सोसाइटी मैनेजमेंट से शिकायत की- एकाध बार सेक्रेटरी ने ठाकुर को समझाया भी, जिससे ठाकुर और चिढ़ गए। सोसाइटी की स्वायत्तता के कारण नगर निगम प्रशासन को अन्दर आने की अनुमति नहीं थी और मैनेजमेंट कमेटी वाले भी इसे ब्लाक का आपसी मसला मानकर ज़्यादा नहीं उलझाना चाहते थे। जैविक के पापा एक विज्ञापन एजेंसी में कॉपी राइटर थे और समस्याओं को बातचीत द्वारा सुलझाने में विश्वास करते थे। अकसर लोग उनसे पूछते रहते थे कि आजकल नया क्या लिख रहे हैं। जैविक ने कहा– 'पापा, आप कुछ करते क्यों नहीं?'

'सोच रहा हूँ– क्या किया जाये? ये लोग जेनुइन क़ायदा-कानून नहीं मानते। पाकिस्तान जैसे पड़ोसी हैं, सीधे सामने की लड़ाई के बजाय आतंक के प्रॉक्सी विरोध का सहारा लेते हैं। जो उनको सुविधाजनक हो, उनके लिए वही कानून है। समझाने का फ़ायदा नहीं। कोशिश करो तो बदतमीज़ी पर उतारू हो जायेंगे। दबंग हो गाली गालौज करने लगें तो आश्चर्य नहीं। पड़ोस का मामला है, इसलिए पुलिस में शिकायत करना ठीक नहीं होगा...' पापा ने कहा।

'यह तो जंगल राज हुआ, जिसकी लाठी उसकी भैंस... अगर दूसरे सभी लोग, इसी तरह होड़ में शामिल हो अपना-अपना कबाड़ और स्कूटर, कामन पैसेज में रखने लगें तो सारी जगह घिर जाएगी, लोगों का आना-जाना मुश्किल हो जाएगा– इसीलिए ही तो नियम बनाये जाते हैं, जो सबके लिए होते हैं। फिर राहगीरी आंदोलन के तहत हम सड़कों पर सजीव लोगों को चलते–फिरते देखना चाहते हैं, न कि खड़ी हुई निर्जीव कारों और स्कूटरों को' – जैविक की मम्मी ने कहा, जो अभी तक सारी बातचीत सुन रही थीं।

'आजकल प्रधानमंत्री का स्वच्छता अभियान ज़ोरों पर है। मैनेजिंग कमेटी ने सोसाइटी में पोस्टर लगवाये हैं– हम भी सोशल मीडिया द्वारा पोस्टर युद्ध छेड़ सकते हैं। शब्दों में भी ऊर्जा होती है। ऊर्जा यानी एनर्जी, जो जड़ वस्तु को हिला सके। इन लोगों की ठस समझ को झिंझोड़ने की ज़रूरत है।

'क्या करेंगे आप?'

'देखते जाओ'।

पापा ने अपने कंप्यूटर में स्लोगन लिखा– 'स्वच्छ ब्लाक अभियान – नियमानुसार, कूड़ा-कबाड़, स्कूटर्स और कुत्ता पैसेज में पार्क न करें।'

प्रिंट निकालकर जैविक को दिया और कहा –'इसे ब्लाक के नोटिस बोर्ड पर लगा दो।'

'वे लोग चिढ़कर, इसे फाड़ देंगे?' –जैविक ने

आवारा कुत्ते
की डाइनिंग
टेबल
और स्कूटर्स
की
अवैध पार्किंग
बनाइए-
शाबाश!!
सार्वजनिक
क़ायदा और
कानूनों और
सभ्यता को
अपने मतलब
के लिए
इसी तरह ठेंगा दिखाइए!
प्रधानमंत्री के स्वच्छता अभियान की धज्जियाँ उड़ाइए
हा...हा...हा...''

आशंका जताई।

'कोई बात नहीं, वैसा करने से पहले एक बार पढ़ेंगे तो सही... ' पापा ने कहा।

जैविक ने वैसा ही किया– ब्लाक के नोटिस बोर्ड पर काग़ज़ लगा दिया और जैसी कि आशंका थी, दूसरे दिन बोर्ड से काग़ज़ गायब था, पर कूड़ा, कबाड़, स्कूटर, कुत्ता और उसका खाना पैसेज में यथावत मौजूद थे।

जैविक ने पापा से कहा– 'मैंने कहा था न?'

'कोई बात नहीं, कुछ और सोचते हैं, ये पड़ोसी तो पाकिस्तान की तरह हो रहे हैं– मानो सीमा पर चल रहा है गुरिल्ला शीत युद्ध या फिर अमृतसर में बाघा बॉर्डर पर प्रतिदिन शाम को आयोजित संयुक्त रिट्रीट समारोह में दोनों ओर से हो रहा शौर्य प्रदर्शन...' सोच समझकर, उन्होंने एक कविता लिखी–

''बधाई!
'स्वच्छता अभियान' को ठेंगा दिखाइए।
सार्वजनिक पैसेज में
अपना निजी कूड़ा कबाड़ फैलाइए
पैसेज को

जैविक ने कविता को भी ब्लाक के नोटिस बोर्ड पर लगा दिया और सोसाइटी में अपने दोस्तों से कहा– 'मेरे पापा ने एक नई कविता लिखी है, पढ़ना चाहो तो ब्लाक के नोटिस बोर्ड पर जाकर देखो।'

बात सोसाइटी में फैल गई। लोग जाकर कविता पढ़ने लगे। अरोरा अंकल ने अपने मोबाइल से उसकी फोटो खींचकर इन्टरनेट में सोशल साइट पर डाल दी। बात को फैलता देख, ठाकुर परिवार के लोगों की हिम्मत नहीं हुई कि यूँ ही कविता का पोस्टर झट फाड़ सकें। फलस्वरूप अगले हफ़्ते, अबकी बार कविता के साथ पैसेज से कूड़ा कबाड़, डस्ट-बिन तथा स्कूटर्स भी ग़ायब थे, मानो कविता के शब्दों में समाई ऊर्जा की धारा उन्हें अपने साथ बहाकर ले गई।

संपर्क : 40, करिश्मा अपार्टमेंटस
26 इंद्रप्रस्थ एक्सटेंशन
दिल्ली - 110 092

कहानी

शहीद ख़ुर्शीद बी

संतोष श्रीवास्तव

दस्तक अँधेरी ख़ामोशी को कुरेद गई। रज़ाई में दुबके रज़्ज़ाक मियाँ ने अपनी बीवी ख़ुर्शीद की ओर दहशत-भरी नज़रों से देखा और फुसफुसाये– 'कौन होगा?'

'अल्लाह जाने, इतनी रात गए किसने कुंडी खटखटाई है? नज़ीर को तो मना कर दिया था कि रात हो जाए तो वहीं रुक जाना।' अपने अब्बू और अम्मी की फुसफुसाहटें सुन फ़रीदा अपनी बड़ी बहन ज़ुबैदा से कसकर लिपट गई। दोनों के बदन पर दहशत रेंगने लगी। गला सूखने लगा। भयंकर ठंड में भी दोनों की गरम साँसें एक दूसरे को पसीना-पसीना करने लगीं। कश्मीर के हालात ही ऐसे हैं। क़यामत बरपा है पूरी घाटी पर। रात सो लो तो सुबह का भरोसा नहीं, सुबह उठो तो रात का। तमाम घाटी सुलग रही है...।

दरवाज़ा फिर खड़का, इस बार ज़ोर से-'दरवाज़ा खोलो।' ख़ौफ़ फैलाती अपरिचित मर्दानी आवाज़ ने सबके होश उड़ा दिए। अँधेरे में भी दीवारों पर परछाइयों के डोलने का गुमान होने लगा... 'अल्लाह रहम कर।'

रज़्ज़ाक मियाँ सहमते हुए उठे। दरवाज़े की फाँक में से झाँका, पर सिवा अँधेरे के कुछ नज़र न आया। डरते-डरते दरवाज़ा खोल दिया। वे गिनती में चार थे, चारों के हाथों में बंदूकें... काला लिबास... सर पर भी काले कपड़े बंधे हुए...।

'हमें भूख लगी है, हमारे लिए खाना बनवाओ।' उनमें से एक ने बंदूक की नली रज़्ज़ाक मियाँ के गले से सटा दी। रज़्ज़ाक मियाँ के शरीर का ख़ून जम-सा गया। तुरंत फ़ैसला नहीं कर पाए कि क्या जवाब दें। इतना तो तय था कि चारों दहशतगर्द आतंकवादी थे...जिन्हें चाहिए खाना, पैसा और औरत... इनके चंगुल से निकलना

हेमंत फाउंडेशन की ओर से हेमंत स्मृति कविता सम्मान और विजय वर्मा कथा सम्मान की संयोजिका। **प्रकाशित पुस्तकें** : बहके बसंत तुम, बहते ग्लेशियर, यहाँ सपने बिकते हैं, प्रेम-संबंधों की कहानियाँ(कथा-संग्रह); मालवगढ़ की मालविका, दबे पाँव प्यार, टेम्स की सरगम, हवा में बंद मुट्ठियाँ(उपन्यास); मुझे जन्म दो माँ(स्त्री विमर्श); फागुन का मन (ललित निबंध संग्रह); नहीं अब और नहीं (संपादित संग्रह) और नीले पानियों की शायराना हरारत(यात्रा-संस्मरण)।

पुरस्कार : महाराष्ट्र राज्य साहित्य अकादमी का 'हिन्दी सेवी सम्मान' सहित बारह तथा दो अंतरराष्ट्रीय साहित्य एवं पत्रकारिता पुरस्कार। भारत सरकार अंतरराष्ट्रीय पत्रकार मित्रता संघ' की ओर से 20 देशों की यात्रा।

आसान न था। ये सब पड़ोसी देश के भाड़े के टट्टू हैं... उद्देश्यहीन ज़िंदगी जीते... कितनों ने तो कश्मीर की ख़ूबसूरती देखी तक नहीं होगी और कौन जाने इनमें अपने कश्मीरी लड़के भी हों। उन्हें भी तो वे बरगला कर आतंक फैलाने की ट्रेनिंग दे डालते हैं कि कश्मीर की वादियाँ हम इस्लाम को मानने वालों की हैं। इन वादियों को 'हिंदुओं से बचाना होगा' और ट्रेनिंग पूरी होते ही बंदूक की भाषा बोलते ये लड़के टूट पड़े हैं अपने ही हमवतनों पर।

ख़ुर्शीद बी भीतरी कमरे के दरवाज़े से सटी खड़ी थीं। बंदूकों ने उनकी साँसों को तेज़ कर दिया था। बचाव का कोई उपाय न देख वे झट से बोलीं- 'खाना अभी बन जाता है। आप बैठ जाइए।'

'ए... हमें हुकुम देती है?'

नली रज़्ज़ाक मियाँ के गले में धँसी।

'चीं चपड़ हमें पसंद नहीं। जो हम कहें, करते जाओ।' रज़्ज़ाक मियाँ की मुट्ठियाँ भिंचने लगीं। हथेली में अपने ही नाख़ून चुभने लगे। जी चाहा, एक-एक की गरदन मरोड़ कर डल में डुबो आएँ...लेकिन मजबूरी भीतर-ही-भीतर हिम्मत तोड़ने लगी।

ख़ुर्शीद बी ने डिब्बा टटोलकर बचा-खुचा आटा निकाला। जान साँसत में है... ज़रा-सी मोहलत मिलती है, तो राशन के लिए बाज़ार दौड़ना पड़ता है, लेकिन धन की तंगी से फटी जेबें अपने सूराख़ फैलाने लगती हैं... कल तो ज़रूर फाँका करना होगा। अभी तो जान बख्शें ये शैतान।

चार रकाबियों में खाना परोसकर ख़ुर्शीद बी दरवाज़े तक आईं। रकाबियाँ नीचे लकड़ी के फ़र्श पर रख दीं। पानी का बर्तन भी। वे चारों खाने पर टूट पड़े। अँधेरे में उनके चबड़-चबड़ हिलते जबड़े मगरमच्छ का एहसास करा रहे थे। मानो वे रज़्ज़ाक मियाँ सहित ख़ुर्शीद बी को निगले जा रहे हों। खा-पीकर उन्होंने डकार ली और शरीर पर तारी होते अन्न के नशे से उनींदी आँखें लिए वे बोले– 'हमें लड़कियाँ भी चाहिए, बस आज की रात।' रज़्ज़ाक मियाँ सहम गए। ख़ुर्शीद बी ने दोनों लड़कियों को रजाई से तोप दिया। अपनी समझ और होशियारी से उन्होंने दोनों लड़कियों की हिफ़ाज़त का पूरा इंतज़ाम कर लिया था। वे बिस्तर पर औंधी हो जातीं और उन पर चादर बिछाकर उसके चारों कोने खटिया से बाँध दिए जाते, ताकि कोई आसानी से उलट न पाए। चादर पर पुआल से भरी रजाई तोप दी जाती...यूँ लगता, मानो समतल रजाई बिछी हो। औंधी पड़ी लड़कियाँ खटिया की मूँज को कुछ इस तरह नाक और मुँह के आस-पास खिसका देती कि दम न घुटे, साँस बाक़ायदा ली जा सके।

'लड़कियाँ तो हमारे पास हैं नहीं।' रज़्ज़ाक मियाँ ने तैश की गर्मी रगों में अंदर ही पैबिस्त कर ली और आवाज़ में बख़ूबी घिघियाहट ले आये।

'ए बुड्ढे, झूठ बोला तो ख़ुदा कसम, ज़बान तराश देंगे। तलाशी लो कमबख़्त की।'

'बेशक पूरा घर, खुला पड़ा है।' रज़्ज़ाक मियाँ की आँखों की चिनगारियाँ उसमें तैरते पानी को सोखने लगीं। चारों ने बारी-बारी से एक दूसरे की ओर देखा। औरत की चाह में अंधी हुई आँखों में कुछ इशारे हुए।

'तब अपनी औरत हमारे हवाले कर।'

रज़्ज़ाक मियाँ मानो होश खो बैठे। गले में काँटे उगने लगे, उनके ही सामने उनकी बीवी की छीछालेदर? जिसके बदन को आज तक ग़ैर मर्द ने नहीं छुआ और जिसके रेशमी बदन की हर सरसराहट पर वे सौ जान से फ़िदा रहे, आज उसी को इन शैतानों के हाथों में ...अल्लाह! ये दिन दिखाने के पहले तूने हमें क़ब्र तक क्यों न पहुँचा दिया? क्या क़सूर है हमारा? क्या किया है हमने? सुबह-शाम दो जून की रोटी और चैन की नींद पर ही तो सब्र किया हमने, तुझसे कुछ अधिक तो नहीं माँगा। फिर? और वे मन-ही-मन रो पड़े। चारों ख़ामोशी से बैठे रहे, लेकिन चौकस... बंदूकें हाथ में सीधी तनी हुई... इनके मन में न
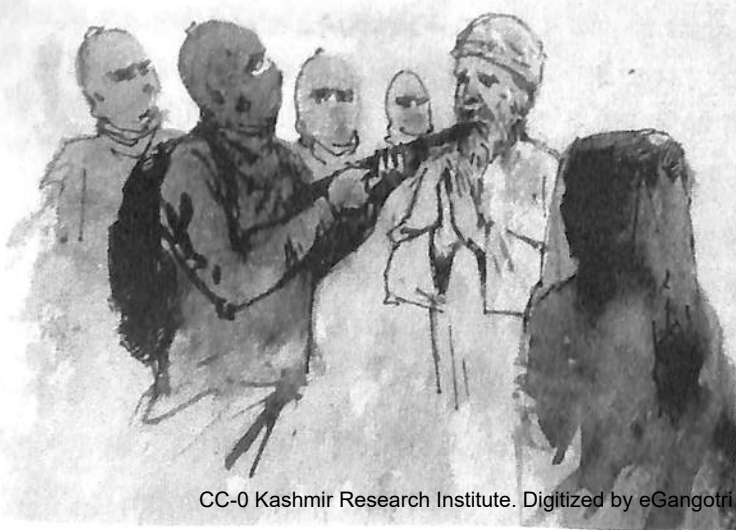
इंसानियत है, न धर्म... कीड़े-मकोड़े की तरह जी रहे हैं ये... पेट की भूख और तन की भूख बंदूक के बल पर मिटा लेते हैं ये... ख़ुर्शीद बी के दिल में दोनों लड़कियों के लिए ख़ौफ़ समा गया... इन जल्लादों की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ जाने पर हो सकता है ये हमें गोलियों से भून डालें और घर का कोना-कोना उजाड़कर लड़कियों के जिस्म को रौंद डालें ...फिर? सवाल... कौन दे जवाब... सवाल? हाँ, अपने को मिटाना होगा... मिटाना ही होगा। वे उठीं... इरादा मज़बूत किया...दिल-ही-दिल में अपने शौहर से माफ़ी माँगी, रज़ाई में दुबकी अपनी मासूम लड़कियों की ओर देखा, फिर रज़्ज़ाक मियाँ की ओर, जो ज़िंदगी के जुए में अपना सब कुछ बस हारने ही वाले थे, लेकिन जिन्हें यह नहीं पता था कि पाँसा किसकी ओर से फेंका गया है... और दुपट्टा अच्छे से ओढ़ बाहर आ गई- 'चलिए..'

उनके भारी बूटों-तले रज़्ज़ाक मियाँ की चीख़ कुचल कर रह गई। पंख कटे परिंदे से वे लकड़ी के फ़र्श पर लोट-लोट कर रोने लगे। खटिया पर औंधी पड़ीं लड़कियाँ सहम गईं और सहम गए घर के दरो-दीवार, जिन्हें ख़ुर्शीद बी बड़े प्यार से झाड़ती-पोंछती थीं।

सुबह के धुँधलके में ख़ुर्शीद बी लौटीं। दीवार का सहारा लेती अपने शौहर से नज़रें न मिला पाने की शर्मिंदगी में पानी-पानी हुई...फटे कपड़े...चेहरे पर पड़ी खरोंचों में छलछलाता लहू, ज़ार... ज़ार इज़्ज़त लिए वे लकड़ी के फ़र्श पर ढेर हो गईं। यूँ लगा, मानो पूरा घर ही रात के भूचाल में ज़मींदोज हो गया है और उसके मलबे से निकलती लड़कियाँ रोती हुई उनके शरीर से लिपट गई हैं। शर्म से पानी-पानी तो रज़्ज़ाक मियाँ भी थे... बीवी की इज़्ज़त न बचा पाने की नामर्दगी ने उन्हें झकझोर डाला था। उन्होंने दाँत किटकिटाकर अपने बाल नोचते हुए अपना सर दीवार पर दे मारा...तभी नज़ीर दाखिल हुआ। रात भर वह अपने दोस्त के घर छुपा रहा था, क्योंकि सड़कों पर आतंकवादी दहशत फैलाये थे। वे हवा में गोलियाँ दागते... जवाब में गश्त देती सैनिक टुकड़ी गोलियाँ दागतीं...पेड़ों पर बने घोंसलों में कई परिंदे अपने पर एक साथ फड़फड़ाते। दिन भर अखरोट की लकड़ी और बेंत से सजावटी सामान बनाने का काम करके नज़ीर रात में लौटता था, लेकिन कल रात नहीं लौट पाया था। कमरे में आकर उसने सर की ऊनी टोपी उतारी- 'क्या हुआ अम्मी को?'

सब ने एक दूसरे की ओर वीरान बुझी हुई आँखों से देखा। उन आँखों में जाने क्या था कि नज़ीर सहम गया। वह सब कुछ समझ गया था। लगातार ग्यारह वर्षों के ख़ूनी संघर्ष ने कश्मीर घाटी के बच्चे-बच्चे के दिल में अपनी परिभाषा खंजर की नोक से लिख दी थी। यह घाटी बेगुनाहों के ख़ून और बेइज़्ज़ती का बोझ ढोते-ढोते वीरान होती चली जा रही है। सियासी सनक में पिस रहे हैं भोले-भाले कश्मीरी और विधवा हो रही हैं बहारों में सोलहों शृंगार से खिली हुई घाटियाँ, जहाँ की वादियों में शताब्दियों से गूँज रहे थे हब्बा-खातून के दर्दीले प्रेम भरे गीत, अब वहाँ बम के धमाकों की तबाही है।

ख़ुर्शीद बी ने करवट बदली, तो उनके मुँह से कराह निकल पड़ी। फ़रीदा तपाक से पानी ले आई। नज़ीर ने हाथ का सहारा देकर उन्हें पानी पिलाया, वे बुख़ार से तप रही थीं। सुबह से घर में चाय तक नहीं बनी थी। रसोई में डिब्बे और शरीर में दिल... ख़ाली हो चुके थे। नज़ीर चुपचाप उठा, आधे घंटे बाद चाय का सामान और पावरोटी लिए लौटा। जुबैदा चाय बना लाई। बादाम, दाल-चीनी और इलायची में पका हुआ गर्म तल्ख कहवा किसी ज़माने में रज़्ज़ाक मियाँ के दिमाग़ तक गरमी पहुँचा देता था। आज सादी चाय के पानी की घूँट हलक में आग की लपट-सी उतरी, वे दीवार की ओर मुँह किए चाय पीते रहे। क्या नज़रें मिलाएँ लड़के से...यह कि वे उसकी अम्मी की इज़्ज़त की हिफ़ाज़त नहीं कर सके? बड़ा बौना महसूस कर रहे हैं, वे नज़ीर के सामने। अपनी खिचड़ी दाढ़ी के साथ हासिल हुए उम्र के तजुर्बात से वे ख़ानदान में सराहे जाते थे। ईमानदारी और नेकनामी ने उन्हें मुहल्ले में ख़ास व्यक्ति बना दिया था... आज मानो सब कुछ मिट्टी में मिल

गया, वह भी अपनी औलाद के सामने ही। कमरे में चाय की चुस्कियाँ गूँजती रहीं और गूँजता रहा ख़ौफनाक सन्नाटा, जो उस घर के हर शख़्स के चेहरे से उतर कर फ़र्श और दीवारों को सहमा रहा था। बोसीदा घर पर दहशत तारी थी और घाटी में धुआँ हुए वजूद को अपने में समो लेना चाहती थी।

ख़ुर्शीद बी का पोर-पोर दर्द से कड़क रहा था। बुख़ार में तपते फेफड़ों से गर्म साँसें बाहर निकलकर उन्हें सुला-सी रही थीं। ज़ोरदार रुलाई का भभका गले में गोले की तरह अटका था। काश रो पातीं...लेकिन वे तो अपराध-भावना से जकड़ी थीं। कितनी बार रज़्ज़ाक मियाँ ने कहा था-'चलो, जम्मू चल कर रहते हैं। जान बची रहे, तो घर तो बस ही जाता है।' पर वे ही अड़ी रहीं, कैसे छोड़ें कश्मीर? इन्हीं वादियों में तो उनकी जवानी उठी, ढली...उनकी ज़िंदगी परवान चढ़ी। पूरे तीस बरस गुज़ार दिए रज़्ज़ाक मियाँ के साथ। नज़ीर अठ्ठाइस का हुआ चाहता है...नासिर दस बरस का था, निमोनिया में चल बसा, बड़ी बेटी सईदा भी आठ महीने की उम्र में चल बसी। तीन बच्चे जन्म ही न ले पाए...कच्चे गिर गए। वे आठ बार इसी घाटी में माँ बनीं...सुख-दुःख झेले। अब जब नज़ीर काम-धंधे वाला हो गया और जब बहू तलाशने का अरमान अंगड़ाई लेने लगा, तो वे कश्मीर छोड़ दें? विस्थापन का दर्द झेलें? बढ़े दरख़्त की क्या दोबारा जड़ें जमी हैं कहीं? हालाँकि कार्पेट मर्चेंट, फ्रूट मर्चेंट... बड़े-बड़े व्यापारी चले गए पंजाब, दिल्ली, मुंबई अपना कारोबार बचाने। हम शिकारेवाले कहाँ जाएँ? ठोस ज़मीन पर डल की लहरें कहाँ खोजें? न सेब-अखरोट के बाग़-बगीचे रहे, न केसर की क्यारियाँ...सब उजड़ गया। आतंकवादियों के ख़ौफ़ में सोते-जागते सालों-साल गुज़ार दिए हैं उन्होंने। दोनों लड़कियाँ ख़ौफ़ के साये में ही कली से फूल बनीं। ख़ुर्शीद बी ख़ुद भी, वरना वो दिन भी थे जब कश्मीर की ख़ूबसूरत वादियों में ब्याही जाने का उन्हें गर्व था। रज़्ज़ाक मियाँ का अपना शिकारा था। डल लेक की सतह पर दुल्हन-सा सजा उनका शिकारा तैरता रहता। शिकारे का नाम बहुत सोच समझकर उन्होंने 'न्यू अशोका' रखा था। सैलानी पूरे-पूरे दिन उस पर सैर किया करते। ख़ुर्शीद बी छोटी-सी डोंगीनुमा नाव खेती सैलानियों के कहने पर फूल लातीं या अखरोट चिलगोजे। तब वे अखरोट की छाल से अपने दाँत मोती जैसे चमकाती थीं। होंठ लाल दहक उठते थे... बड़ी सुंदर थीं वे तब। लेकिन उन्हें अपनी ख़ूबसूरती का एहसास तक न था। दिन-भर वे अपनी गृहस्थी में रमी रहतीं, बच्चों की परवरिश में रमी रहतीं और रज़्ज़ाक मियाँ की आँख के इशारे पर सौ-सौ जान से क़ुर्बान होती रहतीं। ज़िंदगी के अभावों के बीच भी उन्हें अपने शौहर पर नाज़ था।

> कमरे में चाय की चुस्कियाँ गूँजती रहीं और गूँजता रहा ख़ौफ़नाक सन्नाटा, जो उस घर के हर शख़्स के चेहरे से उतरकर फ़र्श और दीवारों को सहमा रहा था। बोसीदा घर पर दहशत तारी थी और घाटी में धुआँ हुए वजूद को अपने में समो लेना चाहती थी।

शिकारे में सैलानियों के बैठते ही रज़्ज़ाक मियाँ शुरू हो जाते-'जनाब, मशहूर है हमारा शिकारा। डल लेक की सैर करने वाले लोग हमें ही पूछते हैं कि कहाँ है रज़्ज़ाक मियाँ का शिकारा? इसीलिए तो इसका नाम 'न्यू अशोका' रखा। आराम से बैठ जाइए जनाब, तकियों के सहारे...कंबल ओढ़ लीजिए। सर्दी बहुत है। मैं कांगड़ी गरम किए देता हूँ।'

रज़्ज़ाक मियाँ कांगड़ी में अंगारे भरकर उन्हें देते। सैलानियों के सुकून के साथ ही रज़्ज़ाक मियाँ की जानकारियों की पोटली खुलने लगती-'जनाब, ये सामने महाराजा कर्ण सिंह की कोठी है। पिछले साल सर्दियों में डल का पानी जमकर बर्फ़ हो गया था... तो इस पर स्केटिंग की थी उन्होंने... ख़ूब फिसले थे सैलानी इस पर...' रज़्ज़ाक मियाँ हँसने लगते, सैलानी भी हँसते। रज़्ज़ाक मियाँ दुगने जोश से बताने लगते- 'यह पहाड़ पर पीछे की तरफ़ अकबर का किला है, इस तरफ़ सबसे ऊँचा यह शंकराचार्य का मंदिर है। थोड़ा चढ़कर जाना

पड़ता है। पर रास्ता अच्छा है। जी हाँ... पहाड़ी रास्तों जैसा ही तो होगा न। यह स्वीमिंग बोट है। देखिए, उस तरफ़ देखिए... दिखा न! इधर वॉटर स्वीमिंग करते हैं। एक मिनट का दो रुपया लगता है। यह सामने जो दो पहाड़ दिख रहे हैं न...वे जहाँ जुड़ते हैं। वह पंच सितारा होटल है। उसी में रुके थे शम्मी कपूर साहब अपनी यूनिट के साथ...अरे वही 'कश्मीर की कली' फ़िल्म बनी थी न, अब क्या बताएँ जनाब, इसी शिकारे पर शम्मी कपूर साहब शूटिंग से निपटकर आराम फ़रमाते थे... मेरी बीवी के हाथ का कहवा उन्हें बहुत पसंद था।'

'हमें भी पिलवाइए मियाँ... कश्मीरी कहवा।'

'कहवा तो जनाब कश्मीरी ही होता है, अभी लीजिए।' और बेंतों के झुरमुट के नज़दीक वे शिकारा रोक देते। वहीं ख़ुर्शीद बी अपनी छोटी-सी नाव पर होतीं कहवा बनाने का सामान और बिस्किट लिए। डल लेक पर बेंतों के झुरमुट के बीच शिकारे में बना कहवा सैलानियों को दुगुना लुत्फ़ और गर्मी देता। इस मेहमाननवाजी का कभी वे अतिरिक्त पैसा नहीं लेते सैलानियों से।

'देखिए जनाब उधर दो स्पेशल शिकारे खड़े हैं न, उनमें इंदिरा गाँधी आकर रुकती हैं। जब वे रुकती नहीं हैं न तो शिकारा मैं चलाता हूँ।'

रज़्ज़ाक मियाँ का सीना गर्व से चौड़ा हो जाता। यही तो बातें हैं, जो उन्हें सैलानियों के बीच चर्चित करती हैं। उनके कहने के लहज़े पर रीझ जाते थे वे और घंटों सैर करते रहते डल लेक पर। रज़्ज़ाक मियाँ मेम साहबों को बड़े अदब से वॉटर लिली के फूल तोड़कर देते। बच्चों के लिए उनके शिकारे में छोटी-सी पतवार भी थी। उनका मानना था कि सैलानी मौज-मस्ती के लिए कश्मीर आते हैं, तो हमें भी उनका पूरा ख़याल रखना चाहिए। सैलानियों के पास चाहे जैसा कैमरा हो, रज़्ज़ाक मियाँ फ़िल्मी पोज में फ़ोटो भी खींच देते थे उनकी।

डल लेक श्रीनगर की जान थी। क्या नहीं था उस पर! पूरा का पूरा बाज़ार शिकारों पर सजा रहता। कपड़े, राशन, फल, फूल, मक्खन, मछली, चाय, बिस्कुट... ख़ुर्शीद बी अकसर शिकारों पर से ही सौदा सुलफ़ करतीं। दिन के बारह घंटे रज़्ज़ाक मियाँ के शिकारा पर ही गुज़रते। मई-जून का महीना उनके लिए ईद का महीना साबित होता। पूरे दिन शिकारा सैलानियों में व्यस्त रहता और झुटपुटा होते ही जब हाउसबोट रोशनी और चहल-पहल से आबाद होने लगती, तब अपने ऊँघते शिकारे को किनारे पर खड़ा कर रज़्ज़ाक मियाँ के जिस्म में सुकून तारी होने लगता। अपने छोटे से घर में बच्चों की चहक के बीच ख़ुर्शीद बी मटन का सालन पका रही होतीं या पालक गोश्त। दूर कश्मीरी भट्ट के घर पक रहे कड़म के साग की ख़ुशबू ख़ुर्शीद बी के पकाये पालक गोश्त में घुल मिलकर एक नई महक पैदा कर देती। ख़ुशबुओं का मिलन दिलों का मिलन था... न हिंदू न मुसलमान... पहचान बस कश्मीरी... चाहे भट्ट हों या रज़्ज़ाक मियाँ... सब के सब कश्मीर घाटी के बाशिंदे। यह उन दिनों की बात है, जब नज़ीर और नासिर दीनी तालीम के लिए दरगाह जाते थे। छोटे-छोटे फिरन और ऊनी टोपियाँ

पहनकर। रज़्ज़ाक मियाँ भी फिरन पहनते, सिर पर ऊनी टोपी, पैरों में कश्मीरी जूते... उनके गोरे लाल गालों पर तराशी हुई काली दाढ़ी होती और चमकीली जवान आँखें... कि अचानक इन आँखों में दहशत तारी होने लगी। कश्मीर सुलग उठा। आतंकवाद का दानवी पंजा कश्मीर की वादियों पर क़हर बनकर टूट पड़ा। न बारिश हुई, न ओले गिरे, न हिमपात हुआ, लेकिन डल झील के तैरते बगीचे, स्वीमिंग बोट, हाउस बोट, शिकारे सब बियाबां में तब्दील होने लगे। निशात बाग़, शालीमार बाग़, नसीम बाग़, चश्मेशाही, नगीन लेक, चार चिनार सब पर ख़ूनी शिकंजा कसता गया। हज़रत बल की अज़ान दूर से भी नसीब होना मुश्किल हो गया। समय रिसता रहा। गोलियाँ, बम, हथगोले मानो कश्मीर का शगल बन गए और रज़्ज़ाक मियाँ चौंक पड़े? सियासी ताकतों ने तो जन्नत में भी दखल देना शुरू कर दिया? अल्लाह! क्या होगा अंजाम इनका? कश्मीर की हसीन वादियों के गुण गाते हुए रज़्ज़ाक मियाँ सैलानियों को शेर सुनाते थे– 'अगर फिरदौस बररुए जमी अस्त...अमी अस्त, अमी अस्त।' लेकिन इस फिरदौस का अमन चैन? कहाँ गया वो सुकून? और इसके पहले कि वे अपने फिरदौस के लिए जार-जार आँसू बहाते, बवंडर उनके घर में भी पैबिस्त हो गया। गोलियों की आवाज़ सुन-सुन कर आठ महीने की सईदा अल्लाह को प्यारी हो गई। फिर नसीर गया निमोनिया में और कश्मीर की तरह ही रज़्ज़ाक मियाँ भी उजड़ गए। अपनी हैरत-भरी आँखों से वे देखते रहे कश्मीरी पंडितों और कश्मीरी मुसलमानों का भागना। विस्थापन का दर्द समूचे कश्मीर में फैल गया। भागते हुए भी कितने गोलियों से भून दिए गए, कोई गिनती है? मुट्ठी-भर राजनीतिज्ञों ने पहले भी देश का बँटवारा कर बेगुनाहों के ख़ून की नदियाँ बहाई हैं और अब कश्मीर की भी छीना-झपटी सियासी सनक का ही तो सबूत है। फिर चाहे यह सनक अपनी हवस अमरनाथ तीर्थ यात्रियों पर खाना खाने के दौरान गोलियाँ बरसा कर पूरी कर रही हो या बसों, ट्रकों से कश्मीरियों को उतार-उतारकर जंगलों में ले जाकर गोलियों से भून कर पूरा कर रही हो। घरों में घुसकर मर्दों का क़त्ल और औरतों की अस्मत लूटना तो बड़ी मामूली सी बात है इनके लिए। दुनिया के देशों के बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ, अमेरिका जैसे विश्व के सबसे अधिक ताकतवर देश के राष्ट्रपति जब भारत के दौरे पर आते हैं तो सियासी सनक चित्तीसिंग में पैंतालीस सिखों की निर्मम हत्या करके अपनी कौन-सी ताक़त का सबूत देना चाहती हैं? लश्कर-ए-तोइबा के आत्मघाती हमले, हवाई अड्डों पर तबाही मचाने की धमकी, बांदीपुरा और खन्नाबल के थर्रा देने वाले हमले और लाल किले का वाक़या। कोई हिसाब है इस सबका? पाकिस्तानी अख़बारों ने खुलेआम ऐलान कर दिया था कि हरकतुल मुजाहिदीन के लोग शीघ्र ही जम्मू-कश्मीर में रमज़ान के पवित्र महीने में हमला करेंगे और उनका सबसे ज़ोरदार हमला होगा रमज़ान के सत्रहवें दिन, जब बद्र की लड़ाई लड़ी गई थी।

'अगर फिरदौस बररुए जमी अस्त...अमी अस्त, अमी अस्त।' लेकिन इस फिरदौस का अमन चैन? कहाँ गया वो सुकून? और इसके पहले कि वे अपने फिरदौस के लिए जार-जार आँसू बहाते, बवंडर उनके घर में भी पैबिस्त हो गया।

दोपहर ढलते ही तीन फौजी घर के सामने आए और रज़्ज़ाक मियाँ को बुलाने लगे– 'हम आर्मी पोस्ट से आए हैं। तुम्हारा बेटा और तुम हिजबुल मुजाहिदीन के आदमी हो। चलो बाहर निकलो।'

ख़ुर्शीद बी बुख़ार में चीख पड़ीं– 'कौन कहता है हम उनके आदमी हैं...बरसों से इसी घाटी में रह रहे हैं...कोई उँगली तो उठाए।'

'कल तुम्हारे घर में उनके आदमियों ने खाना खाया।'

'सच है जनाब।' रज़्ज़ाक मियाँ आगे बढ़े– 'लेकिन खुदा क़सम, मैं अपनी रग-रग से कश्मीरी हूँ। शिकारा चलता था जनाब मेरा। बच्चे से जवाँ हुआ यहीं...इन्हीं वादियों

शेष पृष्ठ 71 पर

कहानी

लाभ-हानि

अनवर सुहैल

तनु मनोयोग से संजय का चेहरा देख रही थी।

कितनी पथरीली, खुरदरी हो गई है संजय के चेहरे की धरा... ज्यों तेज़ धूप के लम्बे सफ़र में झुलस गई हो।

पहले तो ऐसा नहीं दीखता था वह, जब तनु संजय की संस्था में टाइपिंग सीखने जाया करती थी। संजय के व्यक्तित्व का आकर्षण ही तो था, जिससे बँधी-खिंची तनु संस्था में जाया करती थी।

कितना सौम्य, आकर्षक था संजय का व्यक्तित्व। साथ ही अपनी चारित्रिक दृढ़ता के लिए भी वह विख्यात हुआ करता था। सज्जनता के पर्याय संजय से महिलाएँ और लड़कियाँ पर्दा नहीं करतीं। बेख़ौफ़ अपनी बातें बतातीं, संजय उनके सुक्खम-दुक्खम सुनता और अपनी धीर-गम्भीर वाणी में दो बातें ज़रूर बताता। एक तो धैर्य, दूजा स्वावलम्बन। वह कहा करता कि दुनिया में वे महिलाएँ सिर उठाकर जी पाई हैं, जो स्वावलम्बी रही हैं। परतंत्र नारियाँ कुंठा और निराशा से घिरकर नर्क-यातना भोगती रहती हैं।

निर्धन और निराश्रित महिलाओं के उत्थान के लिए संजय के दिमाग़ में एक योजना थी। उसकी दीदी जो परित्यक्ता थीं, उन्हें और अन्य कई महिलाओं का सहयोग लेकर उसने एक संस्था की नींव डाली।

सिलाई प्रशिक्षण संस्था। लहँगा, ब्लाउज़, बच्चों के झबले आदि कपड़े सिलकर तैयार होने लगे। संजय इन कपड़ों को थोक दुकानदारों को बेच आता। आय का एक हिस्सा संस्था में लगता। महिलाओं की भी अच्छी-ख़ासी आमदनी हो जाती।

धीरे-धीरे संस्था लोकप्रिय हुई। आय बढ़ी तो एक बड़ा हॉल किराए पर लेकर संस्था में टाइपिंग प्रशिक्षण प्रारम्भ

उपन्यास : पहचान (2009) तीन कथा संग्रह – 'कुजड कसाई' ग्यारह सितम्बर के बाद, गहरी जड़ें। कविता : और थोड़ी सी शर्म दे मौला, संतो काहे की बेचैनी। सम्पादन : संकेत लघु-पत्रिका। सम्मान : मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा कथा के लिए वागीश्वरी सम्मान (2013) गहरी जड़ें के लिए।

हो गया। सिलाई व टाइपिंग के अलावा कुकिंग-बेकिंग क्लास आदि का काम भी किया जाने लगा। राज्य-सरकार की महिला उत्थान योजनाओं से अनुदान भी संजय के अथक प्रयासों से मिलने लग गया।

संजय की परित्यक्ता दीदी और उनके बच्चे साथ ही रहा करते थे। उसके पिताजी कलेक्ट्रेट में बड़े बाबू थे। उनकी मृत्यु के पश्चात संजय को अनुकम्पा-नियुक्ति के तहत नौकरी मिली। पिता के जीवन-काल ही में दीदी ससुराल से प्रताड़ित व अपमानित होकर मैके आ गई थी। दीदी के पति शराबी, व्यभिचारी और अत्याचारी निकले। परिणामत: दीदी ने उन्हें छोड़ना उचित समझा।

संजय की बेरोज़गारी और दीदी की असफल वैवाहिक परिणति ने पिताजी को झकझोर डाला। वे दिमाग़ी शून्यता का शिकार हुए। स्थानीय स्तर पर जो भी चिकित्सा-सुविधा थी, उन्हें आज़माया गया। संजय के बड़े भाई अजय, जो कि एनटीपीसी में अधिकारी हैं, उन्होंने भी अंत समय में काफ़ी ख़र्चा किया, किन्तु पिताजी बचाए नहीं जा सके।

पिताजी की मृत्यु का कारण चाहे हो रहा हो, अजय भाई साहब इसे आज भी संजय की बेरोज़गारी और अकर्मण्यता को मानते हैं। इसी बात पर उन्होंने संजय

को ऐसी जली-कटी सुनाई कि दोनों भाइयों के बीच सम्बधों में दरार आ गई। अम्मा ने लाख प्रयास किए, किन्तु यह खाई पटी नहीं।

पिताजी की मृत्यु, दीदी के दुःख और अजय भाई साहब के अहंकार से संजय इतना आहत हुआ कि उसने प्रतिज्ञा कर डाली कि वह शादी नहीं करेगा।

अम्मा ने कसमें खाई, मर जाने की धमकी तक दी, किन्तु संजय टस-से-मस न हुआ।

दो लड़के और एक लड़की की माँ यानी अम्मा पर संजय की शादी के लिए समाज का बढ़ता दबाव बढ़ता जा रहा था। अम्मा करें तो क्या करें? कोई खोट भी तो नहीं था उसमें। दिन-रात काम में मगन रहता। संस्था, नौकरी और घरेलू ज़िम्मेदारियाँ, सभी मोर्चों पर चुस्त-दुरुस्त कहीं, कोई ख़ामी नहीं।

अजय भाई साहब जाने कहाँ-कहाँ से संजय के विवाह के लिए ''हाई-प्रोफ़ाइल'' रिश्ते ला-लाकर अम्मा के कान भरते। उन्हें उकसाते, लड़कियों के फ़ोटो घर में छोड़ जाते। अम्मा ठहरीं भोली-भाली। हर तस्वीर उन्हें भा जाती, लेकिन शादी तो उनकी थी नहीं। संजय बाबा को पसंद आए, तब न बात आगे बढ़े।

अजय भाई साहब संजय की उदासीनता से और अधिक उग्र हो जाते। दो चोंच झगड़ा दोनों भाई में हो ही जाता। संजय अल्टीमेटम दे देता– ''शहर की चिंता में काजीजी न ही दुबलाएँ तो अच्छा... मेरी चिंता कोई न करे...। बस!''

अम्मा हर वाक्-युद्ध के बाद अन्न-जल त्याग देतीं। फिर अजय भाई साहब के जाने के बाद संजय अम्मा को मना लेता।

ऐसे ही एक दिन छोटी बहू का मुँह देखे बिना अम्मा चल बसीं।
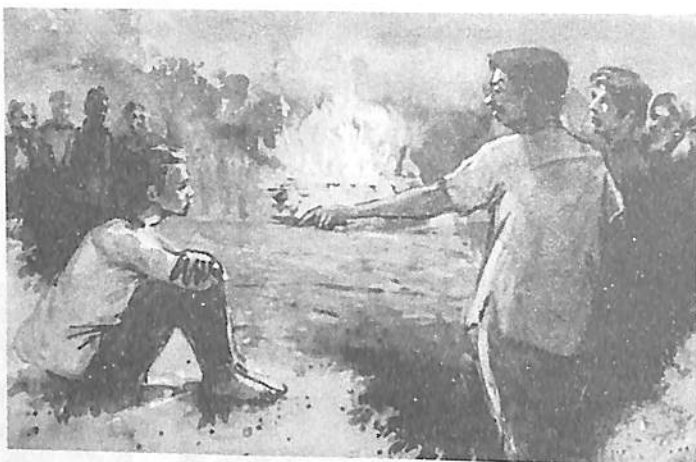
क्रिया-कर्म के दौरान अजय भाई साहब ने कई लोगों के सामने ऐलान कर दिया कि पिताजी और अम्मा की मृत्यु के पीछे इस नालायक और ज़िद्दी संजय का ही हाथ है। यह ऐसा ज़हर-बुझा तीर था, जिससे संजय आज भी आहत है।

तनु संजय के चेहरे को ताक रही थी। संजय एक फाइल खोलकर पेपर में उलझा हुआ था। बीच-बीच में वह कुछ बुदबुदाता जाता, जिसे तनु अपनी डायरी में लिखती जाती। राज्य-शासन की तरफ से ''ऑडिट'' का झमेला आ खड़ा हुआ है। फ़र्ज़ी संस्थाएँ तो हिसाब-किताब एकदम फिट रखती है, लेकिन संजय जैसे भावुक व्यक्ति के लिए आय-व्यय की व्यवहारिकता को लिपिबद्ध करना मगजपच्ची का काम था। तनु अर्थशास्त्र से एम॰ए॰ है। वह भी संजय की यथासंभव मदद कर रही थी। दीदी को सिर्फ़ नाम की संचालिका बनाया गया था। सारा काम तो संजय के मत्थे है। यह तो जब से तनु आ गई है। संजय का बोझ बहुत हल्का हो गया है। दीदी और तनु मिलकर संस्था का अधिकांश काम सुलटा लेती हैं।

संस्था में एक बड़ा-सा हॉल है, जिसके अलग-अलग खण्ड हैं। एक कोने में सिलाई, दूजे में टाइपिंग, तीसरे कोने में कुकिंग क्लासेज़ और चौथे कोने में कढ़ाई-बुनाई। हाल से लगा एक ऑफ़िसनुमा कमरा, जिसमें चार कुर्सियाँ हैं। संजय, दीदी, तनु और चौथी कुर्सी

आंगतुक के लिए।

तनु ने टाइपिंग का काम इसी संस्था में सीखा है। फिर जाने क्या हुआ कि तनु ने महिला-स्वावलम्बन की संस्था से ख़ुद को इस तरह जोड़ लिया कि संजय उसे संस्था की रीढ़ की हड्डी कहता है। तनु परवाह नहीं करती कि पीठ पीछे लोग क्या कहते हैं? छोटे शहर में जवान लड़की का इतना बिंदास होकर रहना चर्चा का विषय बन ही जाता है।

तनु पाँच बहनों में सबसे बड़ी है। उसके क्लर्क पिता ने पुत्र की चाह में धड़ापड़ पाँच अवांछित बेटियों का अम्बार लगा लिया। संयोग से छठवीं संतान पुत्र के रूप में हुई और उनके घर की प्रयोगशाला में बच्चे जनने की प्रक्रिया बंद हुई। यह अलग बात है कि इतनी मान-मनौती के बाद उत्पन्न पुत्र यानी तनु का भाई एक नम्बर का नालायक़ और बदतमीज़ निकला। लौंडों के साथ नशाख़ोरी करने लगा। अब तो वह घर भी कम ही आता है।

तनु से छोटी बहन एक लड़के से प्यार करने लगी और एक दिन ऐसा गई कि आज तक वापिस लौटकर घर नहीं आई। उसके बाद वाली बहन ने दसवीं परीक्षा में अनुतीर्ण होने पर आत्महत्या कर ली। अब ऐसी घटनाएँ जिस घर में हों, तो उस परिवार की सामाजिक दुर्दशा का अंदाज़ा सहज ही लगाया जा सकता है। तनु के परिवार की नगर में कोई इज़्ज़त नहीं है। लोग बड़ी हिक़ारत से उन्हें देखते हैं। बाक़ी बहनें भी इतनी जल्दी जवान हो रही हैं कि तनु ख़ुद हैरान है। खाने-पीने का ठिकाना नहीं और जवानी के फूल खिलते जा रहे हैं। तनु ने तीसरे नम्बर की बहन रेणु की शादी एक स्वधर्मी विधुर से करा दी। छोटी मनु ज़रूर तेज़ है पढ़ाई में। वह अपनी दीदी तनु की हर बात मानती है। शर्मीली है और स्कूल में अच्छा रिज़ल्ट लेकर आती है। तनु अपनी छोटी बहन को बहुत मानती है और उसे बारहवीं के बाद बाहर पढ़ने के लिए भेजना चाहती है। घर में कम-से-कम एक बच्ची तो आगे बढ़े। बुझते दिये की आख़िरी लौ को बचाकर रखने के लिए तनु ने घर में रहकर कोई काम ढूँढ़ना चाहा। एम०ए० अर्थशास्त्र होने से ऐसा नहीं था कि काम मिल जाता। टीचर बनने गई तो निजी स्कूल के संचालकों ने बी०एड० की माँग की और बिना बी०एड० के नाम-मात्र की तनख़्वाह पर नौकरी करने पर मजबूर किया। पाँच-छः घण्टे की ड्यूटी और पेमेंट के नाम पर हज़ार-बारह सौ रुपल्ली। उसने सोचा कि टाइपिंग सीख ली जाए, ताकि कोई अच्छा-सा काम मिल सके। आजकल कम्प्यूटर के की-बोर्ड से भी टाइपिंग सिखलाई जाती है। संजय की संस्था में दोनों तरह की टाइपिंग सीखने की व्यवस्था है।

संजय की संस्था में आई तो थी, वह एक प्रशिक्षिका बनकर, लेकिन देखते-देखते वह एक स्वयंसेविका बन गई। उसने अपने संपर्क से समाज की कई बेसहारा युवतियों को प्रेरित किया कि वे संस्था में आयें और कौशल-विकास करें। संस्था को कपड़े सिलने का थोक में आर्डर मिलता ही था। तनु के प्रयासों से संस्था में अचार, पापड़ बड़ी बनाने का प्रशिक्षण भी दिया जाने लगा। संजय ने कई व्यापारियों से सम्पर्क किया और

उनसे कच्चा माल लेकर सिर्फ़ मेहनताना के बदले सामान बनाना शुरू कर दिया।

संजय अब तनु की उपस्थिति से अनभिज्ञ नहीं था। वह जानता था कि संस्था की उन्नति में इस लड़की का बड़ा हाथ है। समाज में तिरस्कृत रहकर भी स्वावलम्बन के लिए प्रतिबद्धता तनु का एक दूसरा नाम है। संजय की चारित्रिक दृढ़ता और काम के प्रति सनक से तनु इतनी प्रभावित थी कि वह उसके अस्तित्व को अपने अस्तित्व के साथ जोड़कर देखने लगी थी। संजय को वह गुरु मानती थी। संजय भी तनु को संस्था की एक आवश्यक सहायक मानता था।

लेकिन इसके अतिरिक्त भी वहाँ कुछ था, जो तनु के जीवन में रासायनिक परिवर्तन ला रहा था। क्या संजय इस बात से अनजान है? तनु यही सोच रही थी कि संजय की घुड़की ने उसकी तंद्रा भंग की- "काम के समय काम की सोचा करो..."

तभी बाहर किसी कार के रुकने की आवाज़ आई। संजय कार्यालय से बाहर आया। कार संस्था के प्रांगण में आ कर रुकी। दरवाज़ा खुला और अजय भाई नमूदार हुए।

संजय को खटका लगा। अजय भाई साहब, इस समय बिना किसी पूर्व सूचना के, वह भी कार पर सवार? कई प्रश्न एक साथ कुलबुला उठे।

समाधान भी शीघ्र मिल गया।

अजय भाई साहब तोप के गोले की तरह कमरे में दाख़िल हुए। संजय ने अभिवादन किया, जिसे अनदेखा कर भाई साहब बोले- "संजय, चलो साथ में घर चलो।"

एक आदेश था वह, जिसमें प्रश्न की कोई गुंजाइश नहीं दिखती थी।

संजय ठंडे स्वर में बोला- "आप बिना सूचना के इस समय? कोई बात है क्या?"

भाई साहब की आवाज़ पिनपिना गई- "यार समझा करो, प्रश्न बाद में कर लेना। पहले उठकर बाहर तो चलो।"

संजय को क्रोध आ गया- "ऐसी कौन मुसीबत आ गई है या पहाड़ टूट पड़ा है। बताते क्यों नहीं?"

भाई साहब की भृकुटि तन गई- "होशियारी दिखाने से बाज नहीं आओगे, बस ज़िद पर अड़े रहोगे। अरे भाई, बाहर गाड़ी में हमारे क्षेत्र के विधायक जी बैठे हैं। अपनी भतीजी के लिए वह तुम्हें देखने आए हैं, समझे?"

तो यह बात है... संजय मन-ही-मन सोचकर गम्भीर हो गया- आप मुझसे पूछकर तो आए नहीं कि अगवानी के लिए बैंड-बाजा लेकर हाज़िर रहूँ। आप उन्हें लेकर घर चलिए... ज़रा-सा काम निपटाकर मैं पहुँच रहा हूँ।

संजय की इस बात ने अजय भाई साहब के लिए आग में घी का काम किया। उनका पारा सातवें आसमान में चढ़ गया। बिगड़कर बोले- उन्हें लेकर घर चलिए... हुँह... कौन से घर, उसी कबाड़खाने में... जो कहता हूँ, वह करता नहीं और सलाह देता है मुझे। विधायकजी कितनी मान-मनौती के बाद तैयार हुए हैं बेवकूफ़...। ज़िन्दगी बन जाएगी तेरी... समझा!

"मत बनाइए आप मेरी ज़िन्दगी... समझे भाई साहब, अम्मा-पिताजी के जीते जी यदि मेरी शादी न हुई तो अब करूँगा भी नहीं। समाज का यदि बहुत ज़्यादा दबाव पड़ेगा या मुझे ज़रूरत होगी तो तनु के पिता से आज्ञा लेकर इस लड़की से विवाह कर लूँगा।

लाभ-हानि की मुझे फ़िक्र नहीं। आप अपनी सोचिए... इसके आगे मुझे कुछ नहीं कहना..."

अजय साहब भन्नाकर कार्यालय से बाहर चले गए। तनु अवाक संजय के चेहरे को निहारने लगी।

क्या वह भी ऐसा ही सोच रही थी, जैसा संजय ने भाई साहब से कहा था...

संपर्क : टाइप 4/3, आफ़िसर कालोनी
पो.-बिजुरी, जिला- अनूपपुर
मध्य प्रदेश- 484440

कहानी

छोटे घर की माँ

मधु कांकरिया

किसी अनिष्ट की आशंका से ग्रस्त मीना को लगा जैसे उसके आगे सारा ब्रह्माण्ड घूम रहा है, दीवार पर लटकी घड़ी, कैलेण्डर, शिवजी की तस्वीर.... सब डोल रहे हैं। यूँ आज जो कुछ भी हुआ, उसके लिए वह स्वयं को जाने कितनी बार धिक्कार चुकी थी। उसने सोचा, पिछले तीन-चार घंटों में जिस नसतोड़ तनाव ने जकड़ रखा है, उससे यदि शीघ्र ही उसे मुक्ति नहीं मिली, तो उसे 'ब्रेन हेमरेज' हो जाएगा। उसने सुन रखा था कि अत्यधिक मानसिक तनाव से ब्रेन हेमरेज हो जाया करता है। दिसम्बर के महीने में भी सारा शरीर पसीने-पसीने हो गया था उसका।

पिछले घंटे-डेढ़ घंटे में नहीं तो भी चार-पाँच दस्त लग गए थे उसे। यह उसकी पुरानी बीमारी है कि जब कभी भी मस्तिष्क की शिराओं में खींचातानी हुई कि उसे दस्त होना शुरू हो जाता है। शुरू-शुरू में घंटे- डेढ़ घंटे में तो फिर भी इतनी भयंकर चिंता नहीं हुई थी उसे, सोचती रही थी– अब आया, अब आया समीर, पर ज्यों-ज्यों घड़ी की सुइयाँ आगे सरकती गयीं, उसे लगा कि सचमुच ही आने वाले समय में कुछ बहुत ही अशुभ एवं अनहोनी होने जा रही है। यूँ कोई विशेष बात भी नहीं हुई थी, पर कई बार छोटी-सी बात भी विकराल रूप धारण कर सर्वनाश कर देती है। अतीत में पढ़ी-सुनी जाने कितनी घटनाएँ आँखों के सामने नाचने लगी थीं, जब छोटी-सी बात से आत्महत्या तक हो गयी थी। ख़ुद उसी की दूर के रिश्ते की एक बहन थी। नहीं, बहन कम सखी अधिक थी पूनम। बहुत ही संवेदनशील। बेहद भाव-प्रवण, जैसे हाड़-माँस से नहीं, भावनाओं एवं संवेदनाओं से बनी हो। पति ने जाने किस ग़लतफ़हमी में शादी के एकदम शुरू के सप्ताह में

मधु कांकरिया का जन्म 23 मार्च 1957 को हुआ था. उनके पाँच उपन्यास– खुले गगन के लाल सितारे(2000), सलाम आख़िरी (2002), पत्ता खोर (2005), सेज पर संस्कृत (2008), सूखते चिनार (2012) कहानी संग्रह– बीतते हुए (2004), और अंत में ईशु (2008), चिड़िया ऐसे मरती है (2011), भरी दोपहरी के अँधेरे (प्रतिनिधि कहानियाँ), दस प्रतिनिधि कहानियाँ (2013), युद्ध और बुद्ध (2014) प्रकाशित हो चुके हैं। कथाक्रम सम्मान, हेमचंद्र स्मृति साहित्य सम्मान, समाज गौरव सम्मान, विजय वर्मा कथा सम्मान आदि से सम्मानित।

'अनुभवी' कह दिया कि बैगान स्प्रे पी गयी.... यह तो भाग्य सिकंदर था कि आनन-फानन में ही नर्सिंग होम में एडमिट हो गयी, वरना लेने के देने पड़ जाते।

कहीं समीर ने भी.... एक काल्पनिक भय से सर्वांग सिहर उठा था उसका। जाने कितने देवी-देवताओं को प्रसाद चढ़ाने की बात बोली, जाने कितनों से मन्नत माँगी, पर दूर-दूर तक समीर कहीं भी नज़र नहीं आ रहा था उसे। कमरे से सटे छोटे-से बरामदे की ग्रिल से लगातार ऊँट की तरह गर्दन बाहर निकालते रहने के कारण गर्दन में भी ऐंठन आ गयी थी।

दो पुत्र थे उसके, संदीप और समीर। संदीप इसी महीने हायर सेकेण्ड्री का इम्तिहान देने जा रहा था। शांत, सौम्य और अध्ययनप्रिय। संदीप को उसके माँ-बाप ने, शिक्षकों ने, असुरक्षा एवं परिवार की निर्धनता ने अभी तक सिर्फ़

एक ही सपना– परीक्षा में उच्चतम अंक प्राप्त कर अपना कैरियर बनाने का सपना दिखाया था। स्वप्नों में भी वह किताबों की दुनिया में ही रहता। पर जितनी मेहनत वह कर रहा था, उस हिसाब से उसकी तैयारियाँ नहीं हो पा रही थीं। कारण पाँच सदस्यों के उस परिवार में ले-देकर एक ही कमरा था और कमरे से सटा एक कोठरीनुमा छोटा-सा बरामदा। वही कमरा इस परिवार का बेडरूम, ड्राइंग रूम, स्टडी रूम सब कुछ था।

प्राय: ही एकाग्रचित्त होकर पढ़ते-पढ़ते संदीप को कभी पड़ोसियों की बातूनी आदतें, तो कभी फेरीवालों, दूधवालों, फलवालों, तो कभी घर के नौकर के आने-जाने और बतियाने से, तो कभी घरवालों की रोज़मर्रा की बातचीत से भी ज़बरदस्त विघ्न पहुँचता रहता था।

स्वभाव से ही सबसे घुलने-मिलने वाली होने के कारण मीना अपने पड़ोसियों के बीच काफ़ी पसंद की जाती थी। इस कारण प्राय: ही खाली समय मिलते ही सभी पड़ोसिनें मीना के पास जी हल्का करने और गपियाने के लिए चली आतीं। हर किसी के पास अपने दुखों की पोटलियाँ थीं। किसी की अपनी बहू से नहीं बनती थी, तो किसी की सास ने अपने पोते को इस प्रकार अपने बस में किया हुआ था कि उसे लगता कि बेटा उसका रहा ही नहीं, तो किसी को लगता कि उसके पति अपनी सही कमाई का हिसाब उसे नहीं देते हैं और आधे से ज़्यादा कमाई उसकी ननद के बच्चों पर उड़ा देते हैं। मीना अपनी सहज बुद्धि से सबको शांत कर देती। हर वक़्त अपनी पड़ोसिनों का हँसकर स्वागत करती। पर इन दिनों वह प्राय: अपनी पड़ोसिनों से कन्नी काटे रहती। कई बार वह इशारे से उन्हें बता भी चुकी थी कि अभी संदीप की बहुत ही महत्त्वपूर्ण परीक्षाएँ होने वाली हैं। इस कारण वह उसे किसी भी प्रकार डिस्टर्ब करना नहीं चाहती। लेकिन पड़ोसी, कि एकदम ही चिकने घड़े, थोड़ी देर के लिए स्वयं को रोके रखते, फिर वही घोड़ा वही मैदान। पड़ोसियों से ज़्यादा बिगाड़ भी नहीं किया जा सकता था, बाल-बच्चों वाला घर, कब किसकी ज़रूरत आन पड़े। इस कारण इन दिनों मीना पड़ोसिनों को अपने घर आने से रोकने के लिए स्वयं ही उनके घर जमी रहती घंटों।

शुरू-शुरू में तो उसने भरसक चेष्टा भी की कि किसी प्रकार थोड़ा बहुत खर्च-वर्च कर भाड़े का एक कमरा ले लिया जाए, जहाँ संदीप निर्विघ्न पढ़ सके। कई लोगों से इस बारे में पूछताछ भी की, पर अंजाम शून्य निकला। कई बार तो लोग उसके मुँह पर ही कह बैठते, कोलकाता जैसे महानगर में इतने रुपयों में एक कमरा तो क्या अच्छी खोला-बाड़ी तक न मिले। मन मसोस कर रह जाती वह जब देखती कि उसी के हमउम्र लड़कों को कितनी सुविधाएँ प्राप्त हैं। ...न सिर्फ़ अलग कमरा, वरन ढेर सारी किताबें, कई-कई ट्यूशन, अच्छा पौष्टिक भोजन। और एक वह है कि पूरा एकांत तक नहीं जुटा पाती है अपने लाड़लों को। महीनों बीत गए, पति एवं अपने छोटे बेटे से खुलकर बात किये। डर! डर! डर! रात दिन यही डर कि वे ऐसा कुछ भी न करें जिससे संदीप की पढ़ाई में किसी प्रकार का कोई विघ्न पहुँचे। पति ने तो फिर भी स्थिति की गंभीरता को देखते हुए अपने मुँह पर 'बंद है' की पट्टी चढ़ा ली थी, पर असली मुसीबत मीना को अपने छोटे बेटे समीर से थी।

किसी पहाड़ी झरने-सा मस्त, आज़ादी पसंद, बातूनी एवं टी०वी० देखने के शौक़ीन, चौदह वर्षीय समीर के ग्रह इन दिनों बहुत ही ख़राब चल रहे थे। शुरू-शुरू में तीन -चार महीने तो भरपूर साथ दिया उसने परिवार का, पर अब जैसे जैसे परीक्षाएँ निकट आ रही थीं संदीप की, टी०वी० नहीं चलाने की, बातचीत नहीं करने की, घर पर यार-दोस्तों के साथ नहीं बतियाने की जैसी पाबंदियों का शिकंजा इस कदर कसता जा रहा था समीर पर कि ज़िंदगी एकदम ही बदरंग और बेस्वाद हो गयी थी। कई बार उखड़ जाता वह, झल्लाकर कहता, 'तुम्हारा बस चले तो मुझे तो क्या सड़क पर चीखती ट्राम-बस तक को चुप करा दो, कुत्ते तक पर भौंकने की पाबंदी लगा दो। अपने लाड़ले के लिए। '

पूरे दिन में सिर्फ़ घंटे-भर के लिए उस घर में एक सहज, स्वाभाविक एवं उन्मुक्त हवा बहती, जब शाम के समय संदीप हवाखोरी के लिए निकलता। ये ही कुछ पल होते, जब परिवार के सभी सदस्य आपस में खुलकर, सहज, स्वभाविक होकर हँसते-बोलते थे। मुक्ति के ऐसे क्षणों को समीर पल-भर के लिए भी व्यर्थ न कर संदीप के जाते ही टी०वी० खोलकर समाधिस्थ हो जाता था। मुक्ति के ऐसे कुछ पल उस वक़्त भी आते, जब संदीप नहाने के लिए जाता या खाने के लिए बैठता।

रफ़्ता-रफ़्ता इसी प्रकार जीवन चल रहा था। अपने पुत्र की पढ़ाई के प्रति पूर्णत: समर्पित मीना संदीप की नींद ही सोती एवं उसी की नींद जागती। सुबह संदीप के उठने के पूर्व ही वह चाय बनाकर तैयार रखती, रात उसके सोने के बाद स्वयं सोने जाती। जब कभी भी समीर को यह चुप्पी असह्य हो जाती तो 'बस कुछ दिन और' की स्नेहयुक्त थपकी से मीना बेटे समीर को बहलाकर रखती और ये कुछ दिन भी इसी प्रकार बीत जाते कि अकस्मात आइना टूट गया, सब लय-ताल बिगड़ गयी। हुआ यूँ कि पिछले कई दिनों से क्रिकेट का टेस्ट मैच चल रहा था। पूरा शहर ही जैसे क्रिकेट की ख़ुमारी में डूबा हुआ था। समीर कई बार टी०वी० देखने की ज़िद कर चुका था। पर हर बार संदीप की पढ़ाई के चलते उसे टी०वी० चलाने से रोक दिया गया। सिर्फ़ एक दो बार जब संदीप नहाने या खाने के लिए उठा, तभी कुछ समय के लिए टी०वी० खोला गया था। कितनी ही बार मीना ने उससे आग्रह किया कि वह अपने किसी दोस्त या पड़ोसी के यहाँ टी०वी० देख ले, पर दोस्त का घर उसके घर से बहुत दूर था और पड़ोसी के यहाँ उसके बराबर का कोई था नहीं, इस कारण कहीं भी जाना उसे रुचिकर नहीं लग रहा था। इस कारण पूरे दिन ट्रांज़िस्टर को ही कानों से चिपकाए-चिपकाए कमेंट्री सुनता रहा था वह। पर उस दिन मीना का भाग्य ही ख़राब था। समीर के ट्रांज़िस्टर की बैटरी काफ़ी कम हो गयी थी और मैच क्लाइमेक्स पर चल रहा था। मैच देखने का लोभ रोके नहीं रुक रहा था। आस-पास से ज़रा सा भी हल्ला आता तो कान खड़े हो जाते उसके, कौन टपका? जानने को मरा जाता। हिसाब लगाता, हिसाब से तो अभी तक तो सेंचुरी हो जानी थी विराट कोहली की। क्या हुआ? कहीं आउट तो नहीं हो गया। ट्रांज़िस्टर को भी अभी ही जाना था। मजबूर हो फिर आया माँ के पास, 'प्लीज़ चलाने दो न टी०वी०, बस घंटे भर के लिए। समीर की इस हद तक उत्कंठा को देख मीना उसे मैच देखने की इजाज़त दे भी देती, पर पिछले तीन दिनों से संदीप की पढ़ाई में लगातार विघ्न चल रहा था। तीन दिन पहले ही ट्राम-भाड़े में वृद्धि के प्रतिवाद-स्वरूप ठीक उसके घर के सामने स्थानीय छुटभैये नेताओं के नेतृत्व में लोगों ने जमकर उपद्रव किये थे– चलती ट्रामों को जबरन रोककर जला दिया गया था। पूरे दिन हो हल्ला और मार-पीट होती रही थी। चाहकर भी संदीप मन को एकाग्र नहीं कर पाया था और घर के बरामदे से खड़ा-खड़ा जलती ट्राम का अभूतपूर्व नज़ारा देखता रहा था।

और ठीक इसके दूसरे दिन ही मीना के दूर-दराज़ के कोई भाई साहब अपने समय का सदुपयोग करने उसके यहाँ आ धमके थे और पूरे तीन चार घंटे अपनी बुलंद आवाज़, अपने हँसी-ठहाकों से संदीप की पढ़ाई का बारह बजा चुके थे। 'संदीप की पढ़ाई का नुक़सान हो रहा है ' का अप्रत्यक्ष संकेत मीना काफ़ी चतुराई से दो-तीन बार दे भी

कलेजे को ठंडक नहीं पहुँची तो उसे धकेलते हुए फुफकार उठी वह, 'जा निकल जा घर से कमीने! जब मैं मर जाऊँ, तब भी पूरा मैच देखकर ही फूँकना मुझे।' उसके बाद से ही समीर नदारद था घर से।

घंटा-आध घंटा तो स्वयं के मानसिक उद्वेग से ही उबर नहीं पायी थी मीना। रह रहकर अपनी ग़रीबी, असमर्थता, जगह की कमी जैसे अभावों के दंश उसे एक साथ डसने लगे थे। अभावों से भरी उसकी ज़िंदगी का एकमात्र प्रकाश-पुंज था -उसका पुत्र संदीप, जिस पर वह किसी भी प्रकार के अभाव की आँच तक नहीं आने देना चाहती थी।
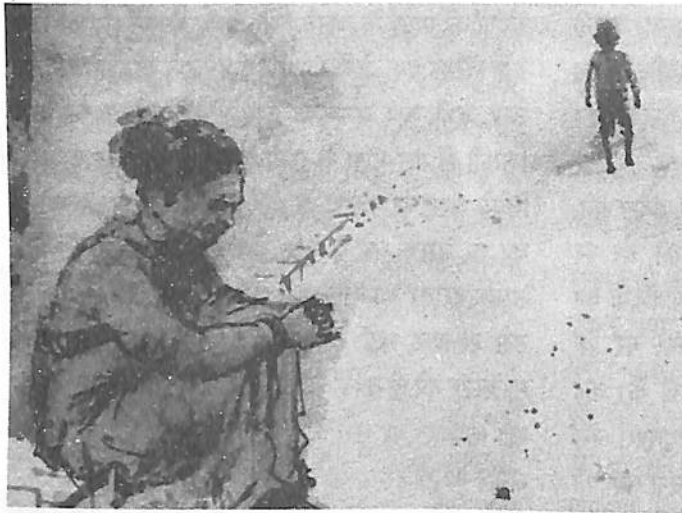
चुकी थी। पर काला अक्षर भैंस बराबर वाले मीना के भाई को इसमें परेशानी या चिंतावाली कोई बात ही समझ में नहीं आई और जब अंत में उन्हें यह समझ में आया कि सिवाय समीर के कोई भी उनके अंतहीन किस्से-कहानियों का उत्साही श्रोता नहीं रह गया है, तो वे चलते बने थे।

अभी तक पिछले तीन दिनों की पढ़ाई के नुक़सान की टीस भी ठंडी नहीं पड़ी थी मीना की, कि आज समीर फिर रट लगा बैठा टी०वी० चलाने की। इस कारण सारा गुस्सा उसका समीर पर ही उतर आया था। गुस्से में फुफकारती एवं दाँत पीसती हुई वह समीर पर ही बरस पड़ी थी, 'चुल्लू भर पानी में डूब मरो, किसी की ज़िंदगी का सवाल है और तुम हो कि अपनी ज़रा सी मौज-मस्ती भी छोड़ने को तैयार नहीं।'

समीर भी भरा बैठा था, फूट पड़ा, 'घंटा भर टी०वी० चला लेने से ऐसा कुछ अनर्थ नहीं हो जाएगा। दिन-भर किताबों में सर गड़ाकर संदीप को क्या शेक्सपीयर बना दोगी? जब देखो मुँह सिलकर रहो, जैसे घर नहीं कोई जेलख़ाना हो। अरे, पढ़ने वाला तो सड़क की रोशनी में पढ़कर भी विद्यासागर बन जाता है।'

'क्या कहा?' उस क्षण की लपट ने जैसे सब कुछ छीन लिया उससे...संयम, धैर्य, विवेक। दनादन दो भरपूर चाँटे दे मारे उसने समीर के गोरे गालों पर। फिर भी

और एक समीर था कि उसे सहारा देने के बजाय हर वक़्त कोई-न-कोई बखेड़ा तैयार ही रखता। मन सचमुच डूबने लगा था उसका और यही सब सोचते-सोचते उसकी आँखों से विवशता के आँसू छलकने लगे थे। जाने कितनी मुसीबतें सहकर पाला था उसे। ईश्वर की कृपा से हर वर्ष फ़र्स्ट क्लास ही मिलता आया था उसे। बस यह परीक्षा अच्छे से निकल जाए तो उसकी तपस्या कुछ हद तक सफल हो जाए।

जाने कब तक वह अपने भीतर के अरण्य में ही भटकती रही। घड़ी ने चार के टंकार बजाए। संदीप ने चाय की फ़रमाइश की और तभी उसे ध्यान आया कि घंटे-भर से समीर कहीं दिखाई नहीं पड़ रहा है। अब आया, अब आया के जाने कितने जुगनू जलते-बुझते रहे अंतर में कि घंटा भर और निकल गया इंतज़ार-इंतज़ार में।

पूरे दो घंटे। इतने लम्बे समय तक तो वह बिना बताए कभी भी बाहर निकलता ही नहीं था। घर के कड़े अनुशासन में बँधे दोनों भाई सदैव ही वक़्त पर आते और जाते। फिर क्या हुआ? कहीं गुस्से में समीर घर से ही तो नहीं भाग गया? आशंका और चिंता के जाने कितने नाग डसने लगे थे उसे। अभी कुछ दिन पहले ही अख़बार में

पढ़ा था उसने कि ख़राब रिज़ल्ट लाने पर कक्षा नौ के लड़के को माँ-बाप ने इतनी बुरी तरह लताड़ा कि उसने बाथरूम में जाकर आत्महत्या कर ली। मन के कबाड़ख़ाने में पड़ी हुई जाने कितनी भयानक घटनाएँ इस समय रह-रहकर उस पर चिंता के कोड़े बरसा रही थीं।

वह स्वयं को धिक्कारती- इतने बड़े लड़के को भी भला कोई इस प्रकार पीटता है! इस प्रकार दुत्कारता है! क्यों मति मारी गयी थी उसकी? मन की उस भीषण उद्वेलित स्थिति में उसने संदीप को भी शांति से नहीं पढ़ने दिया- जैसे भी हो, उसे खोज कर लाओ, जाने कहाँ निकल गया है गुस्से में? आज टेलीफ़ोन का अभाव उसे ज़बरदस्त खटक रहा था।

संदीप भी पढ़ना छोड़ माँ को धीरज बँधाने में लग गया था- शांति रखो माँ, किसी दोस्त के यहाँ टी०वी० देख रहा होगा, फाइनल मैच जो चल रहा है।

लेकिन इस प्रकार बिना बोले तो वह आज तक नहीं गया? कभी घंटे-भर के लिए नहीं गया और आज पूरे तीन घंटे? उद्भ्रांत-सी वह कमरे में चक्कर काटती रही।

और जब उस पर भी उसे चैन नहीं पड़ा तो वह सड़क पर आकर खड़ी हो गयी। जाने कितने एक्सीडेंट के देखे -सुने भयंकर दृश्य कल्पना में तैरने लगे। चिंता और घबड़ाहट की चरम सीमा में जाने कितने संकल्प कर डाले उसने– हे बजरंगबली, बस एक बार समीर वापस आ जाए, सवा मन लड्डू से आरती उतारूँगी मंदिर में। मारना तो दूर कभी कड़ी बात तक नहीं निकालूँगी मुँह से...' अभी उम्र ही क्या है? इस उम्र में पचासों शौक़ होते हैं बच्चों के। पर याद नहीं आता कि समीर ने कभी फ़िज़ूलख़र्ची की हो, कभी मौज-मस्ती में एक धेला भी उड़ाया हो। अमीर दोस्तों के बीच रहते हुए भी समीर हमेशा अपने घर की आर्थिक स्थिति के अनुसार ही चलता रहा और खाली समय होते ही वह माँ के कामों में हाथ भी बँटाता रहा है। बस थोड़ा गुस्सैल और स्वाभिमानी है और तभी एक और अज्ञात आशंका से वह फिर सिहर उठी। इस उम्र में स्वाभिमान का भी ग़लत अर्थ लगा लेते हैं बच्चे। याद आया, एक बार पिताजी ने किसी बात पर उसके भाई को कह दिया था- कमाकर उड़ाओ तो पता चले और बस इसी बात पर जनाब भरी दोपहरी में ही घर से भागकर मुटिआ लोगों की टोली में शामिल होने की सोचने लगे, वह तो तुरंत खोजबीन शुरू हो गयी, वरना क्या पता कोई बच्चा चुराने वाला गिरोह ही अपनी गिरफ़्त में ले लेता उसे।

इसी प्रकार की जाने कितनी आड़ी-तिरछी रेखाओं का बोझ जब असह्य हो गया मस्तिष्क में, तो वहीं सड़क पर बनी दुकान के बरामदे पर ही धम्म से बैठ गयी वह। आँखों में विवशता के आँसू लिए मन-ही-मन सभी देवी-देवताओं को गुहारने लगी और तभी दूर से ही एक जानी-पहचानी आकृति दिखाई पड़ी। हृदय की धड़कन तेज़ हो गयी उसकी। आँखों में चमक आ गयी और जैसे-जैसे वह आकृति पास आई, असीम कृतज्ञता से आँखें मुँद गयीं उसकी, हाथ जुड़ गए। गर्दन गर्व से तन गयी और एक गर्व-भरी मुस्कान चेहरे पर फ़ैल गयी- आख़िर मेरा बेटा है, सुसंस्कारयुक्त, माँ के कहे का बुरा थोड़े ही मान सकता है कभी। पर उसे सड़क पर खड़ी देख आश्चर्य एवं कुछ झल्लाहट से पूछ बैठा समीर, 'सड़क पर क्यों खड़ी हो? बाज़ार से कुछ लाना है क्या?'

-लाना है तेरा सर! कहाँ चला गया था? बिना बोले, मेरी तो जान ही निकल गयी थी!

-बोल के तो गया था कि महेश के यहाँ टी०वी० देखने जा रहा हूँ, मैच ख़त्म होने पर आऊँगा। पर तुम्हें गुस्से में कुछ सुनाई भी पड़ता है! वह फिर आँखें तरेरकर बोलने लगा था। पर इस बार गुस्से के बजाय अपरिमित प्यार उमड़ रहा था बेटे के लिए मीना के मन में। झूठा कहीं का! चल मुँह-हाथ धोकर नाश्ता कर। हुगली नदी का सारा सुरीलापन जैसे उसके कंठ को छू गया था।

संपर्क : फ़्लैट 1004 लिलियम
आर 12 सेक्टर, नाहर अमृत शक्ति
चाँदिवली, मुम्बई - 400072

अनूदित कहानी (रूसी)

शत्रु

अन्तोन चेखव

अनुवाद : सुशांत सुप्रिय

सितम्बर की एक अँधेरी रात थी। डॉक्टर किरीलोव के इकलौते छह वर्षीय पुत्र आंद्रेई की नौ बजे के थोड़ी देर बाद डिप्थीरिया से मृत्यु हो गई। डॉक्टर की पत्नी बच्चे के पलंग के पास गहरे शोक व निराशा में घुटनों के बल बैठी हुई थी।तभी दरवाज़े की घंटी कर्कश आवाज़ में बज उठी। घर के नौकर सुबह ही घर से बाहर भेज दिए गए थे, क्योंकि डिप्थीरिया छूत से फैलने वाला रोग था। किरीलोव ने क़मीज़ पहनी हुई थी। उसके कोट के बटन खुले थे। उसका चेहरा गीला था और उसके बिन-पुँछे हाथ कारबोलिक से झुलसे हुए थे। वह वैसे ही दरवाज़ा खोलने चल दिया। ड्योढ़ी के अँधेरे में डॉक्टर को आगंतुक का जो रूप दिखा, वह था– औसत क़द, सफ़ेद गुलूबंद और बड़ा और इतना पीला पड़ा हुआ चेहरा कि लगता था जैसे कमरे में उससे रोशनी आ गई हो।

''क्या डॉक्टर साहब घर पर हैं?'' आगंतुक के स्वर में जल्दी थी।

''हाँ ! आप क्या चाहते हैं?'' किरीलोव ने उत्तर दिया।

''ओह ! आपसे मिल कर ख़ुशी हुई।'' आगंतुक ने प्रसन्न होकर अँधेरे में डॉक्टर का हाथ टटोला और उसे पा लेने पर अपने दोनो हाथों से ज़ोर से दबाकर कहा, ''बेहद ख़ुशी हुई। हम लोग पहले मिल चुके हैं। मेरा नाम अबोगिन है ... गरमियों में ग्चुनेव परिवार में आपसे मिलने का सौभाग्य हुआ था। आपको घर पर पाकर मुझे ख़ुशी हुई ... भगवान के लिए मुझ पर कृपा करें और फ़ौरन मेरे साथ चलें। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ ... मेरी पत्नी बेहद बीमार है ... मैं गाड़ी लाया हूँ।''

प्रकाशित कृतियाँ : कहानी संग्रह : हत्यारे; हे राम। काव्य संग्रह : एक बूँद यह भी। अन्य : रचनाएँ विभिन्न भाषाओं में अनूदित। 'मेरा ज़ुर्म क्या है?' नामक कहानी पर लघु फ़िल्म का निर्माण। अंग्रेज़ी भाषा में काव्य संग्रह 'इन गाँधीज़ कंट्री' प्रकाशित। संप्रति : संसदीय सचिवालय, नई दिल्ली में कार्यरत।

आगंतुक की आवाज़ और उसके हाव-भाव से लग रहा था कि वह बेहद घबराया हुआ है। उसकी साँस बहुत तेज़ चल रही थी और वह काँपती हुई आवाज़ में तेज़ी से बोल रहा था, मानो वह किसी अग्निकांड या पागल कुत्ते से बचकर भागता हुआ आ रहा हो। उसकी बात में साफ़दिली झलक रही थी और वह किसी सहमे हुए बच्चे जैसा लग रहा था। वह छोटे-छोटे अधूरे वाक्य बोल रहा था और बहुत-सी ऐसी फ़ालतू बातें कर रहा था जिनका मामले से कोई लेना-देना नहीं था।

''मुझे डर था कि आप घर पर नहीं मिलेंगे।'' आगंतुक ने कहना जारी रखा, ''भगवान के लिए, आप अपना कोट पहनें और चलें ... दरअसल हुआ यह कि पापचिंस्की ... आप उसे जानते हैं, अलेक्ज़ेंडर सेम्योनोविच पापचिंस्की मुझसे मिलने आया। थोड़ी देर हम लोग बैठे बातें करते रहे। फिर हमने चाय पी। एकाएक मेरी पत्नी चीख़ी और सीने पर हाथ रखकर कुर्सी पर निढाल हो गयी। उसे उठा कर हम लोग पलंग पर ले गए। मैंने अमोनिया लेकर उसकी कनपटियों पर मला और उसके मुँह पर पानी छिड़का, किंतु वह बिल्कुल मरी-सी पड़ी रही। मुझे डर है,

उसे कहीं दिल का दौरा न पड़ा हो ... आप चलिए ... उसके पिता की मौत भी दिल का दौरा पड़ने की वजह से हुई थी ...।''

किरीलोव चुपचाप ऐसे सुनता रहा, जैसे वह रूसी भाषा समझता ही न हो।

जब आगंतुक अबोगिन ने फिर पापचिंस्की और अपनी पत्नी के पिता का ज़िक्र किया और अँधेरे में दोबारा उसका हाथ ढूँढ़ना शुरू किया, तब उसने सिर उठाया और उदासीन भाव से हर शब्द पर बल देते कहा, ''मुझे खेद है कि मैं आपके घर नहीं जा सकूँगा ... पाँच मिनट पहले मेरे बेटे की ... मौत हो गई है। ''

''अरे नहीं!'' पीछे हटते हुए अबोगिन फुसफुसाया, ''हे भगवान ! मैं कैसे ग़लत मौक़े पर आया हूँ। कैसा अभागा दिन है यह ... वाक़ई यह कितनी अजीब बात है। कैसा संयोग है यह ... कौन सोच सकता था!''

उसने दरवाज़े का हत्था पकड़ लिया। वह समझ नहीं पा रहा था कि वह डॉक्टर की मिन्नत करता रहे या लौट जाए। फिर वह किरीलोव की बाँह पकड़ कर बोला, ''मैं आपकी हालत बख़ूबी समझता हूँ। भगवान जानता है कि ऐसे बुरे वक़्त में आपका ध्यान खींचने की कोशिश करने के लिए मैं शर्मिंदा हूँ। लेकिन मैं क्या करूँ? आप ही बताइए, मैं कहाँ जाऊँ? इस जगह आपके अलावा कोई डॉक्टर नहीं है। भगवान के लिए आप मेरे साथ चलिए !''

X X X

वहाँ चुप्पी छा गई। किरीलोव अबोगिन की ओर पीठ फेरकर एक मिनट तक चुपचाप खड़ा रहा। फिर वह धीरे-धीरे ड्योढ़ी से बैठक में चला गया। उसकी चाल यंत्रवत और अनिश्चित थी। बैठक में अनजले लैंपशेड की झालर सीधी करने और मेज़ पर पड़ी एक मोटी किताब के पन्ने उलटने के उसके खोए-खोए अंदाज़ से लग रहा था कि उस समय उसका न कोई इरादा था, न उसकी कोई इच्छा थी और न ही वह कुछ सोच पा रहा था। वह शायद यह भी भूल गया था कि बाहर ड्योढ़ी में कोई अजनबी भी खड़ा है। कमरे के सन्नाटे और धुँधलके में उसकी विमूढ़ता और मुखर हो उठी थी। बैठक से कमरे की ओर बढ़ते हुए उसने अपना दाहिना पैर ज़रूरत से ज़्यादा ऊँचा उठा लिया और फिर दरवाज़े की चौखट ढूँढ़ने लगा। उसकी पूरी आकृति से एक तरह का भौंचक्कापन झलक रहा था, जैसे वह किसी अनजाने मकान में भटक रहा हो। रोशनी की एक चौड़ी पट्टी कमरे की एक दीवार और किताबों की अलमारियों पर पड़ रही थी। वह रोशनी ईथर और कार्बोलिक की तीख़ी और भारी गंध के साथ सोने वाले उस कमरे से आ रही थी जिसका दरवाज़ा थोड़ा-सा खुला हुआ था ... डॉक्टर मेज़ के पास वाली कुर्सी में जा धँसा। थोड़ी देर तक वह रोशनी में पड़ी किताबों को उनींदा-सा घूरता रहा, फिर उठकर सोने वाले कमरे में चला गया।

सोने वाले कमरे में मौत का-सा सन्नाटा था। यहाँ की हर छोटी चीज़ उस तूफ़ान का सबूत दे रही थी, जो हाल में ही यहाँ से गुज़रा था। यहाँ पूर्ण निस्तब्धता थी। बक्सों, बोतलों और मर्तबानों से भरी तिपाई पर एक मोमबत्ती जल रही थी और अलमारी पर एक बड़ा लैंप जल रहा था। ये दोनों पूरे कमरे को रोशन कर रहे थे। खिड़की के पास पड़े पलंग पर एक बच्चा लेटा था, जिसकी आँखें खुली थीं और चेहरे पर अचरज़ का भाव था। वह बिल्कुल हिल-डुल नहीं रहा था, किंतु उसकी खुली आँखें हर पल काली पड़कर उसके माथे में ही गहरी धँसती जा रही लगती थीं। उसकी माँ उसकी देह पर हाथ रखे, बिस्तर में मुँह छिपाए, पलंग के पास झुकी बैठी थी। वह पलंग से पूरी तरह चिपटी हुई थी।

X X X

डॉक्टर मातम में झुकी बैठी अपनी पत्नी की बग़ल में आ खड़ा हुआ। पतलून की जेबों में हाथ डालकर और अपना सिर एक ओर झुकाकर वह अपने बेटे की ओर ताकने लगा। उसका चेहरा भावहीन था। केवल उसकी दाढ़ी पर चमक रही बूँदें ही इस बात की गवाही दे रही थीं कि वह अभी रोया है।

कमरे की उदास निस्तब्धता में भी एक अजीब सौंदर्य था, जो केवल संगीत द्वारा ही अभिव्यक्त किया जा सकता है। किरीलोव और उनकी पत्नी चुप थे। वे रोये नहीं। इस बच्चे के गुज़र जाने के साथ उनका संतान पाने का हक़ भी वैसे ही विदा हो चुका था, जैसे अपने समय से उनका यौवन विदा हो गया था। डॉक्टर की उम्र चौवालीस साल की थी। उसके बाल अभी से पक गए थे और वह बूढ़ा लगता था। उसकी मुरझाई हुई पत्नी पैंतीस वर्ष की थी। आंद्रेई उनकी एकमात्र संतान थी।

अपनी पत्नी के विपरीत डॉक्टर एक ऐसा व्यक्ति था, जो मानसिक कष्ट के समय कुछ कर डालने की ज़रूरत महसूस करता था। कुछ मिनट अपनी पत्नी के पास खड़े रहने के बाद वह सोने वाले कमरे से बाहर आ गया। अपना दाहिना पैर उसी तरह ज़रूरत से ज़्यादा उठाते हुए वह एक छोटे कमरे में गया, जहाँ एक बड़ा सोफ़ा पड़ा था। वहाँ से होता हुआ वह रसोई में गया। रसोई और अलावघर के पास टहलते हुए वह झुककर एक छोटे-से दरवाज़े में घुसा और ड्योढ़ी में निकल आया।

यहाँ उसकी मुठभेड़ गुलूबंद पहने और फीके पड़े चेहरे वाले व्यक्ति से दोबारा हो गई।

''आख़िर आप आ गए!'' दरवाज़े के हत्थे पर हाथ रखते हुए अबोगिन ने लम्बी साँस लेकर कहा, ''भगवान के लिए चलिए।''

डॉक्टर चौंक गया। उसने अबोगिन की ओर देखा और उसे याद आ गया ... फिर जैसे इस दुनिया में लौटते हुए उसने कहा, ''अजीब बात है!''

अपने गुलूबंद पर हाथ रख कर मिन्नत भरी आवाज़ में अबोगिन बोला, ''डॉक्टर साहब ! मैं आपकी हालत अच्छी तरह समझ रहा हूँ। मैं पत्थर-दिल आदमी नहीं हूँ। मुझे आपसे पूरी हमदर्दी है। पर मैं आपसे अपने लिए अपील नहीं कर रहा हूँ। वहाँ मेरी पत्नी मर रही है। यदि आपने उसकी वह हृदय-विदारक चीख़ सुनी होती, उसका वह ज़र्द चेहरा देखा होता, तो आप मेरे इस अनुनय-विनय को समझ सकते। हे ईश्वर ! ... मुझे लगा कि आप कपड़े पहनने गए हैं। डॉक्टर साहब, समय बहुत क़ीमती है। मैं हाथ जोड़ता हूँ, आप मेरे साथ चलिए।''

किंतु बैठक की ओर बढ़ते हुए डॉक्टर ने एक-एक शब्द पर बल देते हुए दोबारा कहा, ''मैं आपके साथ नहीं जा सकता।''

अबोगिन उसके पीछे-पीछे गया और उसने डॉक्टर की बाँह पकड़ ली, ''मैं समझ रहा हूँ कि आप सचमुच बहुत दुखी हैं। लेकिन मैं मामूली दाँत-दर्द के इलाज या किसी रोग के लक्षण पूछने-मात्र के लिए तो आपसे चलने की ज़िद नहीं कर रहा!'' वह याचना-भरी आवाज़ में बोला,''मैं आपसे एक इनसान का जीवन बचाने के लिए कह रहा हूँ। यह जीवन व्यक्तिगत शोक के ऊपर है, डॉक्टर साहब। अब आप मेरे साथ चलिए। मानवता के नाम पर मैं आपसे बहादुरी दिखाने और धीरज रखने की अपील कर रहा हूँ।''

''मानवता ! ... यह एक दुधारी तलवार है ! ''किरीलोव ने झुंझलाकर कहा।'' इसी मानवता के नाम पर मैं आपसे कहता हूँ कि आप मुझे मत ले जाइए। यह सचमुच अजीब बात है ... यहाँ मेरे लिए खड़ा होना भी मुश्किल हो रहा

है और आप हैं कि मुझे ' मानवता ' शब्द से धमका रहे हैं। इस समय मैं कोई भी काम करने के क़ाबिल नहीं हूँ। मैं किसी भी तरह आपके साथ चलने के लिए राज़ी नहीं हो सकता। दूसरी बात, यहाँ और कोई नहीं है, जिसे मैं अपनी पत्नी के साथ छोड़कर जा सकूँ। नहीं, नहीं।'' किरीलोव एक क़दम पीछे हट गया और और हाथ हिलाते हुए इनकार करने लगा, ''आप मुझे जाने को न कहें!'' फिर एकाएक वह घबराकर बोला, ''मुझे क्षमा करें, आचरण-संहिता के तेरहवें खंड के मुताबिक़ मैं आपके साथ जाने को बाध्य हूँ। आपको हक़ है कि आप मेरे कोट का कॉलर पकड़कर मुझे घसीटकर ले जाएँ। अच्छी बात है। आप बेशक यही करें। लेकिन अभी मैं कोई भी काम करने के क़ाबिल नहीं हूँ। मैं अभी बोल भी नहीं पा रहा ... मुझे क्षमा करें।''

''डॉक्टर साहब, आप ऐसा न कहें।'' उसकी बाँह न छोड़ते हुए अबोगिन ने कहा, ''मुझे आपके तेरहवें खंड से क्या लेना-देना? आपकी इच्छा के ख़िलाफ़ अपने साथ चलने के लिए आपको मजबूर करने का मुझे कोई अधिकार नहीं। अगर आप चलने को राज़ी हैं तो ठीक, अगर नहीं तो मजबूरी में, मैं आपके दिल से अपील करता हूँ। एक युवती मर रही है। आप कहते हैं कि आपके बेटे की अभी-अभी मौत हुई है। ऐसी स्थिति में तो आपको मेरी तकलीफ़ औरों से ज़्यादा समझनी चाहिए।''

किरीलोव चुपचाप खड़ा रहा। उधर अबोगिन डॉक्टरी के महान पेशे और उससे जुड़े त्याग और तपस्या आदि के बारे में बोलता रहा। आख़िर डॉक्टर ने रुखाई से पूछा,''क्या ज़्यादा दूर जाना होगा?''

''बस, तेरह-चौदह मील। मेरे घोड़े बहुत बढ़िया हैं। डॉक्टर साहब, क़सम से, वे केवल एक घंटे में आपको वापस पहुँचा देंगे, बस घंटे भर में।''

डॉक्टर पर डॉक्टरी के पेशे और मानवता के संबंध में कही गई बातों से ज़्यादा असर इन आख़िरी शब्दों का पड़ा। एक पल सोचने के बाद उसने उसाँस भरकर कहा,''ठीक है, चलो ... चलें।''

फिर वह तेज़ी से कमरे में घुसा। अब उसकी चाल स्थिर थी। पल भर बाद वह अपना डॉक्टरी पेशेवाला कोट पहन कर वापस लौट आया। अबोगिन छोटे-छोटे डग भरता हुआ उसके साथ चलने लगा और कोट ठीक से पहनने में उसकी मदद करने लगा। फिर दोनों साथ-साथ घर से बाहर निकल गए।

X X X

बाहर अँधेरा था, लेकिन उतना गहरा नहीं, जितना ड्योढ़ी में था।

''आप यक़ीन मानिए, आपकी उदारता की क़द्र करना मैं जानता हूँ। शुक्रिया। ''गाड़ी में डॉक्टर को बैठाते हुए वह बोला, ''लुका भाई, तुम जितनी तेज़ी से हाँक सकते हो, हाँको। भगवान के लिए जल्दी करो!''

कोचवान ने घोड़े सरपट दौड़ा दिए।

पूरे रास्ते किरीलोव और अबोगिन चुप रहे। अबोगिन केवल एक बार गहरी साँस लेकर बुद्बुदाया, ''कैसी विकट और दारुण परिस्थिति है। जो अपने क़रीबी हैं, उन पर इतना प्रेम कभी नहीं उमड़ता, जितना तब, जब उन्हें खो देने का डर पैदा हो जाता है!''

जब नदी पार करने के लिए गाड़ी धीमी हुई, किरीलोव एकाएक चौंक पड़ा। लगा, जैसे पानी के छप-छप की आवाज़ सुनकर वह दूर कहीं से वापस आ गया हो। वह अपनी जगह हिलने-डुलने लगा। फिर वह उदास स्वर में बोला, ''देखो, मुझे जाने दो। मैं बाद में आ जाऊँगा। मैं केवल अपने सहायक को अपनी पत्नी के पास भेजना चाहता हूँ। वह इस समय बिलकुल अकेली रह गई है।''

''मुझे आपके तेरहवें खंड से क्या लेना-देना? आपकी इच्छा के ख़िलाफ़ अपने साथ चलने के लिए आपको मज़बूर करने का मुझे कोई अधिकार नहीं। अगर आप चलने को राज़ी हैं तो ठीक, अगर नहीं तो मजबूरी में, मैं आपके दिल से अपील करता हूँ।

दूसरी ओर, गाड़ी जैसे-जैसे अपने मुक़ाम पर पहुँच रही थी, अबोगिन और अधिक धैर्यहीन होता जा रहा था। कभी वह उठ जाता, कभी बैठता, कभी चौंककर उछल पड़ता तो कभी कोचवान के कंधे के ऊपर से आगे ताकता। अंत में गाड़ी जब धारीदार किरमिच के परदे से रुचिपूर्ण ढंग से सजे ओसारे में जा कर रुकी, उसने जल्दी और ज़ोर से साँस लेते हुए दूसरी मंज़िल की खिड़कियों की ओर देखा, जिनसे रोशनी आ रही थी।

"यदि कुछ हो गया तो ... मैं सह नहीं पाऊँगा।" अबोगिन ने डॉक्टर के साथ ड्योढी की ओर बढ़ते हुए घबराहट में हाथ मलते हुए कहा। "लेकिन परेशानीवाली कोई आवाज़ नहीं आ रही, इसलिए अब तक सब ठीक ही होगा। " सन्नाटे में कुछ सुन पाने के लिए कान लगाए हुए वह बोला।

ड्योढ़ी में भी बोलने की कोई आवाज़ सुनाई नहीं पड़ रही थी और समूचा घर तेज़ रोशनी के बावजूद सोया हुआ-सा लग रहा था।

सीढ़ियाँ चढ़ते हुए उसने कहा,"न तो कोई आवाज़ आ रही है, न ही कोई दिखाई पड़ रहा है। कहीं कोई खलबली या हलचल भी नहीं है। भगवान करे ...!"

वे दोनों ड्योढ़ी से होते हुए हाल पहुँचे, जहाँ एक काला पियानो रखा हुआ था और छत से फ़ानूस लटक रहा था। यहाँ से अबोगिन डॉक्टर को एक छोटे दीवानखाने में ले गया, जो आरामदेह और आकर्षक ढंग से सजा हुआ था और जिसमें गुलाबी कांति-सी झिलमिला रही थी।

"डॉक्टर साहब, आप यहाँ बैठें और इंतज़ार करें।" अबोगिन ने कहा,"मैं अभी आता हूँ। ज़रा जाकर देख लूँ और बता दूँ कि आप आ गए हैं।"

चारो ओर शांति थी। दूर, किसी कमरे की बैठक में किसी ने आह भरी, किसी अलमारी का शीशे का दरवाज़ा झनझनाया और फिर सन्नाटा छा गया। लगभग पाँच मिनट के बाद किरीलोव ने हाथों की ओर निहारना छोड़कर उस द्वार की ओर देखा, जिससे अबोगिन भीतर गया था।

अबोगिन दरवाज़े के पास खड़ा था, पर वह अब वही अबोगिन नहीं लग रहा था, जो कमरे के भीतर गया था। उसके चेहरे पर स्याह परछाइयाँ तैर रही थीं। अब उसकी छवि पहले जैसी परिष्कृत नहीं लग रही थी। उसके चेहरे पर विरक्ति के भाव-सा कुछ आ गया था। पता नहीं, वह डर था या शारीरिक कष्ट। उसकी नाक, मूँछें और उसका सारा चेहरा फड़क रहा था, जैसे ये सारी चीज़ें उसके चेहरे से फूटकर अलग निकल पड़ना चाहती हों। उसकी आँखों में पीड़ा भरी हुई थी और वह मानसिक रूप से उद्वेलित लग रहा था।

लम्बे और भारी डग भरता हुआ वह दीवानख़ाने के बीच आ खड़ा हुआ। फिर वह आगे बढ़कर मुट्ठियाँ बाँधते हुए कराहने लगा।

"वह मुझे दग़ा दे गई, डॉक्टर।" फिर ' दग़ा ' पर बल देते हुए वह चीख़ा,"मुझे छोड़ गई वह। दग़ा दे गई। यह सब झूठ क्यों? हे ईश्वर। यह घटिया फ़रेब-भरी चालबाज़ी क्यों? यह शैतानियत भरा धोखे का जाल क्यों? मैंने उसका क्या बिगाड़ा था? आख़िर वह मुझे क्यों छोड़ गई?"

डॉक्टर के उदासीन चेहरे पर जिज्ञासा की झलक उभर आई। वह उठ खड़ा हुआ और उसने अबोगिन से पूछा, "पर मरीज़ कहाँ है?"

"मरीज़! मरीज़!" हँसता, रोता और मुट्ठियाँ हिलाता हुआ अबोगिन चिल्लाया, "वह मरीज़ नहीं, पापिन है ! इतना कमीनापन ! इतना ओछापन ! शैतान भी ऐसी घिनौनी हरकत नहीं करता। उसने मुझे यहाँ से भेज दिया। क्यों? ताकि वह उस दलाल, उस भौंडे भाँड़ के साथ भाग जाए ! हे ईश्वर ! इससे तो अच्छा था, वह मर जाती। यह बेवफ़ाई मैं नहीं सह सकूँगा, बिल्कुल नहीं।"

यह सुनते ही डॉक्टर तनकर खड़ा हो गया। उसने आँसुओं से भरी अपनी आँखें झपकाईं। उसकी नुकीली दाढ़ी भी जबड़ों के साथ-साथ दाएँ-बाएँ हिल रही थी। वह भौंचक्का होकर बोला, "क्षमा करें, इसका क्या मतलब

है? मेरा बच्चा कुछ देर पहले मर गया है। मेरी पत्नी मातम में है और शोक से मरी जा रही है। इस समय वह घर में अकेली है। मैं ख़ुद भी बड़ी मुश्किल से खड़ा हो पा रहा हूँ। तीन रातों से मैं सोया नहीं हूँ और मुझे क्या पता लगता है? क्या मैं एक भद्दी नौटंकी में शामिल होने के लिए यहाँ बुलाया गया हूँ? मैं... मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा।''

अबोगिन ने एक मुट्ठी खोली और एक मुड़ा-तुड़ा-सा पुर्ज़ा फ़र्श पर डालकर उसे कुचल दिया, मानो वह कोई कीड़ा रहा हो, जिसे वह नष्ट कर डालना चाहता था। अपने चेहरे के सामने मुट्ठी हिलाते हुए दाँत भींचकर वह बोला, ''और मैंने कुछ समझा ही नहीं, कुछ ध्यान ही नहीं दिया। वह रोज़ मेरे यहाँ आता है, इस बात पर ग़ौर नहीं किया। यह भी नहीं सोचा कि आज वह मेरे घर बग्घी में आया था। बग्घी में क्यों? मैं अंधा और मूर्ख था, जिसने इसके बारे में सोचा ही नहीं, अंधा और मूर्ख।'' उसके चेहरे से लग रहा था, जैसे किसी ने उसके पैरों को कुचल दिया हो।

डॉक्टर फिर बड़बड़ाया, ''मैं... मेरी समझ में नहीं आता कि इस सब का मतलब क्या है? यह तो किसी इनसान की बेइज़्ज़ती करना हुआ, इनसान के दुख और वेदना का उपहास करना हुआ। यह बिलकुल नामुमकिन बात है, यह भद्दा मज़ाक है। मैंने अपनी ज़िंदगी में ऐसी बात कभी नहीं सुनी।''

उस व्यक्ति की तरह जो अब समझ गया है कि उसका घोर अपमान किया गया है, डॉक्टर ने अपने कंधे उचकाए और बेबसी में हाथ फैला दिए। बोलने या कुछ भी कर सकने में असमर्थ वह फिर आरामकुर्सी में धँस गया।

''तो तुम अब मुझसे प्रेम नहीं करतीं, किसी दूसरे से प्यार करती हो ...ठीक है, पर यह धोखा क्यों, यह ओछी दग़ाबाज़ी क्यों?'' अबोगिन रुआँसे स्वर में बोला, ''इससे किसका भला होगा? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था? तुमने यह घटिया हरकत क्यों की? डॉक्टर !'' वह आवेग में चिल्लाता हुआ किरीलोव के पास पहुँच गया, ''आप अनजाने में मेरे दुर्भाग्य के गवाह बन गए हैं ...और मैं आप से सच्ची बात नहीं छिपाऊँगा। मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि मैं उस औरत से मोहब्बत करता था। मैं उसका ग़ुलाम था। मैं उसकी पूजा करता था। मैंने उसके लिए हर चीज़ क़ुर्बान कर दी। अपने सम्बन्धियों से झगड़ा किया। नौकरी छोड़ दी। संगीत का अपना शौक़ छोड़ दिया। उन बातों के लिए उसे माफ़ कर दिया, जिनके लिए मैं अपनी बहन या माँ को कभी माफ़ नहीं करता... मैंने उसे कभी कड़ी निगाह से नहीं देखा। मैंने उसे कभी बुरा मानने का ज़रा-सा भी मौक़ा नहीं दिया। यह सब झूठ और फ़रेब है ...क्यों? अगर तुम मुझे प्यार नहीं करती थीं तो ऐसा साफ़-साफ़ कह क्यों नहीं दिया ...इन सब मामलों में तुम मेरी राय जानती थीं !''

काँपते हुए, आँखों में आँसू भरे, अबोगिन ने ईमानदारी से अपना दिल डॉक्टर के सामने खोलकर रख दिया। वह भावोद्रेक में बोल रहा था। सीने से हाथ लगाए हुए, बिना किसी झिझक के वह गोपनीय घरेलू बातें बता रहा था। असल में, एक तरह से आश्वस्त-सा होता हुआ कि आख़िरकार ये गोपनीय बातें अब खुल गयीं। यदि इसी तरह वह घंटे भर और बोल लेता, अपने दिल की बात कह लेता, ग़ुबार निकाल लेता तो यक़ीनन वह बेहतर महसूस करने लगता। कौन जाने, यदि डॉक्टर दोस्ताना हमदर्दी से उसकी बात सुन लेता, शायद जैसा कि अकसर होता है, वह ना-नुकुर किए बिना और अनावश्यक ग़लतियाँ किए बिना ही अपनी किस्मत से संतुष्ट हो जाता ...लेकिन हुआ कुछ और ही।

उधर अबोगिन बोलता जा रहा था, इधर अपमानित डॉक्टर के चेहरे पर एक बदलाव-सा होता दिखाई दे रहा था। उसके चेहरे पर जो स्तब्धता और उदासीनता का भाव था, वह मिट गया और उसकी जगह क्रोध और अपमान ने ले ली। उसका चेहरा और भी हठपूर्ण, अप्रिय और कठोर हो गया। ऐसी हालत में अबोगिन ने उसे धार्मिक पादरियों जैसे भावशून्य और रूखे चेहरेवाली एक सुंदर नवयुवती की फ़ोटो दिखाते हुए पूछा कि क्या कोई यक़ीन कर सकता

है कि ऐसे चेहरेवाली स्त्री झूठ बोल सकती है, छल सकती है।

X X X

डॉक्टर अबोगिन के पास से पीछे हट गया और भौंचक्का होकर उसे देखने लगा।

"आप मुझे यहाँ लाए ही क्यों? "डॉक्टर कहता गया। उसकी दाढ़ी हिल रही थी, "आपने शादी की, क्योंकि आपके पास इससे अच्छा और कोई काम नहीं था ... और इसलिए आप अपना यह घटिया नाटक मनमाने ढंग से खेलते रहे, पर मुझे इससे क्या लेना-देना? मेरा आपके इस प्यार-मोहब्बत से क्या सरोकार? मुझे तो चैन से जीने दीजिए। आप अपनी मुक्केबाज़ी कीजिए, अपने मानवतावादी विचार बघारिए, वायलिन बजाइए, मुर्ग़े की तरह मोटे होते जाइए, पर किसी को ज़लील करने की हिम्मत मत कीजिए। यदि आप उनका सम्मान नहीं कर सकते तो तो कृपा करके उनसे अलग ही रहिए।"

अबोगिन का चेहरा लाल हो गया। उसने पूछा, "इसका मतलब क्या है?"

"इसका मतलब यह है कि लोगों के साथ यह कमीना और कुत्सित खिलवाड़ है। मैं डॉक्टर हूँ। आप डॉक्टरों को, बल्कि हर ऐसा काम करने वाले को, जिसमें से इत्र और वेश्यावृत्ति की गंध नहीं आती, नौकर और अर्दली क़िस्म का आदमी समझते हैं। आप ज़रूर समझिए। लेकिन दुखी व्यक्ति की भावनाओं से खिलवाड़ करने का, उसे नाटक की सामग्री समझने का आपको कोई हक़ नहीं।" अबोगिन का चेहरा गुस्से से फड़क रहा था। उसने ललकारकर पूछा,

"मुझसे ऐसी बात करने की आपकी हिम्मत कैसे हुई?"

मेज़ पर घूँसा मारते हुए डॉक्टर चिल्लाया,"मेरा दुख जानते हुए भी अपनी अनाप-शनाप बातें सुनाने के लिए मुझे यहाँ लाने की हिम्मत आपको कैसे हुई? दूसरे के दुख का मख़ौल करने का हक़ आपको किसने दिया?

अबोगिन चिल्लाया, "आप ज़रूर पागल हैं। कितने बेरहम हैं आप। मैं ख़ुद कितना दुखी हूँ ... और ... और ... !"

घृणा से मुस्करा कर डॉक्टर ने कहा, "दुखी ! आप इस शब्द का इस्तेमाल मत कीजिए। इसका आपसे कोई वास्ता नहीं। जो आवारा -निकम्मे क़र्ज़ नहीं ले पाते, वे भी अपने को दुखी कहते हैं। मोटापे से परेशान मुर्ग़ा भी दुखी होता है। घटिया आदमी !"

गुस्से से पिनपिनाते हुए अबोगिन ने कहा, "जनाब, आप अपनी औक़ात भूल रहे हैं! ऐसी बातों का जवाब लातों से दिया जाता है !"

अबोगिन ने जल्दी से अंदर की जेब टटोलकर उसमें से नोटों की एक गड्डी निकाली और उसमें से दो नोट निकालकर मेज़ पर पटक दिए। नथुने फड़काते हुए उसने हिक़ारत से कहा, "यह रही आपकी फ़ीस। आपके दाम अदा हो गए।"

नोटों को ज़मीन पर फेंकते हुए डॉक्टर चिल्लाया, "रुपए देने की गुस्ताखी मत कीजिए। यह अपमान इससे नहीं धुल सकता।"

अबोगिन और डॉक्टर एक-दूसरे को अपमानजनक और भद्दी-भद्दी बातें कहने लगे। उन दोनों ने जीवन-भर शायद सन्निपात में भी कभी इतनी अनुचित, बेरहम और बेहूदी बातें नहीं कही थीं। दोनों में जैसे वेदनाजन्य अहं जाग गया था। जो दुखी होते हैं, उनका अहं बहुत बढ़ जाता है। वे क्रोधी, नृशंस और अन्यायी हो जाते हैं। वे एक-दूसरे को समझने में मूर्खों से भी ज़्यादा असमर्थ होते हैं। दुर्भाग्य लोगों को मिलाने की जगह अलग करता है। प्राय: यह समझा जाता है कि एक ही तरह का दुख पड़ने पर लोग एक-दूसरे के नज़दीक आ जाते होंगे, लेकिन हक़ीक़त यह है कि ऐसे लोग अपेक्षाकृत संतुष्ट लोगों से बहुत ज़्यादा नृशंस और अन्यायी साबित होते हैं।

डॉक्टर चिल्लाया, "मेहरबानी करके मुझे मेरे घर पहुँचा दीजिए।" गुस्से से उसका दम फूल रहा था।

ताक रहा था, गोया वह उसका शत्रु हो।

X X X

कुछ देर बाद जब डॉक्टर गाड़ी में बैठा अपने घर जा रहा था, उसकी आँखों में तब भी घृणा की वही भावना क़ायम थी। घंटे-भर पहले जितना अँधेरा था, अब वह उससे ज़्यादा बढ़ गया था। दूज का लाल चाँद पहाड़ी के पीछे छिप गया था और उसकी रखवाली करने वाले बादल सितारों के आस-पास काले धब्बों की तरह पड़े थे। पीछे से सड़क पर पहियों की आवाज़ सुनाई दी और बग्घी की लाल रंग की लालटेनों की चमक डॉक्टर की गाड़ी के आगे आ गई। वह अबोगिन था, जो प्रतिवाद करने, झगड़ा करने या ग़लतियाँ करने पर उतारू था।
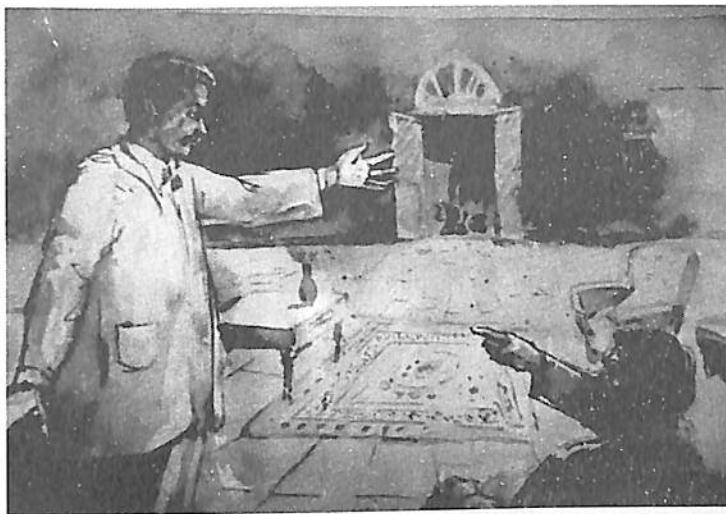
अबोगिन ने ज़ोर से घंटी बजाई। जब उसकी पुकार पर भी कोई नहीं आया तो गुस्से में उसने घंटी फ़र्श पर फेंक दी। क़ालीन पर एक हल्की, खोखली आह-सी भरती हुई घंटी ख़ामोश हो गयी।

तब एक नौकर आया।

घूँसा ताने अबोगिन ज़ोर से चीख़ा, ''कहाँ मर गया था तू? बेड़ा गर्क हो तेरा ! तू अभी था कहाँ? जा इस आदमी के लिए गाड़ी लाने को कह और मेरे लिए बग्घी निकलवा!'' जैसे ही नौकर जाने के लिए मुड़ा, अबोगिन फिर चिल्लाया, ''ठहर! कल से इस घर में एक भी ग़द्दार, दग़ाबाज़ नहीं रहेगा। सब निकल जाएँ ... दफ़ा हो जाएँ यहाँ से ... मैं नए नौकर रख लूँगा। बेईमान कहीं के!''

गाड़ियों के लिए प्रतीक्षा करते समय डॉक्टर और अबोगिन ख़ामोश रहे। नाज़ुक सुरुचि का भाव अबोगिन के चेहरे पर फिर लौट आया था। बड़े सभ्य तरीके से वह अपना सिर हिलाता हुआ, कुछ योजना-सी बनाता हुआ कमरे में टहलता रहा। उसका गुस्सा अभी शांत नहीं हुआ था, पर वह ऐसा ज़ाहिर करने का प्रयास कर रहा था, जैसे कमरे में शत्रु की मौजूदगी की ओर उसका ध्यान भी न गया हो। उधर डॉक्टर एक हाथ से मेज़ पकड़े हुए स्थिर खड़ा अबोगिन की ओर बदनुमा, गहरी हिक़ारत की निगाह से

पूरे रास्ते डॉक्टर अपनी शोकाकुल पत्नी या अपने मृत पुत्र आंद्रेई के बारे में नहीं, बल्कि अबोगिन और उस घर में रहने वालों के बारे में सोचता रहा, जिसे वह अभी छोड़ कर आया था। उसके विचार नृशंस और अन्यायपूर्ण थे। उसने मन-ही-मन अबोगिन, उसकी बीवी, पापचिंस्की और सुगंधित गुलाबी उषा में रहने वाले सभी लोगों के ख़िलाफ़ क्षोभ प्रकट किया और रास्ते-भर बराबर वह इन लोगों के लिए नफ़रत और हिक़ारत की बातें सोचता रहा। यहाँ तक कि उसके दिल में दर्द होने लगा और ऐसे लोगों के प्रति एक ऐसा ही दृष्टिकोण उसके ज़ेहन में स्थिर हो गया।

वक़्त गुज़रेगा और किरीलोव का दुख भी गुज़र जाएगा। किंतु यह अन्यायपूर्ण दृष्टिकोण डॉक्टर के साथ हमेशा रहेगा। जीवन भर, उसकी मृत्यु के दिन तक।

संपर्क : ए-5001, गौड़ ग्रीन सिटी
वैभव खंड, इंदिरापुरम
ग़ाज़ियाबाद- 201010
उत्तर प्रदेश

अनूदित कहानी (तेलुगू)

चोर

मूल : सि० एच० शिवराम प्रसाद

अनुवादक : डॉ० एच० एस० एम० कामेश्वर राव

बारिश की उस अँधेरी रात में चोर ने उस घर का ताला तोड़कर दरवाज़ा खोल दिया। खोलते ही उस हॉल में एक दृश्य को देखकर वह चकित हो गया। उसने अचरज से आँखें फाड़कर देखा।

मोमबत्ती की रोशनी में एक आदमी, औरत, बच्ची और बच्चा ज़मीन पर बैठे दिखे। उनके बीच में चावल और सब्ज़ियों की कटोरियाँ, कोल्ड्रिंक बॉटल और गिलास रखे हुए हैं। ख़ाली थालियाँ भी रखी हुई हैं। शायद खाने के लिए हों। बिजली न रहने से शायद मोमबत्ती जलायी हो।

दरवाज़ा खोलकर अंदर आये चोर को देखकर वह औरत और आदमी घबराये नहीं। उनके चेहरे पर रंचमात्र भी डर न रहा, किन्तु बच्चों के मुँह पर अचरज दिखाई पड़ा।

औरत और आदमी कुछ न बोले। चोर के मुँह से भी बातें न निकलीं। अब उसे कुछ करने की भी नहीं सूझ रही है। चाकू दिखाकर अलमारी का ताला पूछना है या तो वापस चले जाना है। चोर दुविधा में पड़ गया।

"क्या तुम चोर हो?" आदमी ने पूछा।

"हाँ! चोर हूँ।" जवाब दिया।

"ताला तोड़ने से अंदर कोई गहने, पैसे मिलने की आशा से ताला तोड़कर आये हो न, किन्तु तुम्हें निराश होना पड़ेगा, क्योंकि मेरी पत्नी के गले में सोना नहीं है। कई दिनों से माँगलिक धागा बाँधे हुए है। अलमारी में

डॉ० एच०एस०एम० कामेश्वर राव हिन्दी और तेलुगू के प्रमुख लेखक हैं। मुख्यत: इनकी तेलुगू-हिन्दी परस्पर अनुवाद की अनेक कहानियाँ और कविताएँ हैं। इनके अनुवादों में गौरी, विष्णुसखाराम खांडेकर, महाप्रस्थान आदि प्रमुख माने जाते हैं। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय से पुरस्कार-सम्मान।

एक रुपया भी नहीं हैं, किन्तु कुर्ते की जेब में एक सौ रुपये हैं चाहे तो ले लो।" आदमी ने कहा।

चोर कुछ बोला नहीं। सोच में पड़ गया। आदमी और औरत के मुँह पर सहज रोशनी नहीं है। लगता है कि उस अँधेरी रोशनी में भी वे निराशा के अँधेरे में हैं। उनके मिज़ाज से उसमें शंका बढ़ने लगी।

"कह दिया न! कुछ भी नहीं है। फिर क्यों खड़े हो? जेब में से सौ रुपये लेकर चले जाओ। अगर तुममें ताकत है तो उस कोने में रखे टी०वी०, रसोई में रखे बर्तन सब कुछ गठरी बाँधकर ले जाओ।" बेचैनी से कहा उसने।

उस आदमी के मुँह पर ख़ुशी नहीं है। प्रेत छाया दिख रही है। चोर को लगा कि अपनी शंका सही है।

"मुझे पैसे नहीं चाहिए।" कहा चोर ने।

"तो फिर क्या चाहिए?"

"भूख लगी है। आपके साथ खाना खाऊँगा," कहते
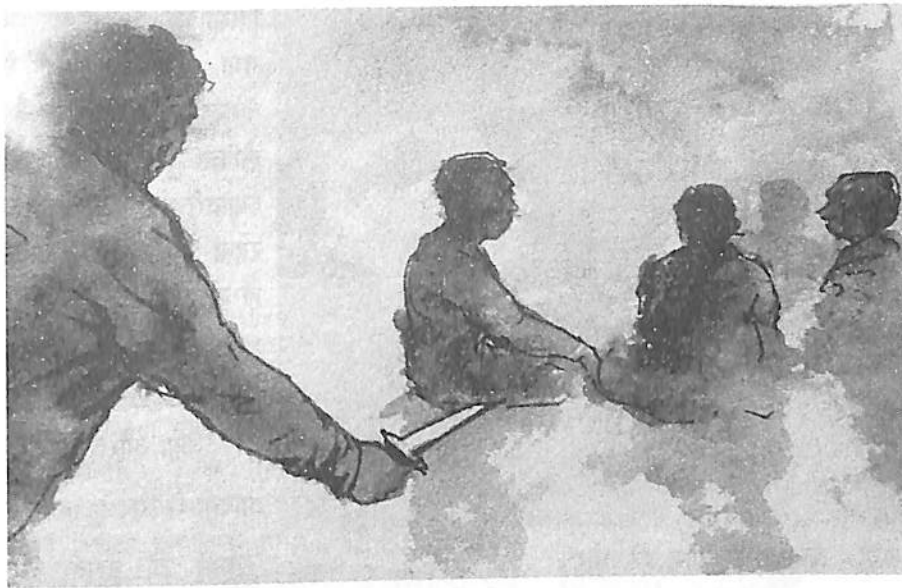
लिए अपने साथ दो कौर खाने का मौक़ा दीजिए। इस बोतल के कोल्ड्रिंक से भी एक गिलास पीकर चला जाऊँगा।''

चोर की बातें सुनकर वे दोनों एक दूसरे को ताकने लगे। चारों ओर चुप्पी बनी रही।

हुए ज़मीन पर बैठ गया।

चोर के इस बर्ताव से वह घबरा गया। औरत के चेहरे पर भी घबराहट दिखने गयी।

''नहीं... नहीं...'' औरत ज़ोर से बोली।

''क्यों?'' चोर ने पूछा।

औरत से जवाब नहीं मिला। दुःख के बढ़ जाने से फूट-फूटकर रो रही है।

''तुम क्यों रोती हो?'' चोर ने पूछा।

''मैं कहूँगा।'' आदमी बोला।

चोर ने उसकी ओर देखा।

''जो खाना बनाया है, हमें ही काफ़ी नहीं है। तुम्हें देने से हमें भूख से मरना होगा। इसलिए वह रो रही है। तुम्हें पेट-भर खाना न खिलाने की चिंता से...'' उसका गला रुद्ध था।

''पेट-भर की ज़रूरत नहीं है। केवल आपके साथ दो कौर खाऊँगा। तृप्ति रहेगी। मैं अकेला हूँ। मेरा कोई नहीं है। एक परिवार के साथ खाना खाने की ख़ुशी पाऊँगा। मैं हर रोज़ अकेले ही खाता हूँ। इस जून के

चोर ने हाथ आगे बढ़ाया। कटोरी से चावल लेने को तैयार हुआ।

''नहीं... नहीं...'' औरत ने उसके हाथ को ज़ोर से पकड़ लिया।

चोर ने ज़ोर से ठहाका मारा।

''मुझे मालूम है कि इस चावल को खाने से मैं मर जाऊँगा।'' कहा उसने।

आदमी रो रहा है। अपना दुःख रोक न सकने के कारण वह फूट-फूट कर रोने लगा।

चोर ने उसके कन्धे पर हाथ रखा। ''क्यों मरना है?'' अनुनय से पूछा।

''अनेक छोटी-छोटी नौकरियाँ कीं। घर चलाने लायक वेतन कोई न दे सका। पत्नी और बच्चों की देखभाल करना दूभर हो गया। इसलिए कर्ज़ लेकर छोटा व्यापार शुरू किया। उसमें भी नुक़सान ही हुआ। पूरा-का-पूरा डूब गया है। ज़िंदगी से घृणा सी हो गयी है। सोचा कि पूरे परिवार के मर जाने से कर्ज़ से मुक्ति मिलेगी।'' उसने अपनी कहानी बतायी।

''तेरी बातें विश्वास करने लायक नहीं हैं,'' कहा चोर

किसी बुरी आदत में फँस गया होगा। व्यापार में केवल लाभ ही लेना है। लेकिन बुरी आदतों वाला व्यापारी मूल धन भी लेता रहता है। इसलिए दिवाला हो जाता है।''

''ठीक है भाई! यह शराब पीने की आदत में पड़ गया है।'' कहा औरत ने।

आदमी से सिर झुकाया।

ने। वह चकित हो गया। अचरज से चोर की ओर देखा।

''मैंने ठीक ही कहा।'' आदमी ने कहा।

''थोड़ा सच, और थोड़ा झूठ'' कहा चोर ने।

''तुम्हें क्या मालूम?'' आदमी क्रोध में आ गया।

''हाँ, जानता हूँ। तुम ने कई छोटी-छोटी नौकरियाँ की। उनसे अनुभव पाकर छोटा व्यापार शुरू किया। किन्तु उसमें डूब जाने की हानि इतनी बड़ी नहीं है। इस देश में करोड़ों लोग छोटे-छोटे व्यापार करके जी रहे हैं। ठेले पर फूल, साग-सब्ज़ी रखकर बेचनेवाले, फूल मालाएँ बनाकर बेचनेवाली औरतें, इधर-उधर घूमकर छोटी चीज़ें बेचनेवाले सब खुशी से जीवन गुज़ार रहे हैं। किन्तु उनमें तेरे जैसे कुछ ही लोग क्यों नुक़सान पा रहे हैं?''

चोर की बातों से उसका क्रोध बढ़ गया।

''असल में तेरा उद्देश्य क्या है?'' आदमी चिल्लाया।

''व्यापार में नुक़सान जैसी बात न होती। उसे चलानेवाले के किसी बुरी आदत में फँसने से ही...'' कहा चोर ने।

आदमी ने चोट खायी दृष्टि से देखा, ''तू झूठ बोला। तू

''तुमने जो ग़लती की, उसके लिए अपनी बीवी और बच्चों को क्यों मारते हो। असल में मरने की बात सोचना ही भयानक बात है। तेरे साथ सबके मर जाने की बात ही रोग है।'' ऐसा कहकर चोर ने वहाँ की सारी खाने की चीज़ें उठायीं और ले जाकर नाले में डाल आया।

चोर उठकर खड़ा हुआ। अपने जेब से नोटों का बंडल निकालकर आदमी को दिया।

''शराब पीना बंद करो। कर्ज़ चुका दो। फिर नये सिरे से व्यापार शुरू करो। ख़ुशी से जियो।'' कहा चोर ने।

''मुझे ये पैसे क्यों? नहीं चाहिए।'' संकोच से आदमी ने कहा।

''क्यों? चोर का पैसा समझकर सोच रहे हो क्या? उन नोटों पर क्या ''चोर का पैसा'' लिखा है? फिर भी चोर के पैसे ईश्वर भी ले रहे हैं। तुम्हें क्या हो गया है? क्या तुम ईश्वर से बड़े हो?'' ऐसा कहते हुए ज़ोर से हँसते हुए चोर अँधेरे में ग़ायब हो गया।

''वह चोर नहीं है जी। बिलकुल ईश्वर है।'' औरत ने उद्वेग से रोते हुए कहा।

संपर्क : 78-11-15/3, श्री राघवेन्द्र अपार्टमेंट
गाँधीपुरम - 3, राजामन्द्रय
आंध्रप्रदेश - 533103

साक्षात्कार

नवभारत टाइम्स के संपादक श्री सुंदरचंद ठाकुर से सुश्री मधु अरोड़ा की बातचीत

मधु अरोड़ा की प्रकाशित पुस्तकें हैं– बातें, एक सच यह भी, मन के कोने से। एक कविता संग्रह प्रकाशनाधीन है। 'क्षितिज' पत्रिका (ओहायो, अमेरिका से प्रकाशित) द्वारा गणेश शंकर विद्यार्थी सम्मान से सम्मानित और कमलेश्वर स्मृति कथा पुरस्कार से पुरस्कृत। वे कथा यू०के० से गत 18 वर्षों से जुड़ी हैं।

नवभारत टाइम्स, मुंबई में स्थानीय संपादक। 'दलील के दरमियान' शीर्षक से राष्ट्रीय विषयों पर, पाक्षिक कॉलम में निरंतर लेखन। 'किसी रंग की छाया' और 'एक दुनिया है असंख्य' कविता संग्रह का प्रकाशन। रुस के चर्चित कवि योग्निनी येव्तुशेंको की जीवनी का 'एक अजब दास्तां' नाम से अनुवाद प्रकाशन। भारतीय भाषा परिषद कलकत्ता (2001), भारत भूषण अग्रवाल स्मृति (2003) और अंतरराष्ट्रीय इन्दुशर्मा कथा सम्मान (2014) से सम्मानित।

म० अरोड़ा : आप पत्रकारिता-जगत की एक महत्त्वपूर्ण हस्ती हैं। मैंने सुना है कि आप 'आर्मी' में भी रह चुके हैं। आर्मी का जीवन तो बड़ा रोमांचक रहा होगा। आप आर्मी के दिनों की कोई घटना अपने पाठकों को बतायें, जिसने आपको संघर्ष की प्रेरणा दी हो।

सुं० ठाकुर : संघर्ष की प्रेरणा जैसी कोई बात नहीं है, क्योंकि बहुत सारी ऐसी प्रेरणाएं थीं। पिताजी सेना में थे। उन्होंने सात बार सर्विस सेलेक्शन बोर्ड की परीक्षा दी थी और क्वालिफाई नहीं कर पाये थे, जिसकी वजह से वे मानसिक रूप से परेशान रहे। इसलिए एक ज़िद थी कि मुझे सेना में ज़रूर जाना है। मैं एनसीसी में शुरू से ही काफ़ी सक्रिय रहा, इसलिए मेरा सेना से प्रेम ज़्यादा बढ़ गया था। इसलिए मैं सेना में गया। उन साढ़े पाँच साल में ऐसी घटनाएँ हैं, जो याद आती हैं। ख़ासकर सोमालिया में संयुक्त राष्ट्र के शांति अभियान में भाग ले रहा था तो सभी अधिकारी लंच लेकर कमरे में बैठे थे। अचानक गोलियाँ चलने लगीं। मेरी पहली प्रतिक्रिया हुई– मैं तुरंत अपने कमरे में गया। मेरे पास ए के 47 थी। हथियार लेकर बैरक के बाहर झाँका। सड़क पर पोस्ट (चौकी) थी जहाँ गाड़ियाँ रोक होती थीं। वहाँ जवान नहीं दिखाई दिये। हाँ, यह ज़रूर दिखा कि एक सोमाली उल्टा गिरा पड़ा था और पोस्ट के पीछे कुछ सोमाली दिखाई दिये। कैप्टन अजय बत्रा छोर के दूसरी ओर भागे। जैसे ही यह ख़याल आया कि हमारे जवानों को कुछ हो न गया हो, मुझसे रहा नहीं गया और ज़ोर से निनाद करते हुए पोस्ट की ओर देखा।

म० अरोड़ा : आपने जो कुछ देखा, उसकी प्रतिक्रिया में आपने क्या क़दम उठाये और आपके साथियों ने क्या-क्या किया– विस्तार से जानना चाहती हूँ।

सुं० ठाकुर : मैंने देखा कि पोस्ट के पीछे सोमाली बैठे थे और हमारे सूबेदार साहब पोस्ट में छिपे थे। मेरे साथ कैप्टन बत्रा भी दौड़े, लेकिन बाक़ी अफ़सरों में से कोई बाहर नहीं निकला। मेरी पोस्ट से जुड़ी सड़क के दूसरी ओर सोमाली के पास हथियार था। मैंने उसकी ओर अपनी ए के 47 बंदूक का रुख़ किया। लेकिन फ़ायर करने से पहले ही उसने हथियार फेंककर आत्मसमर्पण कर दिया। वह एक क्षण था, जब मेरी उँगलियाँ पहले ही ट्रिगर पर जा चुकी थीं और ज़रा सी हरक़त पर मैं

उसकी खोपड़ी उड़ा सकता था...लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। बाद में पता चला कि सोमाली लुटेरे सड़क से गुजर रही विश्व खाद्य संगठन' की अनाज से भरी गाड़ियों को लूटना चाहते थे और हमारा कैंप दो गुटों के क्रॉस फ़ायर में फँस गया था। हमारे ऑफ़िसर कमांडर को तंबू के पीछे से छिपकर चिल्लाते हुए सुना... फ़ायर... फ़ायर। वे बदहवास थे। एक जवान ने तो तंबू के अंदर अपनी स्टेनगन से नौ गोलियाँ फ़ायर कर दी थीं।

यह घटना मुझे इस रूप में भी याद रही कि सेना में हर युवा अफ़सर की इच्छा होती है कि वह सेना में ऐक्शन देखे, लेकिन मैं दुर्भाग्य से किसी युद्ध में भाग नहीं ले पाया, पर इस एक घटना से जाना कि अपने साथियों की रक्षा के लिए आप प्राणों की परवाह नहीं करते।

म० अरोड़ा : आर्मी में अनायास कोई भर्ती नहीं हो जाता। किन परिस्थितियों से प्रेरित होकर आपने आर्मी की ओर रुख़ किया? आपने आर्मी में सम्मिलित होने के लिए किससे प्रेरणा पाई?

सुं० ठाकुर : यदि मैं सच कहूँ तो सेना में जाने के लिए प्रेरणा से ज़्यादा हमारे परिवार की माली हालत ज़िम्मेदार थी, क्योंकि मेरे पिताजी एक नॉन कमीशंड ऑफ़िसर थे। उनके लिए तीन बच्चों को पालना बहुत मुश्किल था। पहले मैंने बहुत तंगहाली में स्कूल और कॉलेज के दिन बिताये थे। मैं और मेरा भाई किराये के घर में रहते थे और पिताजी को रुपये 400/- का मनीऑर्डर भेजते थे और यदि यह राशि नहीं भेज पाते थे, तो परिवार में दाल-रोटी की भी दिक़्क़त हो जाती थी। जब मैं 12वीं में था, तभी से ट्यूशन पढ़ाना शुरू कर दिया था, ताकि पढ़ाई का ख़र्च पूरा हो सके। मेरे मन में था कि ग्रेजुएशन के बाद अच्छी नौकरी मिल जाये। मैं कई प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठा और यह संयोग था कि 'सी जी एस' क्वालिफ़ाई किया और यह भी संयोग था कि पहली बार में ही सर्विस सेलेक्शन बोर्ड में पास हो गया, जिसमें मेरे पिताजी पास नहीं हो पाये थे और इसी के साथ मुझे सेना में नौकरी का ऑफ़र मिला। प्रेरणा के नाम पर यह ज़रूर कहूँगा कि एनसीसी में ऐक्टिव था और 1985 में दिल्ली में गणतंत्र परेड में भाग लिया था और ऑल इंडिया कमांडर बना था। ऐसी उपलब्धियों से मेरे हौंसले बहुत बुलंद हो गये थे। इन कामयाबियों ने सेना में जाने के लिए लगातार प्रोत्साहित किया।

म० अरोड़ा : आर्मी के पहले आप कहाँ कार्यरत थे?

सुं० ठाकुर : सेना से पहले विद्यार्थी-जीवन जी रहा था। दिल्ली में आठ महीने कई बच्चों को ट्यूशन पढ़ाया। वह भी अपने आप में एक नौकरी थी, क्योंकि मैं अपनी हरे रंग की हर्क्यूलिस सायकिल से सुबह सात-आठ बजे घर से निकलता था और पाँच-छः ट्यूशन पढ़ाकर शाम को लौट पाता था। तब महीने में रुपये 1900/- कमा लेता था।

म० अरोड़ा : आर्मी छोड़ने का कोई विशेष कारण...?

सुं० ठाकुर : सेना में जाने से पहले ही मेरे मन में साहित्य और पत्रकारिता के बीज अंकुरित हो चुके थे। मैंने कॉलेज में रहते हुए ही सुंदरलाल बहुगुणा का इंटरव्यू लिया था। तब मेरे लेख व कविताएँ क्षेत्रीय अख़बारों में प्रकाशित हुए। सेना में साढ़े पाँच साल नौकरी करने के बाद लगा कि अब वक़्त आ गया है कि अब मैं अपनी दबी हुई दूसरी इच्छाओं को पूरा करने का प्रयास करूँ। पत्रकार बनने की इच्छा इतनी बलवती थी कि सेना में रहते हुए भी सोमालिया में सेना के ऑपरेशन पर मैंने मृणाल पांडे को लेख भेजा था और वह प्रकाशित हुआ था। हालांकि उस लेख में मेरा नाम प्रकाशित नहीं हुआ था, पर रुपये 1300/- का भुगतान ज़रूर किया था। साढ़े पाँच साल बाद मेरी व परिवार की माली हालत ठीक हो गई थी और ज़ोखिम उठा सकता था। घर के लोगों ने सेना छोड़ने का विरोध किया पर मैंने आँख मूँदकर भविष्य के अंधकार में छलाँग लगा दी। सौभाग्य से मुझे सेना छोड़ते ही नौकरी मिल गई।

म० अरोड़ा : किस प्रकार की नौकरी मिली। मनचाही नौकरी मिली? जानना चाहती हूँ।

सुं० ठाकुर : जो मिली, वह पत्रकार की नौकरी नहीं थी, मैं दिल्ली में टाइम्स ऑफ समूह में सुरक्षा अधिकारी के रूप में कार्य करने लगा। छः साल तक ही रहा वहाँ, पर इस बीच समयांतर से लेकर दूसरे हिन्दुस्तान टाइम्स, नवभारत टाइम्स, जनसत्ता में मेरे लेख प्रकाशित होने लगे थे।

म० अरोड़ा : नवभारत टाइम्स, मुम्बई में कैसे आये?

सुं० ठाकुर : 2003 में नवभारत टाइम्स के संपादकीय विभाग में एक जगह खाली हुई, जिसके लिए मैंने आवेदन किया और मैं शुक्रगुज़ार हूँ मधुसूदन आनंद का, जिन्होंने मुझे नवभारत टाइम्स में मौका दिया।

म० अरोड़ा : अब आप नवभारत टाइम्स के संपादक व पत्रकार हैं, कैसा अनुभव करते हैं?

सुं० ठाकुर : संपादक व पत्रकार का काम मौज़ूदा हालात में और चुनौतीपूर्ण हो गया है। जब भी कभी ऐसी चुनौतियाँ सामने होती हैं तो यह स्वाभाविक होता है कि आप उनका मुक़ाबला करते हुए अपने काम में ही डूब जाते हैं। मेरे साथ एक तरह से ऐसा हुआ है कि जिसकी मुझे चाह थी, वही मुझे मिल गया। आज तक कभी ज़ेहन में ऐसा ख़याल नहीं आया कि मैं पत्रकारिता के अलावा भी कुछ कर सकता हूँ, पर मैं अपने काम से संतुष्ट नहीं हूँ।

म० अरोड़ा : मनचाहा पद मिला और आप कहते हैं कि आप संतुष्ट नहीं हैं। लगता है, आप कुछ विशेष करना चाहते हैं।

सुं० ठाकुर : कुछ ऐसा ही समझिए। पत्रकारिता का जो आदर्श रूप हो सकता है, वह मेरे लिए आज भी एक सपना जैसा ही है। इसकी कई वजहें हैं...अस्सी और नब्बे के दशक में जिस तरह से नौजवान पत्रकारिता से जुड़ रहे थे, उसे नौकरी से ज़्यादा एक तरह का आंदोलन मान रहे थे। अब वैसा नहीं रहा। जो नये पत्रकार आ रहे हैं, वे पत्रकारिता को एक सोच-समझकर चुने गये कैरिअर के रूप में देखते हैं। पहले तो यह भी था कि हिन्दी के ज़्यादातर पत्रकार साहित्य के ही बहुत क़रीब रहते थे। इससे होता यह था कि उनके पास जनता की उन तमाम समस्याओं को लेकर, जिन्हें लेकर अख़बारों में खबरें छपती हैं ...एक 'विज़न' था। लेकिन अब चीज़ें अपने-अपने बीट की ख़बरें देने तक सीमित रह गई हैं। एक सौभाग्य यह रहा कि मैं जिस ग्रुप में काम कर रहा हूँ, वहाँ मालिकों से ख़बरों के चयन के मामले में किसी भी तरह का कोई दबाव मुझ पर नहीं रहा। लेकिन ऐसा होते हुए भी मैं कई बार ख़बरों को ठीक उस तरह पाठकों के सामने नहीं रख पाता, जिस तरह आदर्श रूप में रखना चाहता हूँ। हम कह सकते हैं कि हिन्दी की पत्रकारिता ख़बरों के विश्लेषण व उन्हें गहराई देने के मामले में अभी बहुत पीछे है। लेकिन फिर भी मेरी हमेशा यह कोशिश रही है, संतुलित रहकर ख़बरों का चयन करूँ। यह संतुलन लाना अपने आप में बहुत बड़ी चुनौती है, जिसका मैं रोज़ सामना करता हूँ।

म० अरोड़ा : आज जिस तरह की पत्रकारिता हो रही है, उसके विषय में आप क्या सोचते हैं?

सुं० ठाकुर : जहाँ तक पत्रकारिता का सवाल है तो अलग-अलग जगह पर अलग-अलग तरह की पत्रकारिता हो रही है। छोटे अख़बारों ने पत्रकारिता को सिर्फ़ मुनाफ़े तक सीमित कर दिया है, लेकिन मुख्य धारा के अख़बारों में आज भी मुझे वह दम दिखता है, जिसके चलते राष्ट्र सही दिशा में बढ़ पाता है। यह पत्रकारिता में निहित है कि वह बिना किसी डर व बिना किसी लोभ के काम करती है। पर आज डर भी बढ़ गये हैं और लोभ भी बढ़ गये हैं। इसलिए कई बार हम आदर्श पत्रकारिता की खिल्ली उड़ते देखते हैं। ऐसे बहुत सारे अख़बार हैं, जिनके मालिक स्वयं सत्ताधारी नेता हैं और ऐसे चैनल भी हैं जिनके मालिकों ने अपना राजनैतिक रुझान ज़ाहिर करने में कोताही नहीं की है। वे धड़ल्ले से अपने हितों की ख़बरों को प्रकाशित करते हैं और जहाँ भी उन्हें अहित की आशंका लगती है, उन ख़बरों को जगह नहीं दी जाती। यह एक डरावनी स्थिति है, क्योंकि जिस दिन राष्ट्र का यह चौथा स्तंभ (पत्रकारिता) किसी पक्ष की ओर झुक जायेगा, उसी

दिन हमारे लोकतंत्र का महल डगमगाने लगेगा।

म० अरोड़ा : जिस तरह टीवी पर विभिन्न चैनलों की धूम मच रही है और जिस तरह से उनकी ऐंकरिंग होती है, आपको क्या लगता है, क्या यह सही तरीका है?

सुं० ठाकुर : आपको यह जानकर हैरानी होगी कि मेरे लिए ख़बरों के हिन्दी चैनलों को देखना अनिवार्य जैसा होते हुए भी मैं उन्हें नहीं देखता। इसकी वजह यह है कि मुझे वे ख़बरें वेबसाइट में पढ़ने को मिल जाती हैं। हिन्दी ख़बरों के चैनल एक ही ख़बर को आप तक पहुँचाने के लिए कहीं ज़्यादा समय लेते हैं और जिस तरीके से वे ख़बरें पेश करते हैं, वह एक गंभीर प्रयास होने के बजाय तमाशा ज़्यादा लगता है। यह बेवजह नहीं है कि हिन्दी चैनलों के ब्रेकिंग न्यूज़ पर आये दिन चुटकुले बनते रहते हैं। देखा जाये तो टीवी न्यूज़ अभी पूरी तरह से विकसित नहीं हुई है। ख़बरें देना एक बहुत गंभीर मसला है और इसे बहुत सावधानी से करने की ज़रूरत है।

म० अरोड़ा : कैसी सावधानी?

सुं० ठाकुर : मैं देखता हूँ कि ज़्यादातर चैनल गंभीर ख़बरों के मामले में भी कामचलाऊ रुख़ अख़्तियार करते हैं और विशेषज्ञ का सहारा नहीं लेते। इससे एक बहुत बड़ा हिन्दी का बुद्धिजीवी तबक़ा हिन्दी चैनलों से कट गया है और वह ख़बरों के लिए अंग्रेज़ी चैनलों पर ज़्यादा निर्भर है।

म० अरोड़ा : चूँकि आप लेखक भी हैं, तो एक लेखक होने के नाते आज के हिन्दी साहित्य के विषय में क्या कहना चाहेंगे।

सुं० ठाकुर : मुझे लगता है कि साहित्य लगातार बेहतर हुआ है, पर चूँकि अब आपके पास साहित्य तक पहुँचने के लिए बहुत ज़रिये हैं या यह कहें कि बहुत से ज़रियों से साहित्य आप तक पहुँच रहा है। इसलिए ऐसा कह सकते हैं कि आज का साहित्य बहुत असर पैदा करनेवाला नहीं है। मैं कई बार सोचता हूँ कि तीस साल पहले का जीवन कैसा था और आज का जीवन कैसा है। तीस साल पहले आपके पास कितना समय और ठहराव था कि मस्तिष्क में ऊर्जा बनी रहती थी, क्योंकि आपको विचलित करने वाली चीज़ें आप तक पहुँच नहीं पाती थीं। तब मन और दिमाग़ में जैसी स्थिरता रहती थी, वैसी आज नहीं है। यह मेरे लिए कल्पनातीत है कि आज के समय में कोई बाबा नागार्जुन हो सकता है। आज टी०वी० और मोबाइल आपके जीवन में इतना अधिक स्थान ले चुके हैं कि अपने मनोमस्तिष्क को स्थिर रख पाना ही अपने आप में एक चुनौती है और जब यही स्थिर नहीं होंगे तो रचनात्मकता को कैसे जन्म दे सकते हैं। क्रिएटिव होने के लिए सबसे ज़रूरी है कि आप ऊर्जा से भरे हों। वही नहीं हो पा रहा। मौजूदा साहित्य में थोड़ी शिथिलता तो मिलती है, लेकिन इस बात को हम सब पर लागू नहीं कर सकते।

म० अरोड़ा : जो कुछ विशेष आप देखते हैं, उस पर प्रकाश डालिए।

सुं० ठाकुर : कुछ लोग स्वयं को मौज़ूदा समय की दुश्वारियों से बचाने में निपुण हो गये हैं, उनसे हमें लगातार बेहतर साहित्य पढ़ने को मिल रहा है। असल में मौज़ूदा दौर में जीवन की दुश्वारियाँ जितनी बढ़ी हैं, हमें उनसे जूझते हुए उन्हीं पर लिखना भी है। तो एक तरह से यह दोगुनी चुनौती है। मैं केदारनाथ सिंहजी की कविताएँ पढ़ रहा था। ऐसा लगा, मानो आज की दुश्वारियाँ उन्हें छू भी नहीं पाई हैं। लेकिन केदारनाथजी के पास या उनसे कुछ बरस छोटे दूसरे कवियों व कहानीकारों के पास स्मृति का जानदार ख़जाना है। वे उसमें गोता लगाकर अपने सृजन में एक ऊँचाई ला सकते हैं। पर सोचिए, वे नौजवान जिन्होंने मोबाइल युग में ही जन्म लिया, उनके पास तो स्मृति के नाम पर भी सिर्फ़ कोलाहल है। मैंने जितनी साहित्यिक यात्रा की है, मुझे यह अनुभव हुआ है कि शुरू में आप प्रतिक्रियावादी ज़्यादा होते हैं। इसलिए घटनाओं पर साहित्य रचने को प्रेरित होते हैं। लेकिन श्रेष्ठ साहित्य महज़ घटना तक सीमित नहीं किया जा सकता, उसके लिए जीवन की गहरी समझ बहुत ज़रूरी है। कभी-

कभी मुझे इस समझ का आजकल अभाव दिखता है। कुछ दिनों पहले मैंने एक पत्रकार साहित्यकार की कहानी पढ़ी। वह कहानी इतनी सतही थी कि मुझे लगा कि अपना वक़्त बरबाद कर रहा हूँ, पर मुझे यह भरोसा नहीं हुआ कि पचास की उम्र तक पहुँचे उस थोड़े नामचीन पत्रकार व साहित्यकार ने इतनी हल्की कहानी कैसे लिख दी? मैं इस जिज्ञासा में ही उस कहानी को पूरा पढ़ गया कि अंत में ऐसा कुछ जादुई होगा कि शायद मुझे विस्मित कर जाये, जिसके लिए कि साहित्य रचा भी जाता है, मगर अफ़सोस... कि ऐसा कुछ भी नहीं हुआ।

म० अरोड़ा : आप मैराथन ख़ूब दौड़ते हैं, इतनी ऊर्जा कहाँ से पाते हैं?

सुं० ठाकुर : असल में मैराथन दौड़ना ऊर्जा का री-सायकिलिंग है। कुछ लोगों को लगता है कि मैराथन दौड़ने के लिए ऊर्जा चाहिए, पर मेरा मानना है कि मैराथन दौड़ने से ही ऊर्जा मिलती है। उम्र के चार दशक पार करने के बाद शायद व्यक्ति में कुछ अलग करने की इच्छा होती है। कुछ ऐसा कि वह समसामयिक बना रह सके। दौड़ता तो मैं पहले भी था, पर 2011 में बिना बहुत तैयारी के पहली पूरी मैराथन दौड़ने के बाद धीरे-धीरे मुझे इसमें इतना आनंद आने लगा कि मैंने दौड़ने पर दर्जनों पुस्तकें पढ़ डालीं। तभी मैंने मोराकामी को पढ़ा, तभी मैंने **ठवतद जव त्नद क्रिस्टोफर मैकुडूगल** पढ़ी और जाना कि दौड़ना अपने आपमें बहुत बड़ी कला है। अब मैं यह मानता हूँ कि दौड़ना मेडिटेशन जैसा ही है और दौड़ने व मेडिटेशन में ज़्यादा फर्क़ नहीं है। मैं इन दिनों नंगे पैर दौड़ने का अभ्यास कर रहा हूँ। हो सकता है कि आगामी वर्षों में आप मुझे नंगे पैरों ही मैराथन दौड़ते देखें। मैं जितनी बार दौड़ता हूँ, मेरी ऊर्जा उतनी ही बढ़ जाती है।

संपर्क : एच-1/101 रिद्धि गार्डन,निकट सुधा
अस्पताल फ़िल्म सिटी रोड, मलाड (पूर्व)
मुम्बई - 400097

पृष्ठ 46 का शेषांश...

के गुण गाते-गाते...किसी से भी पूछ लीजिए।'

'फिर खाना क्यों खिलाया तुमने?'

'नहीं खिलाते तो वे हमें गोलियों से भून डालते।'

फ़ौजियों के पास जिरह का वक़्त न था। वे रज़्ज़ाक मियाँ और नज़ीर को पकड़कर ले गए। फ़ौजी गाड़ी मानो ख़ुर्शीद बी के कलेजे को चीर गई। वे पीछे-पीछे दौड़ीं। अपना कुरता सामने से फाड़ डाला– 'छोड़ दो उन्हें, हम कश्मीरी हैं...अपने कश्मीर की ख़ातिर यह देखो...रात-भर छातियाँ नुचवाई हैं मैंने...हम बेगुनाह हैं...छोड़ दो उन्हें...।'

लेकिन उनकी पुकार पर फ़ौजी गाड़ी के पहिये चल गए और पुकार वहीं दफन हो गई। वीरान कच्ची सड़क को वे फटी-फटी आँखों से देखती रह गईं...आँखों के सामने अँधेरा छा गया...लेकिन अपनी आख़िरी कोशिश में भर ताक़त जीप की दिशा की ओर दौड़ीं, पीछे-पीछे रोती बिलखती दोनों लड़कियाँ। ख़ुर्शीद बी का संतुलन बिगड़ गया। पैर झाड़ी में उलझ गये और एक बड़े से नुकीले पत्थर पर वे गिर पड़ीं। माथा फट गया। ज़मीन ढलवाँ थी, लुढ़ककर वे दूसरे पत्थर पर सिर के बल गिरीं। चोट गहरी और जानलेवा थी। लहू उबलकर नाक, कान, आँखों से बहने लगा। अंतिम साँस लेते हुए भी ख़ुर्शीद बी के होंठों पर बस यही रटन थी... 'हम कश्मीरी हैं... हम कश्मीरी...।'

संपर्क : 204, केदारनाथ को.हाऊ.सो.
सेक्टर 7, चारकोप बस डिपो के पास
कांदिवली (प.), मुंबई - 400067

प्रयास

बयार

वीनु जमुआर

'जाणीव- ए होम फॉर द सीनियर सिटिजन', फुलगाँव की फाउण्डर ट्रस्टी एवं पूर्व अध्यक्षा। अनेक लेख तथा कहानियाँ प्रकाशित। प्रकाशित पुस्तक : 'पाथेय'। विभिन्न पत्रिकाओं का संपादन। मदर टेरेसा मिशनरीज ऑफ चैरिटी (पटना) के साथ ही अनेक संस्थाओं के साथ कार्य। 'लायन्स क्लब ऑफ पुणे' के लिए बेस्ट सेक्रेटरी ऑफ द डिस्ट्रिक्ट वार्षिक अवार्ड से सम्मानित।

दिन का कलरव शांत हुआ
मन को प्रीत की चाह हुई
उषा, संध्या की बाहों में छुप
चाँदनी के इंतज़ार में
नाचने को बेताब हुई

अँखियों में सँजोये
खुशियों के ख्वाब
होठों पे लिए स्मित हास
देखो तो द्वार पर आया कौन
मौन खड़ा यह बसंत बयार।

ये खुले झरोखे
बसन्त,
तुम्हारी खुशियों के झोंके
और अठखेलियाँ
संग लाये
फाग के इंद्रधनुषी
रंगों के बहार
पलाश के रंगों का गीलापन
और
अबीर के सूखे सुर्ख़ रंग
पर यह क्या?
अचानक
देखते ही देखते

मौसम की ये तब्दीलियाँ
गरम हवा के झोंके
लहरों के थपेड़े
झंझावात अंधड़ और तूफ़ान
और बंद होते हुए
ये झरोखों के द्वार।

अच्छा लगता था पौ फटते ही ओस से
नहाई दूबों को देखना
कोहरे से ढकी
सामने वाले संकटमोचन के मन्दिर की
टिमटिमाती बिजली की लड़ियाँ,
छोटे-छोटे पाम के पौधों के
गमलों के बीच बैठना
और देखना उस
अधखुली खिड़की को
जो होती थी हमेशा
पहले पूरी खुली हुई।
शनैः शनैः बंद होती जा रही है
समय के प्रवाह में
अच्छा अगर अब
नहीं लगता है तो
उस खिड़की को बंद होते देखना।
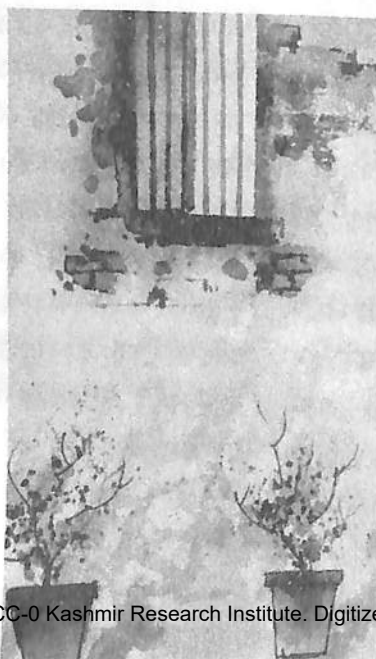
संपर्क : 15, वृंदावन, मुकुंद नगर
पुणे - 411037

पुस्तक-समीक्षा

नाचती हुई आकृतियों का रहस्य

(शरलॉक होम्स की जासूसी कहानियों का हिन्दी अनुवाद)

डॉ० प्रज्ञा शुक्ल

बीसवीं शताब्दी में देशों के बीच की दूरियाँ कम होने के परिणामस्वरूप विभिन्न वैचारिक धरातलों और आर्थिक, औद्योगिक स्तरों पर पारस्परिक भाषिक विनिमय बढ़ने के साथ-साथ अनुवाद का प्रयोग अधिक होने लगा। वैसे तो अंग्रेज़ों के भारत आगमन से ही भारतवासी अंग्रेज़ी साहित्य से परिचित होने लगे थे। विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान-राशि के आदान-प्रदान का कार्य अनुवाद द्वारा ही संभव हो सकता है। अत: अनुवाद आज के युग की अनिवार्य आवश्यकता है।

किसी कृति में निबद्ध विचारों या भावों का दूसरी भाषा के माध्यम से सम्प्रेषण करना अनुवाद है। अनुवाद का मूल उद्देश्य मूलकृति को लक्ष्य भाषा में निकटतम रूप में भाषांतरित करना होता है। परंतु हर भाषा की प्रकृति में कुछ निजी विशेषताएँ होती हैं, जो दूसरी भाषाओं में नहीं होतीं। प्रत्येक भाषा के अपने संस्कार होते हैं; शब्दों की अपनी रूढ़ियाँ, परंपराएँ होती हैं। हर शब्द के साथ अर्थ की कुछ छायाएँ-छवियाँ जुड़ी रहती हैं। अनुवाद की सर्वप्रथम निष्ठा मूल कृति के अन्तस्तत्त्व के प्रति ही होनी चाहिए। उसका साध्य उसी का संप्रेषण करना है, परंतु अनुवाद का प्रयत्न यही होना चाहिए कि दोनों के बीच अधिकाधिक सामंजस्य स्थापित हो सके।

हिन्दी में सबसे बड़ी संख्या अंग्रेज़ी से अनुवादों की है। सर आर्थर कॉनन डायल की जासूसी कहानियाँ संपूर्ण विश्व में अत्यंत प्रसिद्ध हैं। सर आर्थर कॉनन डायल द्वारा रचा गया अमर पात्र शरलॉक होम्स बरसों से सभी पीढ़ियों के पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। शरलॉक होम्स द्वारा सुलझायी हुई विभिन्न गुत्थियाँ विशेष रूप से 'नाचती हुई आकृतियों का रहस्य' जैसी कहानियाँ बार-बार पढ़ने के पश्चात् भी मन नहीं भरता। शरलॉक होम्स की अनेक कहानियों का लगभग सभी भारतीय भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। इन कहानियों पर अनेक फिल्में एवं धारावाहिक भी बने हैं। भारतीय भाषाओं की जासूसी कहानियाँ विशेष रूप से बंगला के अमर पात्र फेलूदा की कथाओं के साथ विदेशी भाषाओं की जासूसी कहानियाँ भी पाठक चाव से पढ़ते हैं। कठिन-से-कठिन गुत्थी को सूक्ष्म निरीक्षण एवं गहरी सोच से तर्कपूर्ण ढंग से सुलझानेवाला शरलॉक होम्स पैसा कमाने के लिए नहीं, परंतु अपने

डॉ० प्रज्ञा शुक्ल द्वारा गुजराती से हिन्दी में अनूदित 9 पुस्तकें, अंग्रेजी से हिन्दी में अनूदित 1 पुस्तक, अनेक गुजराती कहानियों का हिन्दी में अनुवाद। पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, मणिबेन नानावटी महिला कॉलेज, विले पार्ले।

संप्रति : एम.डी. शाह महिला कॉलेज, मालाड में स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग में अतिथि व्याख्याता।

काम के प्रति प्यार एवं जासूसी कला के प्रति लगाव के कारण करता था। वह ऐसे किसी भी मामले को हाथ में लेने से मना कर देता था, जो कुछ असामान्य या विशेष न हो।

सर आर्थर कॉनन डायल की शरलॉक होम्स की जासूसी कहानियों को सरल हिन्दी भाषा में संप्रेषित करना एक भगीरथ कार्य है। संजीव निगम ने मूल अंग्रेज़ी कहानियों के मूल भावों को बरकरार रखते हुए हिन्दी में उनका अनुवाद करके दोनों के बीच अधिकाधिक सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश की है।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के न्यासी एवं मानद सचिव श्री फ़िरोज़ पैच ने भूमिका में ही इस पुस्तक की प्रस्तुति का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहा है कि "हम सरल हिन्दी में कुछ ऐसी कहानियाँ अपने पाठकों के सामने लाने जा रहे हैं, जो अपने आपमें विशिष्ट हैं। ...शरलॉक होम्स की कहानियों में भारत का ज़िक्र हमें रोमांचित कर देता है। ...इन कहानियों की भाषा एकदम सरल रखी गयी है, ताकि सभी पाठक इनका आनंद ले सकें और यही हमारा उद्देश्य है।" हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के न्यासी एवं अध्यक्ष श्री सतीश शाह के अनुसार "हिन्दी एवं हिन्दुस्तानी के बहुत बड़े हिमायती महात्मा गाँधी ने अच्छे विदेशी साहित्य और अन्य सामग्री को भारतीय भाषाओं में अनुवाद करके यहाँ के पाठकों को उनकी भाषा में उपलब्ध कराने का विचार व्यक्त किया था। ...गाँधीजी की इसी सोच को ध्यान में रखते हुए हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने सर आर्थर कॉनन डायल द्वारा लिखी गयी शरलॉक होम्स की कुछ प्रसिद्ध कहानियों का सरल हिन्दी में अनुवाद कराकर एक पुस्तक के रूप में आपके सामने रखा है।" इस कथन के द्वारा इस पुस्तक की प्रस्तुति-विषयक उद्देश्य स्पष्ट किया है।

...गाँधीजी की इसी सोच को ध्यान में रखते हुए हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने सर आर्थर कॉनन डायल द्वारा लिखी गयी शरलॉक होम्स की कुछ प्रसिद्ध कहानियों का सरल हिन्दी में अनुवाद कराकर एक पुस्तक के रूप में आपके सामने रखा है।"

संजीव निगम द्वारा अनूदित इस पुस्तक का शीर्षक "नाचती हुई आकृतियों का रहस्य" है। इस पुस्तक में समाविष्ट सात कहानियों में से सर्वाधिक प्रसिद्ध कहानी भी यही है एवं शरलॉक होम्स की रहस्यों पर से पर्दा उठाने की असाधारण प्रतिभा को हमारे सम्मुख रखती है। पुस्तक का मुखपृष्ठ इसी कहानी के आधार पर तैयार किया गया है। पुस्तक का शीर्षक "नाचती हुई आकृतियों का रहस्य" एवं मुखपृष्ठ पर चित्रित नाचती हुई आकृतियाँ एवं शीशे पर स्थिति आकृतियाँ दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं एवं पाठक को आकर्षित करती हैं।

विक्टर ह्यूगो के शब्दों में कहें तो "अनुवाद की प्रक्रिया सूर्य की किरणों को तिनके में बाँधने का प्रयास है।" पुस्तक में समाविष्ट सात कहानियों के आरंभ में हिन्दी शीर्षक के साथ अंग्रेजी शीर्षक भी दिए गए हैं। तीन कहानियों में Adventure शब्द हैं, परंतु दो कहानियों के शीर्षक में इसका 'कारनामा' अनुवाद किया गया है, जो कि इनके कथ्य के अनुसार है, जबकि 'The Adventure of the dancing man' कहानी का अनुवाद 'नाचती हुई आकृतियों का रहस्य' किया गया है। इस कहानी का शीर्षक एवं पुस्तक का शीर्षक इस रूप में प्रस्तुत करके पाठक के मन में उत्सुकता जाग्रत करने की ओर ध्यान प्रवृत्त किया गया है। वैसे भी रहस्य तक पहुँचने के लिए पाठक एक ही बैठक में कहानी के अंत तक पहुँच जाता है। अन्य चार कहानियों के शीर्षक का अनुवाद ज्यों-का-त्यों

किया गया है। सभी कहानियों के शीर्षक का अनुवाद संजीव निगम ने अत्यंत सतर्कता से किया है। चार कहानियों में भारतीय सन्दर्भ है, जिसे पढ़कर पाठक अपनेपन का एहसास करता है।

सृजनात्मक लेखन को अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता होती है, जबकि अनुवादक को ऐसी स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती। अनुवादक का उत्तरदायित्व मूल रचना की अनुभूति तक लक्ष्य भाषा के पाठकों को पहुँचाना है और इसके लिए अनुवादक को स्वयं मूल अनुभूति तक पहले पहुँचना होता है। उसकी संवेदना को, उसकी शक्ति-सीमा को जानकर लक्ष्य भाषा के शब्दों की खोज करनी पड़ती है। परंतु जब अनुवादक स्वयं लेखक होता है, तब अनुवाद मूल रचना-का सा आनंद देने लगता है। पात्रों के अंग्रेज़ी नामों से परिचित होने के पश्चात् इन रहस्यपूर्ण कहानियों को पढ़ते हुए कहीं भी अवरोध का अनुभव नहीं होता। बच्चनजी का कथन "अनुवादक का चरम लक्ष्य यह हो कि अनुवाद, अनुवाद न मालूम हो" इस पुस्तक के लिए सही सिद्ध होता है।

भाषा सम्प्रेषण का माध्यम होती है। उसकी स्थिति किसी विशिष्ट देश-काल और समाज विशेष में आबद्ध होती है। समाज के परिवर्तन के साथ-साथ किसी भी भाषा के शब्द और ध्वनि-समुच्चय की सार्थकता भी बदलती है। परंतु शरलॉक होम्स की इन जासूसी कहानियों के देश-काल और समाज के भिन्न होने के बावजूद कहानियों के रहस्य को लेकर पाठक अत्यंत सरलता से अंत तक पहुँच जाता है। संजीव निगम ने अत्यंत कुशलता से सरल किन्तु सार्थक भाषा का प्रयोग करके पाठक की उत्सुकता बनाए रखी है।

इन कहानियों में अनेक स्थानों पर अत्यंत लंबे वाक्य हैं, परंतु संजीव निगम ने उन लंबे वाक्यों को तोड़कर छोटे-छोटे वाक्यों में परिवर्तित करके अर्थ को विकृत करने का जोख़िम नहीं उठाया है, परंतु अत्यंत सावधानी से सतर्क रहकर उन वाक्यों को अर्थपूर्ण रूप से प्रस्तुत किया है। आवश्यकता पड़ने पर मूलकृति के महत्त्वपूर्ण शब्दों के उपयुक्त पर्याय प्रस्तुत करके कथ्य को अत्यंत संप्रेषणीय बना दिया है। मुहावरों एवं कहावतों के लिए समानार्थ उक्तियों एवं समानान्तर उक्तियों का प्रयोग किया है। 'नाचती हुई आकृतियों का रहस्य' कहानी विशेष रूप से आकर्षित करती है। मूल आकृतियों एवं अंग्रेज़ी के अक्षरों को उसी रूप में रखकर नाचती हुई आकृतियों के रहस्य को प्रकट किया गया है।

संजीव निगम हिन्दी के चर्चित रचनाकार हैं। कविता, कहानी, व्यंग्य-लेख, नाटक आदि विधाओं में सक्रिय रूप से लेखन कर रहे हैं। अत: उनके अनुवाद का स्तर सृजन-सदृश है। श्री फ़िरोज़ पैच ने सही कहा है "जब एक लेखक अनुवाद करता है तो अनुवाद मूल लेखन का सा आनंद देने लगता है और कहानियों की रोचकता बनी रहती है।" संजीव निगम को हार्दिक बधाई।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने 'नाचती हुई आकृतियों का रहस्य' पुस्तक की प्रस्तुति द्वारा स्तुत्य प्रयास किया है। भविष्य में भी इसी प्रकार की प्रस्तुतियाँ की जाएँगी तो पाठक अन्य भाषाओं के साहित्य से परिचित होकर ज्ञानवर्धन कर सकेंगे।

संपर्क : डी-603, धर्मानगर, ऑफ़ लिंक रोड,
योगीनगर के पास, बोरीवली (पश्चिम)
मुम्बई - 400 091

समीक्ष्य पुस्तक : नाचती हुई आकृतियों का रहस्य
लेखक : सर आर्थर कॉनन डायल
हिन्दी अनुवाद : संजीव निगम
प्रकाशक : हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, मुम्बई
प्रथम संस्करण : फ़रवरी 2016

आपकी बात

भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सहयोग द्वारा मुंबई से 48 वर्षों से प्रकाशित होने वाली हिन्दुस्तानी ज़बान पत्रिका वस्तुत: स्वदेश के साथ-साथ विश्व की 'हिन्दुस्तानी ज़बान' की प्रतिनिधि पत्रिका है। भारत से बाहर विशेषकर भारतवंशी बहुल देशों में हिन्दी भाषा और संस्कृति के लिए सक्रिय रहते हुए शिद्दत से मैने यह अनुभव किया है कि इन देशों के हिन्दुस्तानियों की ज़बान– हिन्दुस्तानी ज़बान ही हिन्दुस्तानी संस्कृति है, इसलिए हिन्दुस्तानी ज़बान ही हिन्दुस्तानियों की संस्कृति की अस्मिता के मूल में है।

2016 के प्रवेशांक में सहिष्णुता और सहनशीलता के मुद्दे पर प्रो० रवींद्र कुमार का आलेख प्रासंगिक और महत्त्वपूर्ण है, जिसमें गाँधीजी के कथन के उल्लेख को अभियान बनाये जाने की आवश्यकता है– ''अपनी संस्कृति से 'हम' सीखें और उसकी मूल भावना के अनुसार ही व्यवहार करें, क्योंकि अपनी संस्कृति से विच्छिन्न होकर हम एक समाज के रूप में आत्महत्या कर लेंगे।''

पत्रिका का यह अंक इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है कि संपादिका डॉ० सुशीला गुप्ता जी ने देश की एकता पर मँडराते हुए संकट के बादलों की गर्जना पहले से ही अनुभव करते हुए 'स्वतंत्रता' शीर्षक से फ़िरोज़ पैच जी का आलेख अंग्रेज़ी से हिन्दी में अनुवाद(संजीव निगम) करवाकर प्रकाशित किया, जिसमें फ़िरोज़ साहब, लोकतंत्र के महत्त्व को स्थापित करते हुए लिखते हैं– लोकतंत्र में नागरिकों को ऐसी जानकारियाँ चाहिए, जिनसे वे यह तय कर सकें कि राष्ट्रीय या स्थानीय सरकारों की नीतियों का समर्थन करना है या नहीं? लोकतंत्र में प्रेस की आज़ादी केवल राजनैतिक और सामाजिक मुद्दों पर ही लागू नहीं होती है, बल्कि आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और वैज्ञानिक मुद्दों पर भी लागू होती है।''

साहित्यिक मुद्दे पर डॉ० कामता कमलेश जी का आलेख– 'साहित्य में पत्र-लेखन परम्परा' अत्यंत सामयिक है। इंटरनेट के इस अमानवीय युग में यह लुप्त होती हुई प्रजाति-सरीखी विधा है। इसके माहात्म्य का जीवंत ऐतिहासिक दस्तावेज़ देते हुए कमलेश जी ने विधा के संरक्षण की दिशा में सार्थक प्रयत्न किया है। 'लोचन जल कागद मिलि मसि हवै गयी, स्याम-स्याम की पाती।' मैं उनके 'मैं तो कुन्ती को विश्व की प्रथम प्रवासी हिन्दी संवाददाता मानता हूँ' से सहमत हूँ। डॉ० स्वदेश भारती, डॉ० मृदुला वर्मा, श्री ओमप्रकाश, सुश्री उषा भटनागर और डॉ० मेराज अहमद कथाकारों की कहानियाँ प्रभावपूर्ण हैं जिनसे अपने समय की धड़कनों का अहसास होता है। श्री नरेंद्र परिहार के आलेख– 'मुझे चाहिए एक मुट्ठी आसमान, दो गज ज़मीन, दो रोटी : उठो किसान' के बिना– अपने समय पर हिन्दुस्तानी ज़बान की दस्तक अधूरी रहती है।

चार पृष्ठों में सभा की गतिविधियों का विवरण और विश्लेषण हिन्दुस्तानी ज़बान का दर्पण है, जिससे दोनों की सक्रियता की पहचान कायम होती है। बापू का वज़न (डॉ० रमेश मिलन), दो सायों के बीच (डॉ० सत्यपाल श्रीवत्स), सूखे पत्ते की आवाज़, (श्री विश्वनाथ सचदेव), समान्तर (डॉ० र० शौरिराजन) की कविताएँ, पानी (साहिल मधोपुरी), सच से नज़र मिलाने की हिम्मत नहीं रही (श्री देवमणि पाण्डेय) की ग़ज़ल से पत्रिका ने अपने पाठकों का समय से सामना करवाया है। कहानी और उपन्यास के शीर्षकों वाली कविताएँ और ग़ज़लों को पढ़कर प्रभावित हूँ और इसी क्रम में कथाकार सुधाजी के कविता संग्रह 'कम से

कम एक दरवाज़ा' की समीक्षा से स्त्री मन की सारी पर्तें ही कविता के शब्दों में खुलकर सामने आ गयी हैं। बधाई।

वस्तुत: आज विज्ञापन का युग है। ऐसे में 'हिन्दी भाषा और विज्ञापन' (डॉ० कृष्णा डी० पटेल) आलेख ने हिन्दी भाषा को विज्ञापनों की शक्ति बनाने के कारगर उपाय सुझाये हैं। यथा– विज्ञापनों ने हिन्दी को जितना फैलाया है, उतना शायद धारावाहिकों ने भी नहीं फैलाया। हालात यहाँ तक आ पहुँचे हैं कि प्रशासन और सरकार को यदि कोई विकासमूलक संदेश भी देना है तो वह विज्ञापन की भाषा में होता है। फ़िल्मों-धारावाहिकों और विज्ञापनों ने मिलकर हिन्दी को व्यापार की भाषा बनाया है। हिन्दी आज उपभोक्ता क्रान्ति की वाहक बन गयी है। हिन्दी भाषा की मौजूदा क्रान्ति उपभोक्तावादी क्रान्ति का परिणाम है।'' और यही भाषा हिन्दुस्तानी जगत की ताक़त भी है। सफल, सार्थक, दृष्टिसम्पन्न अंक के लिए मैं संपादिका डॉ० सुशीला गुप्ताजी की नीदरलैंड स्थित हिन्दी यूनिवर्स फ़ाउंडेशन के सदस्यों के साथ आभारी हूँ। इन्हीं शब्दों के साथ...

– प्रो० पुष्पिता अवस्थी
निदेशक, हिन्दी यूनिवर्स फ़ाउंडेशन
नीदरलैंड

हिन्दुस्तानी ज़बान (अक्तूबर-दिसंबर 2015) का अंक मिला। बहुत प्रसन्नता हुई। आप तमाम का मैं आभारी हूँ। गाँधीजी विशेषांक में जितने भी लेख प्रकाशित हुए हैं, वे बहुत ही अर्थपूर्ण हैं। महाराष्ट्र शासन के अंतर्गत मासिक- लोकराज्य भी प्रकाशित होता है, परंतु उर्दू भाषा में प्रकाशित क्यों नहीं होता? हालाँकि मराठी लोकराज्य के आख़िरी पृष्ठ पर यह लिखा है कि 'उर्दू लोक राज्यं'। ख़ैर! हिन्दुस्तानी प्रचार सभा वास्तव में बहुत ही उत्तम संस्था है। विदेश से आनेवाले विद्यार्थियों को आप हिन्दी लिखना, पढ़ना, समझना सिखाते हैं। यह कार्य आने वाले समय के लिए बहुत ही लाभदायक है। मेरी एक राय यह है कि हिन्दी भाषा के साहित्यकारों का परिचय पर एक पृष्ठ आप शुरू करें। इससे हम पाठकों, विद्यार्थियों, शिक्षकों, हिन्दी वर्ग तथा पूरे भारतवासियों को उनके बारे में पढ़कर बहुत प्रसन्नता होगी। उदाहरण– डॉ० हरिवंशराय बच्चन जी के बारे में एक पृष्ठ उनकी संक्षिप्त जानकारी एक फोटो और काव्य-संग्रह के नाम आदि। मैं दुआ और प्रार्थना करता हूँ कि ईश्वर इस पत्रिका की अधिक आयु करे तथा उन्नति करे!

- नूर मोहमद जूनेदी
सोलापुर, महाराष्ट्र

हिन्दुस्तानी ज़बान अंक 04, (अक्तूबर - दिसंबर 2015) गाँधीजी विशेषांक प्राप्त हुआ। धन्यवाद। मानवीय जन चेतना की उद्घोषिका, हिन्दी साहित्य की प्रसारिका एवं भारतीय सांस्कृतिक सभ्यता की प्रेरणा 'हिन्दुस्तानी ज़बान' का निरंतर 47 वर्षों से प्रकाशित होना, आपके कृतिशील कर्म व ध्येयबद्ध दूरदृष्टि को दर्शाता है। गाँधी विचारधारा आज की सामाजिक उन्नति, विकास के लिए महत्त्वपूर्ण होते हुए उनके कार्य हमारे लिए प्रोत्साहनपरक हैं। उनके आदर्श जीवन में आगे बढ़ने के लिए ऊर्जा प्रदान करते हैं। श्रीमान विश्वनाथ सचदेव का आलेख 'गाँधीजी पुनर्जन्म में अछूत पैदा होना चाहते थे' तथा श्रीराम परिहार का ललित निबंध 'दूरदर्शन की भागवत कथा' विशेष उल्लेखनीय व बोधप्रद हैं। जया गोस्वामी की कविता 'गाँधी के सपनों का संगम' गाँधीजी की आकांक्षा के अनुरूप है। पत्रिका न होकर यह संदर्भ ग्रंथ के रूप में पाठक को दर्शित कराता है।

- प्रा० डॉ० प्रकाश वि० जीवने
158, चंडिका नगर न० 2, मानेवाडा बेसा रोड,
नागपुर- 440027 (महाराष्ट्र)

हिन्दुस्तानी ज़बान का जनवरी-मार्च 2016 अंक प्राप्त हुआ। डॉ० रवींद्र कुमार के विचार अच्छे लगे।

असहिष्णुता की आड़ लेकर कोई हमारी एकता, अखण्डता व अद्वितीयता को हानि न पहुँचा सके, इसकी निगहबानी की आज सबसे अधिक आवश्यकता है। श्री फ़िरोज़ पैच (स्वतंत्रता...), डॉ० कृष्णा पटेल (हिन्दी भाषा और विज्ञापन) एवं श्री मनोज राय (आनंद कुमार स्वामी) के आलेखों के साथ श्री प्रमोद त्रिवेदी के व्यंग्य लेख (हाकी कथा...) ने प्रभावित किया। डॉ० स्वदेश भारती एवं उषा भटनागर की कहानियाँ अच्छी लगीं। काव्य-पक्ष अंक का अतिरिक्त आकर्षण है। उत्तम चयन हेतु बधाई।

आज 30 जनवरी गाँधी का निर्वाण दिवस है। उन्हें मेरी विनम्र श्रद्धांजलि निम्न शब्द-पुष्पों के साथ– गाँधी/ जीवित रहते/ महान थे/ मरने के बाद/ किंवदंती बन गये/ आज/ सारा विश्व/ उन्हें/ महात्मा के नाम से/ जानता है/ पहचानता है/ वंदन करता है/ पूजता है/ धन्य हैं गाँधी।

- आनन्द बिल्थरे
प्रेम नगर, बालाघाट
मध्य प्रदेश– 481001

हिन्दुस्तानी ज़बान का जनवरी-मार्च 2016 अंक आद्योपांत पढ़ा। सम्पादकीय में दुर्बलता और आलस्य त्यागने की सीख है। ठोकर खाना या असफल होना सफलता की पहली सीढ़ी है। 'सहिष्णुता और सहनशीलता...' में डॉ० रवींद्र ने भारतीय संस्कृति की अनूठी विशेषताएँ समझाई हैं। 'स्वतंत्रता...' आलेख में फ़िरोज़ पैच (अंग्रेज़ी से अनुवाद संजीव निगम) ने आज़ादी के सभी पहलुओं पर भली-भाँति प्रकाश डाला है। 'साहित्य में पत्र-लेखन...' (डॉ० कामता कमलेश) में पत्र-साहित्य का सटीक वर्णन है। वास्तव में पत्र लेखन आत्मा का आटोग्राफ़ (कन्हैयालाल प्रभाकर) है। सही देखा जाए तो पत्र-लेखन सफल रचनाकार बनने की पहली सीढ़ी है।

'जैनेन्द्र कुमार...' (माहला इंदुबेन आर०) ने जैनेन्द्रजी की रचनाओं का प्रेमचंद, यशपाल आदि के साहित्य से तुलनात्मक अध्ययन किया है। समय-काल का लेखक पर प्रभाव सत्य है। यही अंतर इनके साहित्य में है। 'हिन्दी भाषा और विज्ञापन' (डॉ० कृष्णा डी० पटेल) ने हिन्दी के प्रसार पर चिंतन और विकृति पर चिंता प्रकट की है। 'आभ्यांतरिक यथार्थ...' (राकेश भारतीय) में देश-विदेश के साहित्य पर यथार्थ का उल्लेख पांडित्यपूर्ण है। 'भारतीय कला...' (मनोज राय) में भारतीय कला के प्रति दृढ़ निश्चयी व्यक्तित्व कुमारस्वामी का दर्शन व कार्य प्रेरणीय है। 'मुझे चाहिए...'(नरेंद्र परिहार) ललित निबंध किसानों की दुर्दशा को प्रकट करता है। कृषि व कृषकों की चिन्ता व समस्याओं का समाधान आवश्यक है। कविता 'बापू का वज़न' (डॉ० राकेश मिलन) ने गाँधीजी की सामयिकता को सिद्ध कर दिया है। 'दो सायों के बीच' (डॉ० सत्यपाल श्रीवत्स) कविता जीवन-द्वंद्व प्रस्तुत करती है तो 'सूखे पत्ते की आवाज़' (विश्वनाथ सचदेव) में प्रतीकों का अच्छा प्रयोग किया है। 'समान्तर' (डॉ० र० शौरिराजन) कविता में मजदूरी के क्षेत्र में स्त्रियों को दोयम दर्ज़े के व्यवहार-शिकार को छुआ है। 'पानी' (साहिल मधोपुरी) और 'सच से नज़र...' (देवमणि पाण्डे) ग़ज़लें अच्छी लगीं।

कहानी 'पड़ोस में...' (डॉ० स्वदेश भारती) में विपाशा के बहाने स्त्री-आचार का आदि से आज तक चित्रण विद्वतापूर्ण है। 'सौम्य सत्याग्रह' (डॉ० मृदुला वर्मा) शाकाहारी बहू गीता की बलि प्रथा विजय-संग्राम गाता है। 'उसके इंतज़ार...' (ओमप्रकाश मिश्र) कहानी में रहस्य अंत तक बना रहता है। 'निर्मोही' (उषा भटनागर) भी ठीक लगी। 'संबंध' (डॉ० मेराज अहमद) में समय के साथ बदलते भाईचारे और संबंधों की व्यथा-कथा है।

साक्षात्कार 'वयोवृद्ध...' (सुश्री गान्ला) ज्ञानवर्धक लगा। पुस्तक-समीक्षा (कथाक्रम में कविता) काफ़ी लम्बी हो गई है। 'विद्यार्थियों के लिए उपयोगी बातें' सभी हिन्दी भाषियों के लिए लाभदायक हैं।

श्रेष्ठ सम्पादन के लिए शुभकामनाएँ।
मेरे व्यंग्य 'अथ कुरुक्षेत्र...' में खिलाड़ियों के नाम नी०च० दुर्योधन... ऐसे लिखे होना था। व्यंग्य-प्रकाशन के लिए आभार।

- प्रमोद त्रिवेदी पुष्प

आपकी त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी ज़बान' की मैं पाठक हूँ। यह एक ज्ञानवर्धक विशेष पत्रिका है, जिसमें विभिन्न प्रकार के लेख पढ़ने को प्राप्त होते हैं। ईश्वर आपकी पत्रिका को आकाश की ऊँचाइयों तक पहुँचाए और लोकप्रिय बनाए।

— नुज़हत फ़ात्मा

सामग्री के दृष्टिकोण से पत्रिका का हर संस्करण काफी उपयोगी है और इसकी साज-सज्जा भी उत्तम है। मैं आशा करता हूँ कि आपके संपादकत्व में यह पत्रिका प्रगति के पथ पर निरंतर अग्रसर होती रहे और इसका प्रचार-प्रसार राष्ट्रीय स्तर पर हो।

— आफ़ताब आलम

हिन्दुस्तानी ज़बान जनवरी-मार्च 2016 का अंक प्राप्त हुआ धन्यवाद; अंक बहुत सुन्दर एवं सार-गर्भित है। आपको मैं विशेष धन्यवाद देना चाहूँगा; क्योंकि आज के कम्प्यूटर के युग में पत्रिका का संपादन, मुद्रण एवं प्रकाशन करना सरल नहीं है। यह अतिशय श्रम-साध्य कार्य है। इस कार्य को करने में कटिबद्ध आप सबका अभिनंदन करते हुए मैं गौरव एवं आनंद का अनुभव करता हूँ। यह प्रयास श्रम-सिद्ध साधना-पथ पर निरन्तर अग्रसर होने का लक्षण है और इसका सुफल है लक्ष्य-पूर्ति की आनंदमय परिणति। मुबारक हो। मेरे अन्तर्मन में उद्वेलित इन वीचियों को प्रस्तुत अंक में प्रकाशित रचनायें प्रमाणित करती हैं; जैसे 'संपादकीय' की निम्नांकित पंक्तियाँ– "नकारात्मक सोच ज़िन्दगी विकृत करती है और सकारात्मकता हमें नयी राह दिखाती है।" इसी तथ्य को संपादकीय के अंत में दी गयी मुक्तिबोध की रचना भी प्रमाणित करती है। यही बात कवि बंधु विश्वनाथ सचदेव की कविता 'सूखे पत्ते की आवाज़' की निम्नांकित अभिव्यक्ति से भी प्रतिध्वनित होती है– 'सच यह भी है, हर सूखा पत्ता, बनता है खाद किसी नये पत्ते की...' यह वास्तविकता है; जीवन की नियति है; परिश्रम की सफल उपलब्धि है। बधाई हो!!

— डॉ. पी. जयरामन
न्यूयार्क, अमेरिका

हिन्दुस्तानी ज़बान के दो अंक जुलाई-सितम्बर, अक्तूबर-दिसम्बर के मिले, पढ़कर बहुत अच्छा लगा। पत्रिका में सम्पादकीय, आलेख, कहानी एवं कविताएँ बहुत ही रोचक एवं शिक्षाप्रद थीं। इनमें ख़ास बात यह थी कि आपने क्षेत्रीय भाषाओं की अच्छी रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद करके प्रसारित किया। इस तरह भारत की क्षेत्रीय भाषाओं का, अनेक का एकीकरण करके एकता के रूप में प्रसारित किया। आपके इस परिश्रम के लिए डॉ० सुशीला गुप्ता, सम्पादक व सम्पादकीय मंडल के सदस्य एवं प्रकाशक धन्यवाद के पात्र हैं। जुलाई के अंक में पर्यटन-संबंधी लेख बहुत ही रोचक था। कितना अच्छा हो कि प्रत्येक अंक में एक लेख पर्यटन से संबंधित छपायें। अगले अंक की प्रतीक्षा में।

— रतनलाल सगगड़
बीकानेर, राजस्थान

विद्यार्थियों के लिए कुछ उपयोगी बातें :- (भाग ३)

अकसर कुछ विद्यार्थी हिन्दी बोलते / लिखते समय असावधानी बरतते हैं। यदि वे थोड़ी सावधानी रखें तो अपनी हिन्दी निखार सकते हैं।

ग़लत	सही
1. खा कर	1. खाकर
2. चिन्ह	2. चिह्न
3. जिला	3. ज़िला
4. जब कि	4. जबकि
5. जैसाकी	5. जैसा कि
6. प्रयोग होता है।	6. प्रयुक्त होता है।
7. बाजार	7. बाज़ार
8. मंजिल	8. मंज़िल
9. मंजुषा	9. मंजूषा
10. रूपया	10. रुपया
11. शुरूआत	11. शुरुआत
12. सयुंक्त	12. संयुक्त
13. स्वंय	13. स्वयं
14. स्वछंदता	14. स्वच्छंदता

- संपादक

साहित्य मंथन....

अखिल भारतीय राष्ट्रीय साहित्य संगोष्ठी को संबोधित करते हुए ट्रस्टी एवं मानद सचिव फ़िरोज़ पैच। मंच पर (बाएँ से) डॉ॰ रीता कुमार, डा॰सुशीला गुप्ता, ट्रस्टी एवं अध्यक्ष सतीश शाह तथा संजीव निगम

राष्ट्रीय साहित्य संगोष्ठी में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए सुप्रसिद्ध पत्रकार राहुल देव

एक संस्था द्वारा दूसरी संस्था का सम्मान

'महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा पुणे' ने हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' को स्मृति-चिह्न देकर सम्मानित किया। 'सभा' की प्रतिनिधि डॉ॰ सुशीला गुप्ता ने स्मृति-चिह्न स्वीकार किया।

बोलियों की इंद्रधनुषी छटा.....

हिन्दी की बोलियों की काव्य-संगोष्ठी में काव्य-पाठ करते हुए नवीन चतुर्वेदी। मंच पर (बाएँ से) संजीव निगम, रासबिहारी पाण्डेय, डॉ॰ राजेश्वर उनियाल, अली अब्बास रिज़वी, पंडित किरण मिश्र, डॉ॰ शऊर आज़मी और शिप्रा वर्मा

विजय का उल्लास

वार्षिक दीक्षांत समारोह में विद्यार्थियों की प्रस्तुति के अवसर पर 'सभा' के पदाधिकारी

खोये हुए अपनेपन की तलाश

'आओ तनिक प्रेम करें' नाटक का मंचन। अभिनेता विभारानी और राजेंद्र जोशी

जीत हमारी है

निबंध प्रतियोगिता में 'सभा' के ट्रस्टी व मानद सचिव श्री फ़िरोज़ पैच के हाथों प्रमाणपत्र व पुरस्कार ग्रहण करते हुए रमाबाई मनपा स्कूल, घाटकोपर का विद्यार्थी इक़रार इम्तियाज़ अहमद।

कहानी-पाठ

मासिक कार्यक्रमों की श्रृंखला में कहानी-पाठ के अवसर पर (बायें से) संजीव निगम, संतोष श्रीवास्तव, सूरज प्रकाश, मीर साहेब हसन तथा रमेश यादव